पहली कहानी

सम्पादक कमलेश्वर

राजपाल एण्ड सन्ज

भूमिका

सन 1950 से लेकर सन 1980 तक हिंदी कहानी की हलचल बहुत जीवत और महत्त्वपूर्ण रही है—रचनात्मक, प्रयोगात्मक, भाषागत आदि सभी स्तरो पर। साहित्य की केंद्रीय विधा के रूप में चौथाई सदी से भी अधिक सारे रचनात्मक मान-मूल्यो को तलाशना, तराशना और उन्हे साहित्य के लिए सजनात्मक स्तर पर तय करना कोई मामूली काम नही है। हिंदी कहानी ने यह दुष्कर और महत्त्वपूर्ण काय सम्पन्न किया और इस हद तक कि साहित्य की अन्य सभी विधाओ की मानसिक मानवीय, वैचारिक और सौंदयशास्त्रीय आधारभूमिया ही बदलने लगी, यानी तीन दशको तक साहित्य का मूल स्वर वही रहा—जो कहानी ने कहा। एक तरह से कहें तो यह हिंदी कहानी का स्वणकाल रहा है।

नयी कहानी, अकहानी, सचेतन कहानी, सहज कहानी, साठोत्तरी कहानी, समातर कहानी आदि नामो और कबीलो के अतगत वैचारिक और सघषवादी दौर से गुजरते हुए हिंदी कहानी का रचनात्मक काफिला जन, जीवन, मन, मानस, विचारो और परम्पराओ का पुनमूल्याकन करता हुआ उन सभी अछूते और अनुल्लघनीय क्षेत्रो तक अलग अलग नामो और कबीलो के रूप मे गया और उन सब कबीलो ने अपने प्रामाणिक अनुभवो को साहित्य के लिए सचित कर दिया। कहानी ने अपनी साहित्यिक प्रतिष्ठा को दाव पर लगाकर अपने समय के मनुष्य की प्रतिष्ठापना की और आनेवाले समय के लिए यह तय कर दिया कि साहित्य मनुष्य-केंद्रित होकर ही अपने साहित्यिक सौंदय की रचना कर सकता है और यह भी कि साहित्य का सत्य मनुष्य के सत्य से बडा नही है।

तीन दशको के इस दौर म विचारो के इतिहास का भी एक सम्यक सिलसिला देखा जा सकता है। हमारे यहा साहित्य के इतिहास की सौंदयपरक व्याख्या और सिलसिलेवार उसके युगो, कालो और कालखण्डो को रख देने की परम्परा तो है पर, विचारों के विकास का इतिहास लिखने की परिपाटी नहीं है। हिंदी कहानी के इस तीन दशकीय दौर मे विचारो के विकास का ज्वलत इतिहास भी मौजूद है—जहा से मनुष्य की वचारिक यात्रा के लिए निर्बाध आगे बढा जा

सकता है। कहानी ने अपने समय, समय के केन्द्र मे प्रतिष्ठित मनुष्य की मानसिक और वैचारिक दुनिया को इतनी गहराई और शिद्दत से स्थापित कर डाला है कि उसकी पहचान और जानकारी के लिए हमे अब पुराणो, धर्मग्रथो, शास्त्रो और दार्शनिक व्याख्याओ की तरफ नही लौटना पडेगा कहानी ने मनुष्य और उसके विविध विचारो की ऐसी पुख्ता नीव रख दी है कि कल के आने वाले मनुष्य को पहचानने और रेखांकित करने के लिए साहित्य को भटकना नही पडेगा। अब साहित्य व्यक्ति लेखक का स्वर नही होगा, बल्कि मानवीय इतिहास का सार्वभौमिक स्वर होगा—जो देशो धर्मो क्षेत्रो, प्रणालियो और भाषाओ की सीमाओ मे बद्ध नही है। अनुभवो और मान मूल्यो का यह सचित-कोश हर उस लेखक का अपना होगा, जो कलम उठायेगा और मानव की सघर्षपूर्ण जय यात्रा का हमसफर बनेगा।

हमारे भारतीय आद्य कथाकारो की यह खोज भी उन हमसफर लेखको की खोज का ही एक सिलसिला है—जिन्होने दिशा-सकेत दिये हैं और आधुनिक भारतीय कहानी के महापीठ की नीव रखी है। इन आद्य कथाकारो को नमन के साथ—

कमलेश्वर

28 पराग,
जयप्रकाश रोड
वरसोवा बम्बई—400061

क्रम

	भूमिका	5
हिन्दी	माधवराव सप्रे	9
	किशोरीलाल गोस्वामी	10
	• एक टोकरी भर मिट्टी	11
	एक विवेचन	13
	• प्रणयिनी परिणय	21
	एक विवेचन	37
	• सुभाषित रत्न	41
	एक विवेचन	43
उर्दू	सय्यद अहमद खां	47
	• गुजरा हुआ जमाना	49
	एक विवेचन	53
पंजाबी	संतसिंह सेखों	58
	• भत्ता	60
	एक विवेचन	66
डोगरी	भगवत्प्रसाद साठे	70
	• मँगते की पनचक्की	72
	एक विवेचन	75
कश्मीरी	दीनानाथ कौल 'नादिम'	78
	• जवाबी कार्ड	80
	एक विवेचन	86
उड़िया	फकीर मोहन सेनापति	91
	• रेवती	92
	एक विवेचन	100

बंगला	रवीन्द्रनाथ टैगोर	104
	• भिखारिन	105
	एक विवेचन	116
असमिया	लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा	119
	• कन्या	121
	एक विवेचन	125
गुजराती	कन्हैयालाल मुंशी	127
	• गोमति दादा का गौरव	128
	एक विवेचन	133
मराठी	कैप्टन गो० ग० लिमये	135
	शंकर काशीनाथ गर्गे 'दिवाकर'	
	• प्रवासी	137
	• क़िस्मत	141
	• मर्कंनो	145
	एक विवेचन	150
	एक विवेचन	160
सिंधी	लालचंद अमरडिनोमल	162
	• मछी झील का डाकू	163
	एक विवेचन	171
तेलुगु	गुरजाडा अप्पाराव	176
	• सबक	177
	एक विवेचन	182
कन्नड	मास्ती वेंकटेश अय्यंगार 'श्रीनिवास'	185
	• रंगप्पा की शादी	186
	एक विवेचन	193
तमिल	व० वे० सु० अय्यर	195
	• तालाब किनारे का पीपल	197
	एक विवेचन	207
मलयालम	वेंगयिल कुंजिरामन नायनार	211
	• वासना विकृति	213
	एक विवेचन	217

□ हिन्दी

आद्य कथाकार माधवराव सप्रे

माधवराव सप्रे का जन्म दमोह जिले के पथरिया गाव (मध्य प्रदेश) मे 19 जून सन 1871 मे हुआ। पथरिया गाव एक जगली गाव है जहा की ज़मीन पथरिया नाम के अनुरूप ही पथरीली है। उनकी मातभाषा मराठी थी।

प्रारम्भिक शिक्षा घर मे। सन 1887 मे मिडिल स्कूल की शिक्षा पूरी की। उसी सन् 1887 मे वे रायपुर हाईस्कूल मे दाखिल हुए। यही उनका सम्पर्क नदलाल दुबे से हुआ जो उस हाईस्कूल म हेड असिस्टेंट मास्टर थे। दुबे जी ने ही उन्हे साहित्य की ओर प्रेरित किया।

सन 1889 मे माधवराव सप्रे का विवाह हुआ और उन्होने सन 1890 मे एट्रेंस की परीक्षा पास की। इसके बाद वे एफ० ए० की पढाई के लिए गवनमेट कालज जबलपुर म भर्ती हुए—और उन्होंने ग्वालियर के विक्टोरिया कालिज मे भी अध्ययन किया और अतत सन 1896 मे उन्होने इलाहाबाद यूनिवर्सिटी की एफ० ए० परीक्षा उत्तीर्ण की। फिर उन्होने कलकत्ता यूनिवर्सिटी से सन् 1898 म बी० ए० की परीक्षा पास की।

सप्रे जी ने शुरू से ही यह तय कर लिया था कि वे सरकारी नौकरी नही करेंगे और वकील बनकर स्वतन्त्र रहेंगे और देश-सेवा करेंगे। एल० एल० बी० का अध्ययन करने के बावजूद व वकालत की परीक्षा मे शामिल नही हुए। अतत सन 1899 म वे पेंडरा राज्य के राजकुमार को अग्रेजी पढाने के लिए शिक्षक बन गये ताकि नौकरी से पैसा कमा के वे एक हिन्दी पत्र निकाल सकें।

सन् 1900 में 'छत्तीसगढ मित्र' (मासिक) का प्रकाशन। इसकी विशेषता यह थी की आम बौद्धिक शिक्षितो के लिए इसका मूल्य डेढ रुपया था, विद्यार्थियो और पुस्तकालयो के लिए सवा रुपया और राजा महाराजाओ तथा श्रीमान जमीदारो के लिए पाच रुपया।

छत्तीसगढ मित्र' के प्रकाशन से उनकी जो साहित्य यात्रा शुरू हुई वह अबाध है। मौलिक लेखन, सम्पादन, अनुवाद और हिंदी गद्य की भाषा का परि-

माजन तथा हिंदी समीक्षा की शुरुआत आदि तमाम महत्त्वपूर्ण साहित्यिक कामो मे वे लगे रहे।

वे स्वतत्रता सग्राम के सेनानी भी रहे और बाल गगाधर तिलक के अनन्य शिष्य। 'गीता रहस्य', 'दास बोध', 'कौटिल्य का अर्थशास्त्र' आदि तरह ग्रथो का उन्होने हिंदी अनुवाद किया। पत्रकारिता के क्षेत्र मे 'छत्तीसगढ मित्र' के अलावा उन्होने 'हिंदी केसरी' तथा अन्य दो पत्रो का सम्पादन किया।

सन 1924 मे अखिल भारतीय हिंदी साहित्य सम्मेलन, देहरादून अधिवेशन की उन्होने अध्यक्षता की। उनका निधन सन् 1926 मे हुआ। हिन्दी पुस्तक समीक्षा (बुक-रिव्यू) का शुभारम्भ करने वाले इस साहित्य साधक को सहज ही हिंदी की प्रथम मौलिक कहानी लिखने का श्रेय भी सौंपा जा सकता है।

आद्य कथाकार किशोरीलाल गोस्वामी

हिंदी गद्य के उत्थान काल मे गोस्वामी जी की रचनाओ का बहुत योगदान है। वे भारतेन्दु काल के प्रमुख लेखको मे परिगणित हैं और उनके समकालीनो मे लाला श्रीनिवास दास, बालकृष्ण भट्ट, राधाकृष्णदास, ठाकुर जगन्मोहन सिंह, लज्जाराम शर्मा, देवकीनन्दन खत्री और गोपालराम गहमरी उल्लेखनीय नाम हैं।

किशोरीलाल गोस्वामी का जन्म सन 1865 म हुआ और निधन सन 1932 मे।

अपने जीवनकाल मे आपने 65 उपन्यास लिखे जो बहुत लोकप्रिय हुए। 'चपला नामक आपके उपन्यास पर अश्लीलता का दोष भी लगाया गया परन्तु गोस्वामीजी ने आलोचको की कभी परवाह नही की। उन्होने सन् 1898 मे 'उपन्यास' नामक मासिक पत्र भी निकाला और उनके उपन्यास उसी म प्रकाशित होते रहे।

प्रथम मौलिक कहानी (एक) सन् 1901 में रचित और प्रकाशित

▫ एक टोकरी भर मिट्टी

माधवराव सप्रे

किसी श्रीमान जमींदार के महल के पास एक गरीब अनाथ विधवा की झोपडी थी। जमींदार साहब को अपने महल का हाता उस झोपडी तक बढाने की इच्छा हुई। विधवा से बहुतेरा कहा कि अपनी झोपडी हटा ले। पर वह तो कई जमाने से वही बसी थी। उसका प्रिय पति और इकलौता पुत्र भी उसी झोपडी मे मर गया था। पतोहू भी एक पाच बरस की कन्या का छोडकर चल बसी थी। अब यही उसकी पोती इस वृद्धाकाल मे एकमात्र आधार थी। जब कभी उसे अपनी पूर्वस्थिति की याद आ जाती तो मारे दुख के फूट-फूटकर रोने लगती थी। और जबसे उसने अपने श्रीमान पडोसी की इच्छा का हाल सुना, तब से वह मृतप्राय हो गयी थी। उस झोपडी मे उसका मन लग गया था कि बिना मरे वहा से वह निकलना ही नही चाहती थी। श्रीमान के सब प्रयत्न निष्फल हुए। तब वे अपनी जमींदारी चाल चलने लगे। बाल की खाल निकालने वाले वकीलो की थैली गरम कर उन्होने अदालत से झोपडी पर अपना कब्जा कर लिया और विधवा को वहा से निकाल दिया। बिचारी अनाथ तो थी ही, पास पडोस मे कही जाकर रहने लगी।

एक दिन श्रीमान उस झोपडी के आसपास टहल रहे थे और लोगो को काम बतला रहे थे कि इतने मे वह विधवा हाथ मे एक टोकरी लेकर वहा पहुची। श्रीमान ने उसको देखते ही अपने नौकरो से कहा कि उसे यहा से हटा दो। पर वह गिडगिडाकर बोली कि ‘महाराज, अब तो यह झोपडी तुम्हारी ही हो गयी है। मैं उसे लेने नही आयी हू। महाराज क्षमा करें तो एक विनती है।’ जमींदार

साहब के सिर हिलाने पर उसने कहा कि "जब से यह झोपडी छूटी है तब से मेरी पोती ने खाना-पीना छोड दिया है। मैंने बहुत कुछ समझाया पर वह एक नहीं मानती। यही कहा करती है कि अपने घर चल, वहा रोटी खाऊगी। अब मैंने यह सोचा है कि इस झोपडी मे से एक टोकरी भर मिट्टी लेकर उसी का चूल्हा बनाकर रोटी पकाऊगी। इससे भरोसा है कि वह रोटी खाने लगेगी। महाराज, कृपा करके आज्ञा दीजिए तो इस टोकरी मे मिट्टी ले जाऊ।" श्रीमान ने आज्ञा दे दी।

विधवा झोपडी के भीतर गयी। वहा जाते ही उसे पुरानी बातो का स्मरण हुआ और उसकी आखो से आसू की धारा बहने लगी। अपने आन्तरिक दुख को किसी तरह सम्हालकर उसने अपनी टोकरी मिट्टी से भर ली और हाथ से उठाकर बाहर ले आयी। फिर हाथ जोडकर श्रीमान से प्रार्थना करने लगी कि "महाराज, कृपा करके इस टोकरी को जरा हाथ लगाइए जिससे कि मैं उसे अपने सिर पर धर लू।" जमीदार साहब पहले तो बहुत नाराज हुए, पर जब वह बार-बार हाथ जोडने लगी और पैरो पर गिरने लगी तो उनके भी मन मे कुछ दया आ गयी। किसी नौकर से न कहकर आप ही स्वय टोकरी उठाने आगे बढे। ज्योही टोकरी को हाथ लगाकर ऊपर उठाने लगे त्यो ही देखा कि यह काम उनकी शक्ति के बाहर है। फिर तो उन्होंने अपनी सब ताकत लगाकर टोकरी को उठाना चाहा, पर जिस स्थान पर टोकरी रखी थी वहा से वह एक हाथ भर ऊची न हुई। वह लज्जित होकर कहने लगे कि "नही, यह टोकरी हमसे न उठायी जावगी।"

यह सुनकर विधवा ने कहा "महाराज नाराज न हो, आप से तो एक टोकरी भर मिट्टी नहा उठायी जाती और इस झोपडी मे तो हजारो टोकरिया मिट्टी पडी है। उनका भार आप जन्म भर क्यो कर उठा सकेंगे? आप ही इस बात पर विचार कीजिए।"

जमीदार साहब धन मद से गर्वित हो अपना कर्तव्य भूल गये थे, पर विधवा के उपरोक्त वचन सुनते ही उनकी आखें खुल गयी। कृतकर्म का पश्चात्ताप कर उन्होंने विधवा से क्षमा मागी और उसकी झोपडी वापस दे दी।

एक विवेचन

देवीप्रसाद वर्मा

हिन्दी की प्रथम कहानी होने का गौरव किस कहानी को प्राप्त है, इस प्रश्न के साथ ही किसी भी जिज्ञासु की दृष्टि आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' की ओर जाती है। आचार्य शुक्ल का मन्तव्य निम्न प्रकार है—

'सरस्वती के प्रथम वर्ष से ही (सन् 1900) में ही पं० किशोरीलाल गोस्वामी की इंदुमती नाम की कहानी छपी, जो कि मौलिक जान पड़ती है कहानियों का आरम्भ कहाँ से मानना चाहिए यह देखने के लिए 'सरस्वती' में प्रकाशित कुछ मौलिक कहानियों के नाम, वर्ष क्रम नीचे दिए जाते हैं—

इंदुमती (किशोरीलाल गोस्वामी)	संवत 1957
गुलबहार (किशोरीलाल गोस्वामी)	संवत् 1959
प्लेग की चुड़ैल (भगवानदास)	संवत 1959
ग्यारह वर्ष का समय (रामचन्द्र शुक्ल)	संवत् 1960
पंडित और पंडितानी (गिरजादत्त वाजपेयी)	संवत 1960
दुलाईवाली (बंग महिला)	संवत 1964

"इनमें यदि मार्मिकता की दृष्टि से भाव प्रधान कहानियों को चुनें तो तीन मिलती हैं—

(1) इंदुमती (सन् 1900)

(2) ग्यारह वर्ष का समय (सन 1903)

(3) दुलाईवाली (सन 1907)

'यदि इंदुमती' किसी बंगला कहानी की छाया नहीं है तो हिन्दी की मौलिक कहानी ठहरती है। इसके उपरांत 'ग्यारह वर्ष का समय' और फिर 'दुलाईवाली' का नम्बर आता है।"

स्पष्ट है कि आचार्य शुक्ल ने 'यदि' के द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से 'इंदुमती' के स्थान पर 'ग्यारह वर्ष का समय' या 'दुलाईवाली' को प्रतिष्ठापित करने का

प्रयत्न किया है। चूंकि वह स्वयं 'ग्यारह वर्ष का समय' के लेखक थे, अतएव प्रत्यक्ष रूप से नहीं कह पाये। इस विवाद पर अधिकारी लेखकों ने अपने अलग-अलग विचार प्रकट किये हैं। डा० प्रकाश दीक्षित के अनुसार इस कहानी में 'टम्पस्ट' की छाप स्पष्ट है। "इंदुमती' में शेक्सपीयर के 'टैम्पस्ट' की छाप है। इस कहानी की कथा-वस्तु का आधार था शेक्सपीयर का नाटक 'टैम्पेस्ट' किन्तु फिर भी वातावरण भारतीय था।" (जीवनप्रकाश जोशी, साहित्यिक निबंध, पृष्ठ 70)

'इंदुमती' में शेक्सपीयर के 'टम्पेस्ट' की छाप होने के कारण हम इसे मौलिक नहीं कह सकते, क्योंकि इसमें केवल भारतीय वातावरण उपस्थित किया गया है। अन्य बातें प्रायः मिलती-जुलती हैं।

कुछेक विद्वानों ने 'इंदुमती' को सर्वप्रथम कहानी के रूप में स्वीकार किया है। कतिपय आलोचकों ने 'टैम्पेस्ट' का प्रभाव दिखलाते हुए 'दुलाईवाली' को प्रथम कहानी माना है। (हिन्दी साहित्य का आधुनिक काल—प्रो० शिवकुमार, पृष्ठ 553)। परन्तु ठाकुर प्रसाद सिंह के विचार अधिक सटीक एवं स्पष्ट हैं—"गिनाने के लिए आचार्य शुक्ल ने हिन्दी की कहानियों की सूची दे दी है। इन कहानियों में कहीं भी एक झिझक का भाव दीखता है। यदि कहानी की कसौटी पर कसें तो संभवतः अपनी 'मोनोटनस' बोझिल शैली के कारण ये काफी पीछे रह जायेंगी। इनमें लेखक का विश्वास भी इस शैली पर जमता नहीं दिखता।" (हिन्दी गद्य प्रवृत्तियां)। अतएव स्पष्ट है कि प्रथम कहानी के रूप में 'इंदुमती' को स्वीकार नहीं किया गया है। स्व० डॉ० श्रीकृष्णलाल सदृश इक्के दुक्के हठवादी आलोचक 'इंदुमती' को उक्त स्थान पर आरोपित करने हेतु कृतसंकल्प थे, पर उन्हें कोई श्रेय नहीं मिला। अस्तु, उपरोक्त समस्त विचारों एवं तथ्यों के आधार पर यह निर्विवाद है कि 'इंदुमती' हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी नहीं है। इस दिशा में हमारा विनम्र निवेदन है कि पूर्वाग्रह के कारण हम वास्तविकता से दूर हटते चले जा रहे हैं। यदि हम निष्पक्ष होकर तथ्यों पर शोध करें, तो सन 1901 में 'छत्तीसगढ़ मित्र' मासिक में प्रकाशित 'एक टोकरी भर मिट्टी' हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी है। (यह दूसरा विषय है कि प्रस्तुत कहानी प्रकाशित होने के पूर्व कब लिखी गयी)। स्व० माधवराव सप्रे द्वारा लिखित इस कहानी में कहानी के सभी तत्त्व विद्यमान हैं। (सातवें दशक में कहानी का जो स्वरूप आज हमारे सम्मुख है उसके सभी बीज इस कहानी में स्पष्ट हैं)। "आज कहानी के साथ साथ एक और कहानी चलती है यह मानवीय परिणति की गाथा है ... वह कहानी जो ऊपर है पर भी अपनी अभिव्यक्ति, परिवेश और और अवचेतन में रची है।" (कमलेश्वर नई कहानी की भूमिका)। नयी कहानी के सजग पुरोधा कमलेश्वर की वाणी किसी सीमा तक प्रस्तुत कहानी में मिलती है। जमींदार के आतंक और

शोषण म पलने वाले सैंकडो बुढिया का प्रतिनिधित्व कथाकार ने बुढिया के माध्यम से कराया है। सामन्तवाद के विरुद्ध जनमानस का आक्रोश ही मानवीय परिवतन की गाथा लिये इस कहानी म उभरा है। 'धरती अब भी घूम रही है' म भावुकता के कारण पुन राने सुनने पर आपत्ति उठाते हुए डा० नामवर सिह ने घोषणा की थी—कहानी के क्षेत्र मे मूल्यांकन का प्रयत्न करते [illegible] सतर्कता से भावुक एव भावप्रवण कहानियो में भेद करने की [illegible] है।

प्रस्तुत कहानी के कथाकार की दृष्टि उस समय ही [illegible] भी थी। यही कारण था कि कही स्वाभाविक रूप से [illegible] पात्र तक ही सीमित रखा गया, बार-बार रोने-सुबकने [illegible] है। यह लेखक की बहुत बडी सफलता है—

'विधवा झोपडी के भीतर गयी। वहा जाते ही [illegible] और आखो स आसू की धारा बहने लगी। अपने [illegible] सम्हाल कर उसने अपनी टोकरी भर ली और हाथ से [illegible]'

ये आसू बुढिया तक ही सीमित रहे। [illegible] दिग्भ्रमित करन म सफल नही हो पायी। [illegible] है। क्रूर मनुष्य म भी साधुता विद्यमान [illegible] कथाकार ने स्वाभाविक गति से चरम [illegible]। [illegible] टोकरी उठाने का आग्रह जमींदार [illegible] किया [illegible] इस प्रकार किया है—

'जमींदार साहब पहले तो [illegible] जोडने लगी और पैरो पर गिरने लगी [illegible]। किसी नौकर से न कह कर स्वय [illegible] हाथ भी ऊपर नही उठी और वह [illegible] हमसे नही उठायी जावेगी।'

साहित्यकारो की तरह उनके इगित पर 'गुरुपाठ' करते थे—बल्कि किसी सीमा तक उनके स्वस्थ विरोधी के रूप मे थे। सम्भवत यही कारण है कि 'एक टोकरी भर मिट्टी' उसी लामबन्दी का शिकार हो गयी।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हिन्दी के प्रबुद्ध समालोचकगण पूर्वाग्रह से परे होकर हिन्दी साहित्य के इतिहास का वास्तविक मूल्याकन या पुनर्मूल्याकन करें। निष्पक्ष दृष्टि से हमे यह देखना पड़ेगा कि हिन्दी के नीव के पत्थर कौन हैं जिन पर राष्ट्रभाषा का भव्य महल खडा है। और तब हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी के रूप म स्व० माधवराव सप्रे द्वारा लिखित 'एक टोकरी भर मिट्टी' का नाम ससम्मान लिया जायगा।

[श्री देवीप्रसाद वर्मा का यह खोजपूर्ण विवेचन 'सारिका' के फरवरी सन 1968 के अक मे 'प्रसग' कालम के अन्तगत प्रकाशित किया गया था। इसके प्रकाशित होते ही साहित्य के इतिहासवेत्ताओ के बीच खासी खलबली मची थी। इसका एक मूल कारण यह भी था कि हिंदी साहित्य का इतिहास लेखन इलाहाबाद और वाराणसी की सीमाओ मे आबद्ध रहा है। हिंदी भाषा और उसकी साहित्य चेतना कितने बडे भौगोलिक क्षेत्र मे सक्रिय रही है, इसकी जानकारी कभी कभी नजरअदाज होती रही है हिमाचल जम्मू कश्मीर, राजस्थान, कच्छ और गुजरात, महाराष्ट्र और कर्नाटक तथा दक्न और उडीसा के पश्चिमोत्तरी भागों तक जो हिंदी का फलाव रहा है, उस सब को समेटने का सार्थक प्रयास अभी तक नहीं हुआ। बिहार, मध्यप्रदेश और हरियाना के हिंदी साधकों को वह स्थान भी आज तक नहीं मिला, जो हिंदी भाषा और साहित्य के आधुनिकीकरण के दौर मे इलाहाबाद और वाराणसी के साहित्यिक व्यक्तियों को मिलता रहा है। इसीलिए 'छत्तीसगढ मित्र' जसे मासिक पत्र और माधवराव सप्रे जसे साहित्य साधक का काय अदेखा या अधदेखा ही रह गया। (मारीशस, फिजी और बाली जसे देश की बात तो जाने ही दीजिए जिसे हमने प्रवासी साहित्य के रूप मे भी स्वीकार नहीं किया!) तो इस खोजपूर्ण लेख के प्रकाशित होते ही व्यापक प्रतिक्रियाए हुईं, जिनमे से तीन महत्वपूर्ण प्रतिक्रियायें यह थीं

—सम्पादक

प्रथम मौलिक हिंदी कहानी कुछ प्रतिक्रियाए

एक टोकरी भर मिट्टी को आचाय शुक्ल ने या तो देखा नहीं होगा अथवा उसे कहानी की कोटि मे रखना उचित नही समझा होगा। हिंदी साहित्य म रीति

सम्प्रदाय की तरह एक वर्मा सम्प्रदाय भी रहा है। श्री वर्मा का आरोप यह सिद्ध करता है कि अभी वह सम्प्रदाय जीवित है क्योंकि यह सम्प्रदाय शुक्लजी की मजबूत दीवाल से सिर टकराता रहा है। या अप्रैल अंक में प्रकाशित पाठकों के तीन पत्रों ने 'एक टोकरी भर मिट्टी' के इस दावे को कि वह हिंदी की पहली मौलिक कहानी है, रद्दी की टोकरी में फेंक दिया है।

मेरे विचार से हिंदी की पहली कहानी 'प्रणयिनी परिणय' है जिसे किशोरीलाल गोस्वामी ने सन् 1887 में लिखा था। सन 1850 1900 और कुछ उसके बाद तक कथासाहित्य (फिक्शन) को उपन्यास कहने का चलन था। सन 1900 में 'सरस्वती' में छपी कहानी को भी उन्होंने अपने 'उपन्यास' पत्र में उपन्यास कह कर ही छापा है। इसमें दो प्रेमियों की कहानी कही गयी है। प्रेमी प्रेमिका के घर में प्रविष्ट होने का प्रयत्न कर ही रहा था कि राजा द्वारा चोर समझे जाने के कारण पकड़ लिया गया। किंतु राजा ने दोनों के प्रगाढ़ प्रेम का परिचय प्राप्त करने के बाद उनका विवाह करा दिया। इस पर कथा सरित्सागर का प्रभाव मालूम पड़ता है किंतु कहानी में यदि एक ही मूल प्रेरक भाव होता है तो यह हिंदी की पहली कहानी ठहरती है। इसमें आंशिक रूप में जन जागरण का चित्रण हुआ है। तात्पर्य यह है कि यह अपने परिवेश से असंपृक्त नहीं है। यदि 'प्रणयिनी परिणय' को भी छाप दिया जाये तो ज्यादा अच्छा हो।

— डा बच्चन सिंह, वाराणसी
(मई, 1968 की 'सारिका' में)

प्रसिद्ध उपन्यासकार देवकीनंदन खत्री ने सन 1900 में काशी से मासिक 'सुदर्शन' का प्रकाशन आरंभ किया था जो सन 1902 में बंद हो गया। इसमें भिवानी के पं माधवप्रसाद मिश्र की 'मन की चंचलता' नामक प्रथम कहानी सन 1900 में प्रकाशित हुई थी। बाद में मिश्रजी की अन्य कहानियां भी 'सुदर्शन' में निकलीं। 1918 में मिश्र निकेतन, भिवानी से मिश्रजी की इन कहानियों का संग्रह 'आख्यायिका सप्तक' के नाम से प्रकाशित हुआ।

उन्हीं वर्षों में 'उपन्यास तरंग' (1897), 'उपन्यास' (1898), 'उपन्यास माला' (1899), 'हिंदी नावेल' (1901), 'जासूस' (1901), 'उपन्यास लहरी' *(1902), 'उपन्यास सागर' (1903), 'उपन्यास कुसुमावली' (1904) 'गुप्तचर'* (1905), आदि कहानी प्रधान पत्र निकले हैं। इनमें प्रकाशित होनेवाली कुछ कहानियां तो अवश्य मौलिक होनी चाहिए। इन पत्र पत्रिकाओं की पुरानी जिल्दों का अध्ययन किया जाये तो हिंदी की प्रथम मौलिक कहानी के प्रश्न का समाधान अवश्य मिल जायगा।

—वेंकटलाल ओझा, हैदराबाद
(मई, 1968 की 'सारिका' में)

श्री देवीप्रसाद वर्मा ने जिन तर्कों के आधार पर स्व. माधवराव सप्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्टी' को हिंदी की प्रथम मौलिक कहानी कहा है, वे भले ही बहुत विश्वस्त न हों, लेकिन यह तय है कि सप्रे जी की उक्त कहानी को ही हिंदी की प्रथम मौलिक कहानी होने का गौरव दिया जा सकता है। यों कथात्मक तत्त्व तो इंशाअल्ला खां की 'रानी केतकी की कहानी' और राजा शिवप्रसाद 'सितारे हिंद' के 'राजा भोज का सपना' में ही किसी न किसी रूप में मिलने लग गये थे, फिर भी यह कथा के प्रारंभिक विकासमान रूप ही थे। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तथा बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ तक तमाम मौलिक और अनूदित कहानियां लिखी जा चुकी थीं। अनुवादित कहानियां में देशी और विदेशी दोनों ही प्रकार की थीं और जो मौलिक कहानियां थीं, वे भी इन अनुवादों से काफी प्रभावित थीं। बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में किशोरीलाल गोस्वामी की 'इंदुमती,' 'गुलबहार, रामचंद्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय,' मास्टर भगवानदास की 'प्लेग की चुड़ैल' आदि कहानियां हैं जिनमें से 'इंदुमती' (1900) को प्रथम मौलिक कहानी माना गया। मुझे दो आपत्तियां है—एक तो यह कि ऊपर गिनायी गयी कहानियां एक जगह से और हिंदी भाषी लेखकों द्वारा लिखी जाकर एक ही जगह प्रकाशित हुई, इसलिए इनमें वैविध्य हो ही नहीं सकता है। कहानी के प्रति एक लेखक का जो दृष्टिकोण रहा होगा वही दूसरों का भी रहा होगा। उस समय तक वैसे भी साहित्य में समूह ही सब कुछ था। दूसरे, जैसा कि संकेत किया जा चुका है, मौलिक कहानियां पर अनुवादों का प्रभाव बेहद था। 'इंदुमती' उस समय लिखी जाने वाली कहानियां से थोड़ी अलग जरूर थी लेकिन इस पर देशी-विदेशी दोनों तरह के प्रभाव हैं। एक ओर शेक्सपियर के 'टेम्पेस्ट' की छाप इस पर है तो दूसरी ओर एक राजपूत कहानी का प्रभाव भी है (हिन्दी साहित्य कोश भाग 1, पृ० 237)। कहानीपन', जो सबसे स्थूल और प्रारंभिक चीज है का 'इंदुमती' में सर्वथा अभाव है। रही वातावरण की बात तो उसे मैं विशेष अहमियत नहीं देता, क्योंकि भारतीयता की अवधारणा पहले साफ होनी चाहिए। विदेशी वातावरण में रखकर भी कहानी की स्थिति को भारतीय बनाया जा सकता है। उस समय की कहानियां के बीच 'इंदुमती' की विशिष्टता वातावरण के जरिये नहीं स्थापित होगी।

इसके समानान्तर माधवराव सप्रे की 'एक टोकरी भर मिट्टी' को देखा जाये तो इसकी अलग विशेषताएं हैं। उन कहानियों के बीच यह आसानी से खो नहीं सकती। अगर रचना-काल का मिलान करें, तो 'इंदुमती' और इसमें खास फर्क नहीं है। इसकी मौलिकता पर यह कहकर संदेह उठाया गया है कि यह 'नौशेरवां का इनसाफ' का रूपांतरण है। प्रारंभिक काल की कहानियां का संबंध दो स्रोतों से रहा है—एक संस्कृत कथाओं और दूसरा फारसी की कहानियों से

(हिन्दी साहित्य कोश भाग 2, पृ० 237)। एक स्रोत और था—लोक कथाओं का। 'नौशेरवां का इनसाफ' की जो कथा है वैसी तमाम कथाएं अब भी लोक में प्रचलित हैं। 'एक टोकरी भर मिट्टी' पर अगर छाप है भी तो लोककथाओं की ही है, फारसी कहानी की नहीं। इस कहानी को इसलिए भी पहली कहानी का गौरव दिया जाना चाहिए कि एक साथ यह लोककथा के स्तर को भी छूती है और साहित्यिक कहानी के स्तर पर भी पहुचती है। उस समय लिखी जाने वाली कहानियों से यह अलग है, इसका सबसे बड़ा प्रमाण तो यही है कि समूह के पत्र में प्रकाशित न होकर एक सर्वथा भिन्न जगह प्रकाशित हुई।

सप्रे जी की कहानी को हिंदी की प्रथम मौलिक कहानी मानने के और भी कई कारण हैं। इसका शिल्प एकदम अलग है और उस तरह के शिल्प का प्रतिनिधित्व करता है जो आगे के दशकों की कहानियों में क्रमश विकसित होता गया। इस कहानी और आज की कहानी में एक क्रम सहजता से स्थापित किया जा सकता है। अतिशय भावप्रवणता अथवा अतिशय कुतूहल को छोड़ कर पहली बार यह कहानी सामाजिक संदर्भों को विकसित करती है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि इसका संदर्भ अपना है। पूरी सिचुएशन को जिस तटस्थता से निर्मित किया गया है वह इसे सातवें दशक की कहानी के नजदीक ला देती है। कहानी की गठन जटिल न होते हुए भी असाधारण है। मानवीय संबंधों को भी बड़ी सूक्ष्मता से उभारा गया है। यह तमाम बातें इस कहानी को उस समय की कहानियों से अलग और विशिष्ट बनाती हैं। 'इंदुमती' में ऐसा कुछ भी नया नहीं है जिसे आज की कहानी के स्तर पर रखांकित किया जा सके। इसलिए सप्रे जी की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्टी' ही हिंदी की प्रथम मौलिक कहानी हो सकती है।

—डा धनंजय, इलाहाबाद
(मई, 1968 की 'सारिका' से)

[इसके बाद 'सारिका' के सन 1976 अंक में डाक्टर बच्चनसिंह ने सन् 1968 में प्रतिपादित अपनी प्रतिक्रिया के अनुरूप साक्ष्य और समीक्षा के आधार पर यह प्रतिपादित किया कि किशोरीलाल गोस्वामी की रचना 'प्रणयिनी परिणय' हिंदी की पहली मौलिक कहानी है। इसके उत्तर में देवीप्रसाद वर्मा ने माधवराव सप्रे की एक अन्य रचना 'सुभाषित रत्न' खोज निकाली, जो उन्हीं की रचना 'टोकरी भर मिट्टी' से एक वर्ष पहले रची गई थी। अत अब देवीप्रसाद वर्मा के मुताबिक माधवराव सप्रे की 'सुभाषित रत्न' हिंदी की पहली मौलिक कहानी है जो जनवरी सन 1900 में छपी और दूसरी मौलिक कहानी भी माधवराव सप्रे की ही है—'एक टोकरी भर मिट्टी,' जो सन 1901 में छपी। यानी आचार्य रामचंद्र शुक्ल के इस प्रति-

पादन पर कि 'इंदुमती' (सन 1900 जनवरी के बाद), 'गुलबहार' (सन 1902), 'प्लेग की चुडल' (सन 1902), 'ग्यारह वष का समय' (सन् 1903), 'पण्डित और पण्डितानी' (सन् 1903) और 'दुलाईवाली' (सन् 1907) आदि मे छपीं और हिंदी की प्रथम मौलिक कहानी इन्हीं मे से कोई मानी सकती है, पर माधवराव सप्रे की कहानिया एक बडा प्रश्न चिह्न लगा देती हैं—प्रश्न चिह्न ही नहीं, बल्कि आचाय शुक्ल के प्रतिपादन को पीछे छोड देती हैं। साहित्य के इतिहास मे खोज का यह क्रम चलता ही रहता है।

डॉ बच्चनसिंह ने 'प्रणयिनी परिणय' को कहानी सिद्ध करने की कोशिश की है—जो मेरी अपनी दृष्टि से सही प्रतिपादन नहीं है। श्री किशोरी लाल गोस्वामी ने सन् 1898 मे 'उपन्यास' मासिक पत्र निकाला था और 65 उपन्यास लिख कर प्रकाशित किये थे। डा बच्चनसिंह का यह मानना कि किशोरीलाल गोस्वामी को आख्यायिका और उपन्यास का भेद शायद नहीं मालम था—एक लगडा तर्क है। 65 उपन्यासो के लेखक और 'उपन्यास' मासिक पत्र प्रकाशित करने वाले किशोरीलाल गोस्वामी यदि यह नहीं जानते थे कि उपन्यास क्या होता है तो कौन जानेगा? और उन्होने स्वय 'प्रणयिनी परिणय' का उपन्यास की सज्ञा दी है। फिर भी डा बच्चनसिंह ने अपने तर्कों की ताकत पर जो कुछ प्रतिपादित न किया है, उसे हम पाठक ससार के लिए प्रस्तुत कर रहे हैं।

—सम्पादक]

प्रथम मौलिक कहानी (दो) सन् 1887 मे रचित

□ प्रणयिनी-परिणय

किशोरीलाल गोस्वामी

तेजस्विमध्य तेजस्वी दवीयानपि गरायते ।
पचम पचततस्तपनोजातवेदसा ॥ १ ॥

(सभातरगे)

पूवकाल म सवनगरीललामभूता सुरपुर की अखिल शोभा सौष्ठव सपन्न पपापुरी थी। उसके सवस्वामि गुणोपेत प्रजावत्सल नामा नपति राज्याभिषिक्त थे। भूपति का अथ ही है, 'प्रजा का यथाथ पालन करना' और यह भी सत्य ही है कि प्रजा की तान्श अवस्था दृष्टिगोचर हुए बिना उसका उचित पालन हो ही नही सकता जब कि प्रजा पुत्रवत है और उसका लालन-पालन तनय के तुल्य ही करना महीप का धम है, तो सुसम्पन्न महीपाल स्वय उनका निरीक्षण किये बिना क्याकर तन्नुरूप व्यवहार कर सकता है ? यही निश्चय करके जब कि सवशक्तिमान जगदीश्वर ने मुझे पथ्वी पोषण की क्षमता दी है, तो केवल निम्न कमचारियो के ऊपर ही निभर नही रहना चाहिए। स्वय भी यथाशक्ति यत्न और अध्यवसाय कतव्य है।

इस प्रकार साच विचार कर राजा प्राय निशीथ समय मे स्वीयवेशविपयय अथात प्रहरीगणा के तुल्य परिच्छेद परिधानपूवक नगर रक्षको की भाति पुर के चतुर्दिक्षु निरतर परिभ्रमण किया करता, विशेषत भिक्षुवेश तथा कभी कभी अन्यान्य उपायो से नागरिक मन्दिरो म प्रवेश करके उनका इति-वत्त जानने की पूणत चेष्टा किया करता, सुतरा मानवी गाष्ठाओ म तो सतत प्रच्छन्न रूप से जाया करता, और उनके आशयो को हृदयगम किया करता था। आह ! ऐसे सुयोग्यतम न्यायपरायण राज्य भारवाहक्षम 'प्रजावत्सल' महीपति के राज्य

मे भी कदापि असच्चरित, चोर लपट शठ, बदमाश, उठाईगीरे, डाकू रह सकते हैं ? वा उसकी सुशील प्रजा कभी भी दुष्टो से विविध कष्ट पाय के दुखी, दरिद्री, पीडित, अन्यायग्रस्त, निक्षुण्ण मात्र रह सकती है ? सुतरा सब सौख्य लहरी कल्लाल कौतुकावगाहन मे सन्देह ही क्या है ! परन्तु क्या ऐसे सुसमय को सुप्रबन्ध के कारण दख के फेर क्या महीपति को सन्तोष करना उचित है ? क्या राज्य शासन मे निश्चितता कभी भी कार्यकारिणी हो सकती है ? वा निश्चितता भी राजा के तत्पर भय बिना यथावस्था मे रह सकती है ? बस यही विचार कर रात्रि के परिभ्रमण से राजा कदापि विरत नही रहता। किन्तु यह मानवी प्रवृत्ति है कि अपन काय की उत्तमता देखकर मनुष्य के चित्त मे अहकार का सचार होता ही है और अहकार ग्रस्त मनुष्य आपत्ति के बिना सुप्रबन्धक क्या हो सकता है ? यह जानकर राजा अपने राज्यप्रबन्ध श्रमसिन्धु मे मग्न रहकर गवरहित सदा परमेश्वर ही को धन्यवाद दिया करता था। आहा ! वह पुरुष धन्य है जो जगदीश्वर दत्त वस्तु की रक्षा करके उसकी आज्ञा पालन ही श्रेयस्कर समझता है, तभी निज कार्यों म रत मनुष्य कभी न कभी अवश्य प्राप्त मनोरथ होना ही है यह समय कर एक समय एक रात्रि म परिभ्रमण करते-करते राजा भव्यालय श्रेणियो के दर्शनार्थ गया। वहा अनक प्रकार के अदभुत कौतुक को देख आश्चयचकित हो कहने लगा, हैं ! क्या आपत्ति है ? क्या मेरे सब परिश्रम का इतने दिना मे आज यही फल निकला ? हा ! ऐसी न्यायपरायणता, सदावत, अनाथालय, उद्यम बाहुल्य के रहते भी यह कम, यह उपद्रव, यह दुघटना तथा यह दुर्दशा मनुष्यो की हो रही है ? अन्यथा यहा इस समय इस व्यक्ति के इस प्रकार गह म प्रवेश करन का यत्न करना क्या है ? यद्यपि इसका यथाथ निणय सहसा इस समय होना किंचित दुघट होगा, तथापि विचार करन और इसके लक्षण से क्या अब भी कुछ सदेह रह गया है ? जो हो ! किंतु अब इस समय इसको यो ही छोड देना उचित नहीं। सुतरा यह मन मे जानकर राजा उस आदमी के समीप जाकर बोला, र दुष्ट ! क्या तुझे ससार म दूसरी कोई आजीविका नही, जो तू ऐसा घृणित कम करता है ! अरे तुझे राजा का भी भय नही। हा ! यह तू नही जानता कि ऐसे कम करने म प्राण जाते है ? रे निर्दयी ! तुझे अपने प्यारे जीव की भी कुछ दया नही ? देख ! अब तेरी मृत्यु ने तुम पर पूरा पूरा आक्रमण किया है, भला अब क्या तू मुझसे बच सकता है ? यह कह कर राजा ने उस चोर को पकडा और कहने लगा कि कह तू कौन है जो ऐसा काम करता है ? जान पडता है कि तने इस व्यवहार मे कितने घरो का चौपट कर अनेक जीवो का प्राण धन लिया होगा। चल तो सही कल राजा के समीप तुझे अपने कर्मों को स्वीकार करना पडेगा, और क्या किसी प्रकार भी अब तेरा प्राण बच सकता है ? इस प्रकार नगर रक्षक की बात को सुन चोर अपने मन म इस घोर दुघटना का परि-

णाम सोच बडा विकल हो कहने लगा कि—

हा कष्ट! अरे इस सौख्य शैल पर ऐसा वज्राघात, हाँ! आनन्द भूमि से उठा कर यों शोक सागर में निपात! अनेक रक्षा करने पर भी अनायास मृत्युमुख प्रवेश, हा हत! हा दैव! कृत कर्म विपाक का अशेष।

हा दैव! इस समय मैं चोर हो गया? हे जगदीश्वर, क्या मुझसे व्यक्ति की भी चोरों में गणना हो सकती है? अस्तु, क्या आज प्रजावत्सल राजा का न्याय इतिकर्तव्यविमूढ हो गया। अरे! ऐसा अनर्थ! यह अदृश्य पूर्व आश्चर्य! राजा के अनुचरों की ऐसी धृष्टता! यह बलात्कार! अरे। अब क्या हो सकता है! वही कराल काल के गाल से भी कोई निहाल भया है! अरे! इन अन्यायियों के मारे अनेक निरपराधियों के अमूल्य प्राण धन जाते होंगे, क्या ईश्वर के यहाँ इसका उत्तर राजा को न देना होगा। परन्तु इन प्रपंचों से अब मैं क्योंकर बच सकता हूँ। यदि ईश्वर सत्य और मैं निर्दोषी, तथा राजा न्यायपरायण है तो इन व्यर्थ भूकने वालों के लिए मेरी क्या क्षति हो सकती है? परन्तु ऐसे समय में मनुष्य को धैर्य धारण करना चाहिये, आगे जो भवितव्य है तो बिना भये नहीं रहता। हरिच्छा बलीयसी अपिच अपनी शक्त्यानुसार आत्म रक्षा करना मनुष्य मात्र का कार्य है, इत्यादि विचार कर वो अत्यन्त विनीत भाव से बोला—

महाशय! आपने जो मुझे इस समय अपने विचारानुसार चोर जानकर पकड़ा सो वस्तुतः मैं चोर नहीं हूँ, प्रत्युत एक सुप्रतिष्ठित ब्राह्मण का तनय हूँ। यदि आप दयापूर्वक मुझे मेरे पिता के सन्मुख ले चलें तो आपको विविध सन्मान, विपुल धन द्वारा सन्तुष्ट करेंगे, क्योंकि पुत्र पर पिता की ममता सर्वताभाव से होती है। अतएव ईश्वर के अनुग्रह से आप मुझ निरपराधी को छोड़कर अमोघ यश लाभ करें।

पाठक! यह ठीक है कि विपत्ति में कभी ही धीर पुरुष क्या न हो उसकी भी विचार शक्ति कुछ न कुछ अवश्य मन्द पड़ जाती है। यद्यपि इसने (अपने मन में कहने की इच्छा करके) राजा के विरुद्ध वचन धीरे ही धीरे कहा, तथापि कोट-पाल (कोतवाल) वेश में राजा ने उसे भी प्रकाश वचन के सहित सुन लिया और इस प्रकार अश्रुत पूर्व बातों को विचार कर वो कोतवाल बड़े आश्चर्य में आया और कहा—ऐं! यह क्या चोर नहीं है, वस्तुतः जो इसने अपने मन में वा प्रगट कहा वही सत्य है? परन्तु यह लालच कैसा है! ऐसी चपलता, क्या राज कर्मचारी ऐसे ऐसे भयंकर लालच से बच सकते हैं? फिर तब क्या अनर्थ न्यून होने की सम्भावना हो सकती है? यदि इस समय मैं न होता तो इतर न्यायाधीश अवश्य ही घूस लेकर इसे छोड़ देते। सच कहा है कि राजा के राज्य में कुप्रबन्ध और नाश होने का कारण नृप का आलसी होना ही है, अस्तु! विचार करने से भी इसमें चोर से लक्षण सम्पूर्णतः नहीं घटते, तथापि अभी यों ही बिना सोचे विचारे

इसे छोड देना भी न्याय विरुद्ध है तो चलो इसके पिता की भी महत्ता देखें। यह मन म निश्चय करके राजा और चार दाना यहा से आग बढे।

इति प्रथमा निष्क ।

अथ द्वितीय निष्क ।

रक्तत्व कमलानाम पुरुषाणा परोपकारित्व !
असता च निदयत्व त्रिषु वितयस्यभावसिध्दम !
(नीतिशतके)

जब उस समय की दुघटना क्या की जाय, एक तो अधनिशीथोपरात दो बजने का समय, दूसरे रात्रि अधकारमय हो रही थी परन्तु लालटेनो की राशनी कुछ-कुछ कहीं-कही चमचमा रही थी। श्वानरव से कान बहरे हाते जात थे, इतर बडा सन्नाटा छा रहा था, न कहीं आदमी, न आदम जात। केवल राजा अपने अनुचरा क साथ उसके निर्दिष्ट माग होकर ब्राह्मण देवता के घर पहुचा और युवा पुरुष न अपन पिता को आह्वाहन किया परन्तु उस समय शास्त्रीजी घार निद्रा मे निमग्न थे पर कालाहल सुन कर चौंक पडे और साथ ही कण कुहर म यह ध्वनि पहुची कि कुमार शास्त्री बाहर आओ ! बस क्या पूछना था, ब्राह्मणा मे क्रोध की पराकाष्ठा किंचित विशेष पूव समय से ही चली आई है उसम भी कुसमय मे आह्वाहन के कारण क्रोध ने कुमार शास्त्री के हृदय का जाज्वल्यमान कर दिया बरन किसी प्रकार बकत बकते बाहर आय और देखकर ऐं ! यह क्या हमार सपूत मारशास्त्री है और नगर रक्षक कातवाल क्या सग हैं ? निदान अनेक तक वितक के उपरात और शास्त्री जी के पूछने पर राजा ने सब वतान्त कह सुनाया और पूव कथित द्रव्य की लालसा प्रकट की। कुमार शास्त्री क्रोध मे दुवासा से चढे-बढे थ। यह कथा सुनकर रक्तवर्णीभूत हो गये। सच है क्राध म चित्तवत्ति स्थिर नही रहती और इसम अनेक व्यवधान भी उपस्थित होने की सम्भावना है, परन्तु पीछे केवल पश्चाताप ही रह जाता है। यो ही क्रोध पर तत्र कुमार शास्त्री न जलभुन के कहा —

ऐ न्यायाधीश ! यद्यपि यह मेरा पुत्र है, पर आज यह मर गया, यह मैं अनुमान करता हू क्योंकि इसन मेरी एक शिक्षा न मानी निरतर रात रात-भर न जान कहा भ्रमण करता और प्रभात भय यहा आता है वर्षों से इसकी यही दशा है अत पिता कम का साक्षी नही हाता प्रत्युत जन्म का और यह राजा ऐसे न्यायपरायण है कि केवल अपराधी ही को उचित दड देत है ता ऐसी अवस्था मे मैं क्योकर अपन पुत्र का प्रतिनिधि बन सकता हू ? वस्तुत इसे अपन कुकम का दड पाना ही उचित है। यदि इस विषय म कुछ मेरा गडबडाध्याय राजा जान

जायेंगे, तो व्यर्थ मुझे भी अपने सिर एक आपत्ति लेनी पडेगी अतएव इस प्रपंच में आपकी जो इच्छा हो, सो कीजिए। मुझसे कोई प्रयोजन नहीं और आपको यह अधिकार है कि इस दुष्ट को न्यायकर्ता के सम्मुख ले जाइये या छोड दीजिये, पर मेरे पास तो टका भी नहीं है। इस प्रकार कहते हुए कुमार शास्त्री घर में प्रवेश करके किवाड बंद कर निश्चिंत हो गए। शास्त्री जी की यह रुखावट देख राजा बडा आश्चर्यित हुआ, आहो! कुकर्म ऐसी वस्तु है कि अद्वितीय प्रिय पुत्र की पिता भी सहयोगिता स्वीकार नहीं कर सकता, प्रत्युत स्वीयकर्म दंड भोगना ही चाहता है। क्या कुमार शास्त्री घूस देकर या आप उसके दोष को ओढ कर या निर्दोष ही बनाकर न्याय में बच सकते हैं? या श्रमशाली राजा पर यह वृत्तांत विदित न हो, यह हो सकता है? आहा! अविचल न्याय का अद्भुत चमत्कार है। अनंतर राजा मारशास्त्री का हाथ पकड कर ले चला, और उस समय शास्त्री जी की आंतरिक वेदना की सीमा न रही। कहने लगे—हा! माया जवनिकाच्छन्न असार संसार ऐसा विलक्षण है कि यहां कोई किसी का नहीं, और जो है सो भी अपने मतलब के यार हैं, हा! 'कालस्यकुटिलागति' देखो खोटे दिनों में पिता भी पुत्र का त्याग कर, माता विष दे, राजा सर्वस्व हरण कर ले तो क्या आश्चर्य है अस्तु, फेर और दूसरी शरण क्या है और क्योंकर कल्याण की आशा हो सकती है? यह सब कुछ है परन्तु प्रीतिपथ ही निराला है, उसमें कभी कोई भय नहीं, तो क्या न एक बार और भी अपने भाग्य की परीक्षा कर लें, अंत में भावी तो मुख्य ही है। यह स्मरण करके मारशास्त्री ने न्यायाधीश से कहा, महोदय! यदि आप मेरी दशा पर एक बार पुनः अनुग्रह करें तो आशा है कि मैं शीघ्र ही संकटमुक्त हो जाऊं और आपका चिर अनुगृहीत होऊं—अर्थात् शुभंकर मुहल्ले में मेरे एक अभिन्न हृदय प्राणक्द्विधाभूत देह 'परदुखभंजन' मिश्र रहते हैं। यदि आप उनके समीप तक और श्रम स्वीकार करें तो निश्चय है कि वे मुझे अवश्य ही बंधनमुक्त कराने की चेष्टा करेंगे और यथोचित आपका भी सम्मान करेंगे।

राजा यह आश्चर्यजनक वार्ता सुनकर कुछ काल तक तो विचार वारीस मग्न हो गया और सोचने लगा कि क्या पिता माता से भी श्रेष्ठ उत्तम कोई और संसार में है और विशेष प्रीतिभाजन हो सकता है? अस्तु! जो हो, ईश्वर की महिमा अद्भुत है, प्रेमपथ निराला है और उसका क्षय होता है अथच इसके प्रताप से अपने बिगाने और बिगाने अपने बन जाते हैं यदि किसी को मुख खोलने की जगह नहीं है तो इसी प्रेम मार्ग में, इत्यादि विचार कर कहा, अच्छा चलो अब तुम्हारे मित्र की भी करतूत देख लें। यह कह कर दोनों मित्र के गृह गये। मारशास्त्री को अपने मित्र पर बडा भरोसा था। पहुंचते ही बडे वेग से किवाड खडखडाया और पुकारा। शीघ्र ही मित्र की आंखें खुल गयीं और विचारने लगा कि इस समय मित्र क्यों आए? और ऐसा कातर शब्द क्यों मुख से निकालते हैं, क्या कारण है, किंतु

शीघ्रता से आकर ज्यो ही किवाड खोला और अति उद्वेग से मारशास्त्री के गले लिपटना चाहा कि इतने मे राजा ने डाटा, और घुडक कर कहा, अरे मूख ! यह क्या करता है ? अब तो परदु खभजन मिश्र के कान खडे हो गय। राजा की यह भयानक बात सुन कर उसके क्रोध की सीमा न रही और बोला, ऐ पुररदीक ! क्या तुझे तेरी मत्यु ने घेरा है ? और तू मेरा नाम ग्राम, पराक्रम नही जानता, यदि तेरा दैव अनुकूल हो तो यहा से शीघ्र ही भाग जा अन्यथा ऐसा खड्ग मारूगा कि तेरा देह अभी शिरा विहीन हो जायेगा, तने क्या समझ कर मेरे मित्र को पकडा ? और तेरी सामर्थ्य मेरे घर तक आने की हो गयी ?

राजा ने गभीर भाव से कहा, क्या न्यथ उन्मादग्रस्त हुआ है। शूरवीर बकते नही प्रत्युत अपना पौरुष दिखाते हैं, तिस पर भी तुझे राजकीय विषय मे हस्तक्षेप करने का क्या अधिकार है ? क्या सभ्यतापूवक सभापण भी करना नही सीखा, शिष्टाचार तेरे पडास मे भी नही बसा ? क्या तेरी सामर्थ्य मुझे खड्ग मारने की है ? यह दशा देखकर मारशास्त्री डरा और विचार करने से निश्चय बाघ हुआ कि अब अनथ हुआ चाहता है। मित्र न ता वात्सल्यपूरित वीररस के परतत्र होकर सब बातो पर चौका ही लगाना चाहा था, परतु तिस पर भी अभी तक इस सुयोग्य सिपाही ने हठ स मित्र को अन्यथा कुछ नही कहा, क्या मेरे तुल्य इनको भी अभी पकड ले जाना इसके आधीन नही है ? हा कष्ट ! मुझे तो अपना इतना शोच नही है जितना कि मित्र का है। ईश्वर ! य कोई आपत्ति मे न फसे, नही तो पुन रक्षाथ कौन बचेगा ? यह सोचकर परदु ख-भजन मिश्र से कहा प्राणप्रिय ! आपको राज कमचारी महाशय से नम-गम कहने का कोई अधिकार नही। यह तो राजाज्ञापालन करते है और यही हम लोगो मे और इनमे विशेपता है। प्रत्युत प्रजामात्र को राजा का आदेश स्वीकार करना कतव्य है। इसी मे न्यायरक्षा और राजभक्ति है। अतएव इन सुयोग्य महाशय से सभ्यता और नम्रतापूवक सभापण करो, अन्यथा मेरी रक्षा क्योकर होगी ? क्योकि यदि तुम मेरी जामिनी दो तो मैं इस समय छूट सकता हू। यह हृदयगम वचन सुनकर परदु खभजन मिश्र अत्यत घबडाया और न्यायाधीश से यथाथ वृत्तात की जिज्ञासा प्रकट की। न्यायाधीश ने अविकल कथा कह सुनाई, यह सुनकर अभिन्न-हृदय मित्रकदाभिपिक्त परदु खभजन मिश्र ने अतिविनीत होकर अपन अपराध को क्षमापन पुरस्सर न्यायाधीश से कहा, मित्रवर ! यदि ईश्वर सत्य है तो उसको मध्यस्थ मानकर मैं शपथपूवक कहता हू कि जिस समय आप मेरे मित्र को चाहेंगे मैं स्वय लेकर उपस्थित होऊगा। इस प्रकार कातर वचन का राजा ने सुनकर तथास्तु कथनपूवक अपना मार्ग लिया और ये दोनो मित्र कठाश्लेष करते हुए प्रसन्न होकर अतरगह पधारे।

इति द्वितीय निष्क ।

अथ ततीयो निष्क ।

मुग्धे धनुष्मती केयमपूर्वापि च दृश्यते ।
यथा वद्धा सिचेतासि गुणैरेवन शायकै ॥
(शृगार शतक)

अनतर परदु खभजन मिश्र ने कहा, क्यो मित्र क्या आपत्ति है ? क्याकर आज यह व्याघात उपस्थित हुआ। मारशास्त्री न कहा, क्या कहू मित्र, तुमसे क्या कुछ छिपा है ? जिसके लिए ससार का सब सुख तृणवत् छोड दिया है, आज उसी से मिलने के लिए ज्या ही मैं कवच डालकर प्रसादारूढ होना चाहता था कि त्या ही जीवित यमदूत आकर उपस्थित हुआ। हा ! इस प्रेमाबुधि मे निमग्न होकर किसी स्वग सुख का अनुभव नही हाता ! अरे इस नाटिका के प्रस्फुटित पुष्पो की सुगधि त्रैलोक्य करके व्याप रही है। इस माग मे कोई कटक का नाम तक नही हे। प्रियवर ! उसके प्रेमियो का मत ससार से निराला है और इसके आनद का अनुभव बिना प्राणपण किये कौन कर सकता है।

क्या ऐसे निभय मागगामियो को क्लेश समूह पराभव कर सकते है ? क्या सच्चा प्रेमी भी प्रीतिपाशबद्ध होकर वध से डरता है ? क्या उसके लिए प्रीतिपीयूप देवामृत से कम है ? अहह ! आज उसी का पूण आवेश और उद्वेग का उदगार है कि कुछ भी भय और कष्ट विदित नहो होता। कोई भी स्वीकार कर सकता है कि ससार मे कोई अमर तथा सदा एक भाव मे कभी नही रह सकता, परतु प्राय प्रेमामृत सेवी आकल्पजीवित और आनदित ही रहते है सत्य है, ससार एक ओर और प्रीत पात्र एक ओर है आह ! वह प्रेममाधुरी मूर्ति नयनो के आगे नत्य कर रही है, भला ! कभी भुलाय से भूल भी सकती है जिसके क्षणिक वियोग म असह्य यमयातना का अनुभव होता है, जिसके मिलाप मे साम्राज्य महद्र पदवी तुच्छ जचती है। उसके बिना चचल चित्त को क्षणिक विश्राम भी नही मिलन पाता, अहा, वह अलौकिक सौदयप्रभा, वह हृदयबाधक प्रलब केशपाश, वह प्रणय कोप-कापमिताग कौतुक वह अदष्टपूव, हावभाव विलास समूह, वह मनमानस सष्टि की सदव पूणचद्र प्रभा, वह विशाल भाल वह भकुटि कुटिल शरजाल, वो तीक्ष्ण आश्रमवणावलवित नेत्र युगल, वह मवदा प्रसन्न चरणारविद वो मधुर कोकिल स्वर, वो पीनोन्नत कुच कलश, वो मुष्ठि परिमित लक, वो मत्तमतगगमन वो हसपदविन्यास, अवलोकन मात्र ही म किसे नही निरीह कर देता है ! उसका एक बार भी दशन करके किस भावुक सहृदय का कठोर हृदय शतधा विदीण नही हो जाता ? क्या इसके आगे मुझे अब और कोई दुख व्याप सकता है ? क्या उसके बिना किसी प्रकार भी जीवित रह सकता हू ? तो फिर मुझे मरने से डर ही

क्या है ? प्रियवर, ईश्वर साक्षी है। मैं अभी तक केवल उसके दर्शन मात्र ही का धनी हू, इतर अभिलाषा ता इधर अबुधि अवगाहन ही कर रही है। हा ! अब क्या आशा आशा ही मात्र रह जायगी ? अस्तु न सही ! मैं केवल इतन ही मे सवथा प्रसन्न हू। ऐसा भाग्य भी ता हो ले ! इतना कहा का थोडा है ? तो अब अधिक विलब का क्या प्रयोजन है ? मित्र, यदि तुम्हारी अनुमति होय तो मैं इस समय प्राणप्रिया से जाकर अतिम भेंट कर आऊ।

परतु खभजन मिश्र उदास होकर बोले, हा ! प्रियवर ! तुम्हारी यह व्यवस्था दख औ सुन के तो मेरा चित्त ही इस समय विक्षिप्त-सा हो गया, मुझे तो अब इस समय कुछ समझ ही नही पडता, क्या कहू ? यदि निषेध करू तो भी नही बनता क्योकि तुम्हारा चित्त इस समय उधर पूण आसक्त हो रहा है। किंतु यदि तुम्हें जाने दू तो भी नही ठीक जचता ! यदि तुम गये और पुन ऐसी किसी अन्य आपत्ति म पडे ता क्या होगा ? मारशास्त्री ने साहस से कहा, सुभादक ! ससार म प्राण जाने से बढ कर और कोई आपत्ति नही है, और आशा कम है, प्रत्युत जब मेरे भाग्य मे यही लिखा है तो इससे श्रेष्ठतम दुख और माग मे क्या होगा ? परतु खभजन मिश्र ने मद स्वर से कहा, अस्तु ! जैसी इच्छा ! जाओ ! इस समय तुम्हे ईश्वर के समपण करता हू, वही सब अवस्था मे तुम्हारी रक्षा करेगा, परतु तुम शीघ्र ही आकर मुझ सतुष्ट करना, मेरा प्राण तुम्ही मे लगा रहेगा। मारशास्त्री प्रसन्नता से कहन लगे प्रिय मित्र ! कुछ सशय मत करना, मैं शीघ्र ही आऊगा। यह कह कर मारशास्त्री निज मित्र से विदा हुए। उन्हें निश्चय था कि अब मेरी बातो और मर चरित्रो को सुनने और देखने वाला यहा कौन बैठा है ? इसलिए निःशक होकर गय।

इति ततीय निष्क।

अथ चतुर्थो निष्क।

एतत्कामफल लोके यद्वयारेकचित्तता।
अन्यचित्तकृत काम शवयोरिव सगम ॥ १ ॥
(शृगार शतक)

अहा ! क्या ही अधकारमय माग हो रहा है, हाथ से हाथ नही सूझता, चारो ओर सुनसान निबिड तमाच्छादित माग हा रहा है और इस समय यहा मेरा कौन अनुसधान ल सकता है ? जो हो, अब ता मैं अपन लक्ष्य पर आ ही गया, परन्तु उधर प्यारी विचारी अभी तक मेरी बाट दखती होगी, क्योकि दीप प्रज्ज्व लित सा दृष्टिगोचर हो रहा है, खिडकी भी खुली है इत्यादि। चारो ओर खूब

देखभाल कर मारशास्त्री कबध फेंक ऊपर चढ गया और विचारने लगा कि अब कुछ भय नही। मैं तो ऊपर आ ही गया, अब खिडकी बद कर प्राणप्रिया के पास चलू, परतु हा कष्ट ! कदाचित प्यारी मुझ अधम के आने की प्रत्याशा करते करते शयन करने लगी हो तो कैसे मैं उसकी सुख नीद भग कर सकूगा। यद्यपि अभिन-हृदया के इष्टदर्शन मात्र से सब दुख समूह विस्मरण हो गया, परतु मन की तरगो मे बहते-बहते फिर सोच हो जाता है कि क्या यह मोहिनी मूर्ति कल से दृष्टि-पथगामिनी न होगी ? यह सुख अब स्वप्नप्राय हो जायगा ? हा, इस क्षणभगुर ससार की दृष्टि मुझ पर ही थी ? दैवेच्छा, यहा राजा के घर म न्याय अन्याय कुछ भी हो परतु ईश्वर तो बडा न्यायपरायण और दयालु है जिसकी कोई रक्षा नही करता, उसकी जगदीश्वर रक्षा करता है, क्या मैंने अन्याय या कुकर्म किया है जो दडभागी होऊगा। राजा चाहे जो कुछ करे परतु क्या ईश्वर भी मुझे सुख न देगा ? इस प्रकार अनेक भाति करुणा का सिंधु उमडते-उमडते ऐसा प्रेमाश्रु वर्षण भया कि प्यारी का मुखारविंद नितरा आर्द्र हो गया और निद्रा भग हुई। परतु ज्यो ही कि उस प्रेमपरायण पूर्व दशा देख कर अबला का हृदय सहसा विदीर्ण हो गया, एक बार यह अकस्मात आश्चर्य देखकर ललना नितात घबडा गयी, और बडी आतुरता से उठकर अपने प्रीतम के गले मे लिपट नय-जल कण बरसाने लगी। कुछ काल के उपरान्त किंचित धैर्य धारण कर पूछने लगी कि प्यारे! यह क्या ? कसी तुम्हारी दशा है, और इसका हेतु क्या है ? क्या मैं तुम्हारी बाट देखत देखते सो गयी, इसी अपराध से तो इतने रुष्ट नही हो गये ? या आज तुम इतनी देर कर आए अत मैं बुरा न मानू, इसी हेतु उदास हो रहे हो या मुझ नीचाशया से भूले कोई उपद्रव है ? और तुम्हारा हृदय ऐसे वेग से क्यो धडक रहा है और यह प्रसन्नानन मलिन क्यो है, अरे ! कहो तो सही, मेरा प्राण घबडाहट से विकल हो रहा है। हा ! सत्य है। सुख-दुख की समावस्था ऐसी ही होती है, और इन विचारे प्रेमियो को क्या कहा जाय ? एक प्राण दो देह। पर अब बिना सत्य हाल कहे छुटकारा कहा है ? और कहने से प्यारी के क्लेश की सीमा भी नही रहेगी परतु मित्र छोड के अपना दुख सुख कहा भी किससे जाय ? जो कुछ हो पर अब तो सर्वतोभाव ठीक ठीक व्यवस्थिति कहना ही उत्तम है। यही विचार स्थिर करके मारशास्त्री अपना इतिवृत्त कह के बोले, प्राणप्यारी अब मैं तुम्हें ईश्वर के समर्पण करता हू।

हा कष्ट ! इतना सुनते ही अब प्यारी के कष्ट की सीमा न रही, बस अब प्रणय वत्सला के हृदय के शोक को कौन सहज मे कह सकता है ? प्यारी भीरुमिनी का मन आकाश-पाताल गमन करने लगा। हा ! क्या एक बार ही ऐसा वज्राघात ? अरे क्या आज ही कल्पात आ गया ? अब भी ससार शून्य होने मे कुछ विलब है, हा ! आज आनद सरिता सूख गयी, और प्रेमलता मुरझा गयी, प्यारे !

क्या अब तुम ससार सूना कर चले, हा वैरी विधाता? मैंने तेरा बिगाडा था जो मुझ-सी अबला पर ऐसा प्रबल अन्याय, धिक्, दुष्ट अन्यायी रा अरे! ऐसा दारुण दड! हे पृथ्वी! अब तू क्यो नही पातालगामिनी होती? हे गण क्व सहाय होगे? क्या प्रीतम! क्या अब ये मधुर वचन कल से मुझे सुनाई देंगे? क्या यह सब हास-परिहास, क्रीडा-कौतुक, स्वप्नवत हो जा अथवा यह अमोघ दर्शन दुलभ हो जायेंगे? हा हत! तो फिर ऐसे जीवन धिक्कार है, अच्छा प्यारे! अब मैं भी तुम्हारी ही अनुगामिनी होऊगी, जगदीश्वर न्यायपरायण, और वेद-पुराण सत्य है, तथा प्रेममार्ग सुसपन्न सुसस्कृत है, और मेरा अतःकरण प्रेमपूर्वक निष्कपट भाव से तुम्हारे चर अनुरक्त है, तो कभी भी दासी तुम्हारा सग न छोडेगी, और भलीभाति य कर सकी तो परलोक मे ही मन लगा के सेवा करेगी, एवम अन्य जन्म मे तु ही अधिकारिणी होगी। हा! आज यह विपत्ति! वाह रे समय की ऐसा अधेर, यह आश्चय! इतना अनर्थ! एक मात्र अन्याय अन्यथा ही विग्रह! व्यथ विचार! हा! प्यारे! क्या सचमुच अब तुम मुझ अभा से नही मिलोगे? आज प्यारे का परम विछोह ऐसा हृदय-दाहक दारुण दाव तन तूल तापन कर रहा है जो अनिर्वचनीय है। हा! क्या करू? कैसे आतुर, आकुल मन को शमन करू।

इस प्रकार उस परम सुदर की व्यथा अत्यत बढ गयी, और उधर मारशा का हाल तो अकथनीय ही था और अब समय भी आ गया, इससे विदा होने अनुरोध भी किया, परतु वह पतिप्रेमपरायणा क्या कर सकती थी? उ अपने माता पिता पर कुछ अधिकार भी न था, न स्वत स्वतत्र ही थी जो गामिनी होती और भागने पर भी परदु खभजन मिश्र पर पूरी आपत्ति आ एवम् सोच विचार युक्त प्रमदा ने अपना कर्म ठीक तथा ईश्वर पर भरोसा विदा करके कहा—स्थल म तमिस्राभिसारिका की भाति कृष्ण परिच्छद ध करके मैं आऊगी और तुम्हारे शत्रुओं का वध करके तुम्हारी अनुचरी हो और तुम मेरी बाट देखते रहना—हा! लज्जा निगोडी क्या करेगी? उप परिहास का अब क्या आक्षेप है? बधुवर्गों का क्या डर है? और जब राज का क्या भय है? जब प्राण ही चला, तब शरीर रह के क्या करेगा? और इस ससार से ही क्या प्रयोजन है? प्यारे, मन की वत्ति विचित्र है। तुममे न होती है, और मुझे ठीक ठीक अनुमान होता है कि ईश्वर निरपराधियो की अवश्य करेगा और तुम कुशलपूर्वक चिरजीवी होंगे। इधर अब मारशास्त्री लगाई आशाए भी नष्टप्राय हुई। इसी प्रकार सोच विचार करते दो घडी शेष रहते पर मित्र के गृह हर्ष प्रकाश किया, और कल कालकूट ग्रह है यह वि कर सारे शोक के देहानुसधान जाता रहा पर किसी प्रकार से मारशास्त्री

समझा-बुझा कर शयन कराया। परतु यह क्या था ? प्रेमासवप्रमाद मत्त मानव को कौन सा शाक होता है ? अब तो प्यारी भी सग चलेगी और मेरे राके से वह अब नही रुकेगी। अत परलाक मे भेंट अवश्य होगी। फिर क्षति क्या है प्रत्युत निद्रा का भी आक्रमण मबोधन पूवक होता ही है और यह भी प्राकृतिक नियम है कि भवितव्य का भाव मनुष्य के मुख पर स्वय पूव ही लक्षित हो जाता है।

मारशास्त्री की प्रकृति प्रपच से अच्छी सभावना है, तो आश्चय क्या है। निदान शयन करत ही मारशास्त्री ता निद्रित हुए और उस अवस्था मे सब दुख-सुख समान हा गया।

इति चतुर्थो निष्क ।

अथ पचम निष्क ।

न सभा प्रविशेत्प्राज्ञ सम्यदोषाननुस्मरन,
अब्रुवन् विब्रुवन वापि नरोभवति किल्विषी
(भागवत) ॥१॥

अहा, प्रभात काल की शोभा भी अतुल है। अशुमाली भगवान भास्कर उदयाचल चूडावलबी भये, ससारी जीव यावत् व्यापार मे प्रवत्त हुए। क्या इस समय प्रजापति (राजा) के निद्रा का समय है ? अतएव बदीजनो से सस्तूयमान महाराजाधिराज जागत हुए एव आवश्यकीय नित्य कृत्य समापन करके ईश्वरा-भिवान्न तथा दानाध्ययनादि से निवृत्त हाकर राजमदिर मे अतीवोन्नत सिंहासना-धिरूढ हुए। प्रहर मात्र दिन चढ गया था कि मत्री आदि राजकर्मचारी अपने-अपने कार्यों की उत्कृष्टता दिखाने के लिए प्रथम ही से स्थित थे। सकल सभासद प्रजा गण समय समय पर उपस्थित हो होकर नपति का प्रणाम करके उचित स्थान पर विराजमान होने लगे और प्रतिक्षण के भाव जानने के लिए सवसाधा-रण प्रजा ममूह की दृष्टि महाराज के सम्मुख लग रही थी, क्या ऐसे सुसम्पन्न सभ्या का विचार झूठा होता है ? एकाएक सभास्थ लोगो के मन का भाव बदल गया कि आज भूपतिश्वर ऐसे खिन्नमना अपिच गूढाभिप्रायग्रस्त से क्या हो रहे है ? परतु वस्तुत यह कौन निश्चय करके जान सकता था कि आज वसुधरेश्वर को स्वीयश्रम का पारितोषिक परमेश्वर ने प्रसन्न हाकर दिया है, और यही नरेश विचार भी रहे थे।

परतु उस सवशक्तिमान जगदीश्वर की कृपा का उन्ही को असख्य धन्यवाद देना उचित है जिसकी प्रेरणा ही से मुझे अन्वेषण करते-करते एक न एक अपूव न्याय पथ मिल ही तो जाना है। अहह ! ! जो मैं इतना यत्न न करता और दोनो

ध्याना में छिपकर उन लोगों का गुप्त तात्पर्य और सारगर्भी का समस्त भेद न जानता एवं क्रिया प्रक्रिया का अलौकिक गोलमाल का मर्म कुछ न समझता, या उन्हीं दूतों की बातों पर ही केवल विश्वास करता तो आज अवश्य निरपराधी व्यक्ति का प्राण जाता। क्या आज मुझे इस न्यायगृह का पारिभाषिक अर्थ नहीं ज्ञात हुआ कि प्राणदण्ड सर्वथा अनुचित और भारी दंड है? इसमें कितने निरपराधी जीवों का अमूल्य प्राण किन कर्मचारियों की लीला में जाया करता है। यदि कोई वास्तव में वधिक भी हो तो उस को प्राणदण्ड देना सर्वथा असभ्य और सभ्य समाज में दूषित है क्योंकि मनुष्य की प्रकृति यद्यपि व्यभिचार करते समय सम्भव तमोगुण वर्द्धित हो जाता है। उस समय इस दुष्कर्म के कारण हमारा भी यही प्राण जायगा, ऐसा अवस्था में उस अपराधी को प्राणदण्ड देने से वध व्यापार किसी प्रकार भी कम नहीं हो सकता। क्योंकि प्राणदण्ड क्षणिक दुख है और इसमें शिक्षालाभ तमोगुण के प्राबल्य में हो ही नहीं सकता, इसलिए यदि ऐसे-ऐसे घोर पापियों को सख्त परिश्रम कारागार निरोध हो तो प्रजाओं का भी कम न हो और अहर्निशि उनका दृष्टांत प्रत्यक्ष रहने से औरों का भय बाहुल्य द्वारा ऐसे घृणित कर्म करने के लिए तमोगुण की उत्पत्ति भी कम हो, तथा और फिर ऐसे-ऐसे घोर अभिचार की सदा भी कम हो जाय परन्तु उस अवस्था में उन्हीं को (जिन्होंने यह नोकझोंक रची हो) उचित दंड देने का अवसर मिल सकता है, और यदि प्राणवध के अनंतर उसका (जिसका प्राणवध हुआ है) दोष झूठा ठहरे तो राजा कलंक का तुर्रा धारण करेगा और अनन्त पश्चात्ताप के और क्या हाथ आवेगा? तो क्या ऐसी अवस्था में विचारशील पुरुष प्राणदण्ड से बढ़कर आजन्म श्रमदण्ड नहीं उचित ठहरावेंगे? तो इन प्रकारान्तर कठिन दण्ड की अपेक्षा यह घृणित (प्राणदंड) न्यायविधि किस काम का है? और आजकल विशेषतः समस्त सभ्य राजा-महाराजाओं ने इसका निषेध भी किया है तो अब मैं भी सर्वथा इस महाअन्याय को ध्वस्त करने की पूर्ण चेष्टा करूंगा।

धन्य है, हे जगदीश्वर! आज आपने मुझको इस महापाप से बचाया, अब आपसे यही प्रार्थना है कि मुझे सर्वदा ऐसी सुबुद्धि देकर कृतार्थ करेंगे जिससे मैं सदा विशेष कर राज्यकार्य में निष्पाप रह कर आपके सम्मुख मुख दिखलाने योग्य रहूं और 'राज्यान्ते नरकं व्रजेत' यह न भोगना पड़े क्योंकि ऐसे ही कलकर्म पातक समूह से अनभिज्ञ तथा अहम्मन्य राजा पश्चात्ताप प्राप्त पश्चात यमयातना के पूर्णाधिकारी होते हैं। और अपने अन्याय का फल भोगते हैं परन्तु ईश्वर ने आज मुझे इस दुर्घट फांस से मुक्त किया तो मैं अब उसका जितना धन्यवाद दूं, थोड़ा है—

इति पंचमो निबन्ध।

अथ षष्ठो निष्क ।

क्षीणोपि रोहित तरु क्षीणा प्युपचीयते पुनश्चन्द्र
इति विमृशत सत सन्तप्यन्ते न ते विपदा
(नीति शतक) ॥

अब महाराज पूर्व की अपेक्षा प्रसन्नवदन दीखने लगे, साथही अनुरक्त प्रजाओं के मन का भाव भी बदल गया। पाठक ! जिस प्रजा का राजा के हृदयस्थ भाव जानने की क्षमता है, उस (प्रजा) का राजा क्योंकर अपनी प्रजा के मन का भाव जाने बिना रह सकता है। राजा ने भी प्रजावर्ग की आकृति देख के जान लिया कि ये हमारे तर्क वितर्क पर विचार कर रहे हैं तो अब इस कौतुक का दृश्य इन प्रजावर्गों को भी अवश्य दिखलाना चाहिए। यह विचार स्थिर कर महाराजा ने कहा, मन्त्रिवर, कोतवाल को आज्ञा दीजिए कि सभ्य शिरोमणि मुहल्ले म परदु ख भजन मिश्र नाम के जो चोर हैं उसे प्रतिष्ठापूर्वक न्यायालय म शीघ्र उपस्थित करें। मन्त्री ने निवेदन किया, जो आज्ञा आयुष्मन। मन्त्री ने राजा से निवेदनोपरात कोतवाल से कहा कि तुमने महाराजा की आज्ञा सुनी ? तो शीघ्र कार्य को ठीक करो। कोतवाल ने कहा, जी हा, अच्छी प्रकार मैंने सब सुन लिया, और अभी जाकर शीघ्र ही उन्हें लिये आता हू। यह कह कर कोतवाल ने उस मुहल्ले म पहुचने के उपरात परदु खभजन मिश्र का आह्वान किया और कहा कि महाराजा ने मुझे आज्ञा दी है कि उक्त मिश्र को (जो सरकारी चोर हैं) शीघ्र हाजिर करो अत राजाज्ञा से मैं आपके समीप आया हू। परन्तु परदु खभजन मिश्र पूर्व से ही चलने के हेतु सब काम से निश्चिन्त हो बैठे थे और उसम भी राजाज्ञा पाते ही शीघ्र कोतवाल के साथ हो लिये, और वे भी राजाज्ञानुकूल इन्हें ले चले। इधर नगर मे इस प्रकार की एक नवीन बात और उसम भी राज्य सबधी कभी छिप सकती है ? यहा तक कि शीघ्र ही मुहल्ला म कोलाहल मच गया, परदु खभजन मिश्र से उत्तम कुलीन, विद्वान, राजमान्य सुसम्मान्य व्यक्ति भी चोर हो गए ? परतु प्यारे ! राजनीति की पालिसी कौन समझ सकता है ? उस अवस्था मे ऐसे अच्छे पुरुष पर किसकी करुणा दृष्टि नही पडती ? सच है सुपात्र का बडा आदर होता है, सहसा एक स्वर से नागरिक मात्रो के मुख से त्राहि त्राहि भगवान की घोर ध्वनि निकलने लगी और अश्रुपूर्ण नेत्रो से सपूर्ण दयार्द्र भद्रपुरुषो के मुख से यही वचन निकला कि अरे ! यह विचार सुपात्र ब्राह्मण व्यर्थ अन्यायवश पददलित हो रहा है, हा ! राजा जो चाहे, सो करे। सब कोई परस्पर मे इधर कोलाहल करने लगे कि राजा तो दूर रहे प्रथम तो 'पुलिस' ही महाराज है। देखो ! यह क्रूर प्रकृति कोतवाल परदु खभजन मिश्र को अनेक प्रकार के असभ्य व्यवहारयुक्त लिये जाता है।

इधर सारशास्त्री मार ही पड़े हैं और उनके हिसाब अब कुछ कतल ही नहीं शेष रह गया था। बिलकुल बेफिकरी भरी था, पर यो प्रेम प्रमाद में था अन्यथा भला ऐसे भयंकर समय में भी दिल्लगी सूझ आती ? ! और इधर सारशास्त्री चार कालाहल सुनकर भय और घर गये हैं ? मित्र का गया सुन सहसा उठ कर उसी स्थान में दौड़ गये और मार्ग में ही कोतवाल के साथ मित्र का देख उसका अविनय करके, महाशय ! आप उन्हें छोड़ दें, क्योंकि ये महाराज के चोर नहीं। चोर मैं हूँ। आप मुझे ले चलें। मैं ही महाराज के सम्मुख चल कर अपना सारा अपना दोष प्रकाश करूँगा। परन्तु प्रेमवश निरपराध होने से परदुःखभंजन मिश्र ने कहा कि ये झूठे हैं। मैं ही चोर हूँ। इसी प्रकार दोनों मित्र स्वयं दोषी बन के चलने के लिए कोतवाल से निवेदन करने लगे और एक दूसरे की रिहाई चाहने लगे परन्तु उस समय कोतवाल ऐसा कि 'बछड़ा न गाऊ' बन गए और बुद्धि हजरत की घास चरने गयी थी। बड़ा धर्मसंकट में पड़ गया। यही बुद्धि-नाशक कौतुक है, अब बिचारा कोतवाल किसे चोर समझे और किसको ले चले ? परन्तु उसका उचित था कि जिसे राजा ने बुलाया था, उसका ले जाना। यहाँ अब अपनी प्रवृत्ति चातुरी दिखलाने के लिए दोनों ही का महाराजा के सम्मुख लाकर उपस्थित कर दिया और मार्ग में जो दोनों का इति कर्तव्य हुआ उसे भी निवेदन किया, पर कुटिल स्वभाव के कारण अपनी आशा भंग और उस नीति (जो उसने मार्ग में दोनों के संग व्यवहार किया था) का नाम तक नहीं लिया। अब क्या इस बात के कहने की शक्ति वहाँ किसे थी ? कौन कहके अपने सिर पर बला लेता ? क्योंकि यदि कोतवाल की मायिकता प्रकट हो जाती तो वह अवश्य दण्डभागी होता और यह किस सन्याय नीति धर्मशास्त्र का वचन है, उचित अपराध का भलीप्रकार जान कर दण्ड देना राजा का कर्तव्य है न कि अन्य कर्मचारी पुलिस प्रभृतियों का। परन्तु जब तक राजा इस लीला से अनभिज्ञ थे, तब तक उन पर दोषारोपण नहीं करना चाहिए प्रत्युत ऐसा उपाय करना उचित है कि उसमें राजा यह ठगवृत्तान्त जान कर उस दुराचार का संशोधन करें। इधर दोनों मित्र राजा के सम्मुख खड़े हैं पाठक वह देखिए मित्र के लिए प्राण को तृण से भी हलका समझकर छेदन करना क्या अलौकिक गुण नहीं है ? क्या बहुधा संसार में ऐसी प्रीति होती है ? जिनमें ये गुण हों उनके देवता होने में क्या सन्देह है अहा ! स्वार्थपरता को छोड़ कर निष्कपट प्रीति इसी का नाम है परन्तु यहाँ राजा का और ही अभीष्ट था, शीघ्र ही परदुःखभंजन मिश्र को छोड़कर सारशास्त्री से ही कहा कि तू ही मेरा वास्तविक चोर है अतः इसी को सूली के सम्मुख करो, अनन्तर जो हुक्म हो सो करना। पाठक ! वहाँ तो मुख से निकलने की देर थी कि सार-शास्त्री सूली के सम्मुख खड़े किये गये।

इति षष्ठो निबन्ध ।

अथ सप्तमो निष्क ।

गुणेन स्पहनीय स्तान्नरूपेण युतो तप ।
सौगध ही ननादेय पुस्प कातमपिक्वचित ॥१॥
(गुणरत्ने)

अब इस प्रकार आश्चयजनक वतात देखकर सब कोई उद्वेलित हो जाते है। तिसमे यह घोर उपद्रव देख के कौन स्थिर रह सकता है ? नगर भर मे शोक-ध्वनि पूण हो गयी। मत्री आदि समस्त राजकमचारी और उपस्थित सकल प्रजागण केवल चित्रलिखे से रह गये। बस अब केवल एक राजा की आज्ञा ही का विलब था कि एकाएक, एक अदष्टपूण अस्त्र शस्त्र परिपूण युवा अश्वारूढ आकर सहसा मारशास्त्री के सम्मुख खडा हो गया। उसकी प्रभा तथा अदभुत वेश एव पराक्रम देखकर सकल दशक गणो के चित्त मे अनेक भाव उत्पन्न होने लगा और प्रबलप्रकपनी ने सबको आकर आक्रमण कर ही तो लिया और इतने ही मे अश्वारूढ के मुख से यह वचन निकला

इति निजबन्धुवियोगादग्नेर्ज्वाला दहति मे देहम् ।
अहह ! ममागयोगा दायातास्मि विसज्यंगेहम ॥

यह हृदयवेधी वचन सुन के अद्वितीय पडित मारशास्त्री ने उसे चीन्हा और उसी प्रकार उसे उत्तर दिया

नाहि शाक मे मरपो दृढ त्वा प्रेमरूपाभाम ।
अपिच भविष्यति लोके सयोगो मे तयातमद्य ॥

इस प्रकार उभयप्रेमियो न कथनोपकथन को सुन कर जो अक्षराथ समझे, वे भी गूढाशय तक न पहुचकर आतुर होने लगे और जो कुछ भी न समझे उनका मन तो हाथो उछलता था, परतु राजा तो सब वतात पूव ही से जानता था, अत मदस्मित पूवक परस्पर दोनो का अकृत्रिम प्रेम देख के प्रसन्न होने लगे, तब तो और भी आनद हुआ, महाराज के कौतुक को न जान और यह अपूव दश्य राजा का हास्य देखकर सवदशक जन बडे विकल भये यह दशा सभा की देख आश्चर्यित और चमत्कृत होकर मन्त्रिप्रवर नीतितत्वज्ञ शारदाचाय न अति आतुर हो महाराज मे पूछा, प्रभुवर ! ऐसी अदभुत लीला मैंने आज तक न देखी, इस समय मेरी सब बुद्धिमता उड गयी। यदि इस लीला को व्यास, चाणक्य सरीखे

नीति के मारपेच जानने वाले रखते तो अवश्य आपके शिष्यों में नाम लिखाते। यह कैसा अपूर्व कौतुक है? किसकी माया कही जाने, केवल मैं ही नहीं, सब देखने वाले चकित से हो रहे हैं। राजा ने मुस्कराकर कहा, यह भेद पीछे जानना प्रथम मारशास्त्री के समीप यह कौन वीर बाला कपड़ा पहिरे खड़ा है? इसको देख आओ, पश्चात इसका निर्णय हो जायगा।

शास्त्राचार्य उसके समीप जाकर अत्यंत गाढ़ विचार युक्त चेष्टापूर्वक सोच कर बड़े विस्मित तथा लज्जायुक्त हुए और मुख्य राजा के समीप जाकर धीरे से बोले, महाराज! बड़ा आश्चर्य हुआ और सब की कमाई प्रतिष्ठा धूल में मिल गई और मैं मनुष्य मंडली मात्र में मानहत हुआ। अरे यह कुल कलंकिनी कन्या नाम ही की है हा! आज इसने मेरे लाज का जहाज डुबा दिया। राजा ने आश्वासन पूर्वक हँस कर कहा कि कुछ सन्देह मत करो। यह जो सूली के सम्मुख युवक खड़ा है अद्वितीय पंडित और तुम्हारा स्वजाति तथा अब मेरे पुत्रोपम है और तुम्हारी कन्या की और इनकी अतुल अलौकिक प्रीति है अतः अब उचित यही देखा जाता है कि इन दोनों का रीत्यानुसार विवाह भी हो जाय, यह कह कर राजा ने सब गुप्त भेद गुप्त रीति पर मंत्री से कह दिया और यह भी कहा कि यदि ऐसा प्रबंध और भय न देते तो औरों की शिक्षा न होती, और ये दोनों प्रेमी मारे खुशी के आश्चर्य नहीं कि प्राण छोड़ देते।

अहाहा! अब क्या था। यह सुख संवाद सुनकर मंत्री बड़ा प्रसन्न हुआ और उसी समय उन दोनों का विवाहोत्सव कर्म भी अच्छे प्रकार हो गया और उस समय नगरमात्र के हर्ष की सीमा न रही। एक मात्र आनन्द का सागर उमड़ पड़ा, सुख सरिता प्रबल प्रवाह से बहने लगी आनन्द कादम्बिनी छा गई, और मंगलवर्षा होने लगी, हृदय भूमि हरी भरी भई प्रेमवल्ली लहलहा उठी, अनुराग पवन बहने लगा। सौहार्द प्रसून की सुगंध से आशा पूर्ण हो गई।

आज 'प्रणयिनी' नाम्नी मंत्री की कन्या का परिणय मारशास्त्री ने किया, आहा! उस समय उन दोनों प्रियाप्रियतम के अगाध मंगल की सीमा न रही। प्रेम के मारे हठात मेरी लेखनी भी रुक गई! क्या इससे भी बढ़ के कोई अत्यंत प्रेममार्ग होगा? अथवा आबालवृद्ध वनिता से लेकर महाराज, राज कर्मचारी आदि सहृदय इसमें कुछ गूढ़ शिक्षा भी लाभ कर सकेंगे? तो फिर ईश्वर सबको सच्चे प्रेमियों का महान मंगल करे, यही याचना शेष रही।

—इति सप्तमोनिष्ठ।

एक विवेचन

डॉ० बच्चनसिंह

[‘सारिका’ ने अपने फरवरी 1968 अक मे ‘प्रसग’ स्तभ के अतगत स्व० माधवराव सप्रे की कहानी ‘एक टोकरी भर मिट्टी’ को हिंदी की पहली मौलिक कहानी के रूप मे प्रकाशित किया था और इसकी पेशकश देवी प्रसाद वर्मा ने की थी। तब से हिंदी साहित्य के अनेक विद्वान और इतिहास-कार इस तथ्य को स्वीकार करते आये हैं। लगभग नौ वष बाद डॉ० बच्चन सिंह ने उसी सवाल को फिर से उठाया। उनके अनुसार किशोरीलाल गोस्वामी की कहानी ‘प्रणयिनी परिणय’ हिंदी की पहली मौलिक कहानी है। डॉ० बच्चन सिंह का विवेचन और समथक तक तथा ‘प्रणयिनी परिणय’ कहानी यहा दी जा रही है।—सम्पादक]

फरवरी 68 की सारिका म श्री देवीप्रसाद वर्मा का एक लेख प्रकाशित हुआ है। ‘हिंदी की पहली कहानी एक महत्वपूण प्रश्न!’ इसम उन्होंने माधव राव सप्रे की एक टोकरी भर मिट्टी को, जो सन 1901 मे ‘छत्तीसगढ मित्र’ मे प्रकाशित हुई है, हिंदी की पहली मौलिक कहानी सिद्ध किया है।

किशोरीलाल गोस्वामी की कहानी ‘इदुमती’ (1900 ई०) को बहुत से लोग हिंदी की पहली कहानी नही मानते। इसके लिए कोई नया तक या प्रमाण न देकर विद्वानो ने आचाय शुक्ल के कथन का भाष्य करके इसे प्रथम कहानी कहने से इकार कर दिया है। शुक्लजी ने अपना सशय व्यक्त करते हुए कहा है कि यदि ‘इदुमती’ किसी बगला कहानी की छाया नही है तो हिंदी की यही (पहली—स०) मौलिक कहानी ठहरती है। लोगो ने इस पर तरह-तरह की छायाए ढूढ निकाली। किसी ने टेम्पेस्ट की छाया कहा और किसी ने बगीय कहानी की छाया। श्री वमा का खयाल है कि ‘यदि’ लगा कर शुक्लजी स्वय को

प्रथम कहानी लेखक के रूप मे प्रतिष्ठित करना चाहते थे। जो हो, यह तो शुक्लजी जाने और वर्मा जी।

खुद वर्मा जी 'एक टोकरी भर मिट्टी' को कहानी सिद्ध करने के लिए निम्नलिखित तर्क देते हैं —

(1) 'स्व० माधवराव सप्रे द्वारा लिखित इस कहानी मे कहानी के सभी तत्त्व विद्यमान हैं। सातवें शतक मे कहानी का जो स्वरूप आज हमारे सम्मुख है, उसके सभी बीज इस कहानी म स्पष्ट हैं—आज कहानी के साथ-साथ एक और कहानी चलती है वह मानवी परिणति की गाथा है वह कहानी जो ऊपर है। वह भी अपनी अभिव्यक्ति, परिवेश और अचल म नयी है' (कमलेश्वर, नई कहानी की भूमिका) नयी कहानी के सबल पक्षधर कमलेश्वर की वाणी किसी सीमा तक प्रस्तुत कहानी म मिलती है।'

(2) 'कहानी क्रमश स्वाभाविक क्रम से बढती है। क्रूर मनुष्य मे भी साधुता विद्यमान रहती है। इस मनोवैज्ञानिक तथ्य को कथाकार न स्वाभाविक गति से चरम उत्कर्ष पर पहुचा दिया है '

(3) तत्कालीन वाग्जिलता से अलग अपनी सक्षिप्तता के कारण यह कहानी बहुत महत्वपूर्ण है।'

पहले तक मे कमलस्वर का नई कहानी का पक्षधर होना कोई समीक्षा सिद्धात नही है जिसके आधार पर उक्त कहानी को कसा जा सके। मानवीय परिणति की गाथा तो प्रत्येक समय की प्रत्येक कहानी के साथ चला करती है। यह आख्यान साहित्य मात्र की विशेषता है। इससे कहानी के रूप विन्यास पर प्रकाश नही पडता। दूसरा तक भी—मनोवैज्ञानिकता, चरमोत्कर्ष आदि प्रत्येक कहानी के साथ चस्पा होता है। सक्षिप्तता कहानी की मज्जागत विशेपता नहा है।

सन 1901 मे प्रकाशित कहानी में सातवें दशक की कहानिया का बीज ढ्ढ निकालना प्रीतिकर आश्चय है। डॉ० धनजय भी इसे सातवें दशक की कहानी के नजदीक मानते हैं। यदि 'एक टोकरी भर मिट्टी' को सातवें दशक की कहानी के निकट मान लिया जाये (यद्यपि यह कथन अत्यन्त भ्रातिपूर्ण है) तो यह कहानी अपने एतिहासिक सदर्भ से च्युत हो जाती है। किसी भी साहित्यिक विधा का क्रमिक विकास होता है। अपने समय की कहानिया के मेल मे न होने के कारण सिद्ध होता है कि यह अनुवाद है।

पर 'प्रणयिनी परिणय' को पहली कहानी मान लेने के विरोध मे अनेक तर्क दिये जा सकते है। पहला तर्क तो यही है कि जब लेखक खुद उसे उपन्यास कहता है तो हम उसे कहानी क्या कहें? मई, 68 की 'सारिका' मे अपना मत व्यक्त करते हुए मैंने लिखा था—मेरे विचार मे हिन्दी की पहली कहानी

'प्रणयिनी परिणय' है जिसे किशोरीलाल गोस्वामी ने सन 1887 मे लिखा था। सन् 1850 से 1900, और उसके बाद तक कथा साहित्य (फिक्शन) को उपन्यास कहने का चलन था। सन 1900 म 'सरस्वती' मे छपी कहानी को भी उन्होने अपने उपन्यास पत्र मे उपन्यास कह कर ही छापा है। सन 1900 म सरस्वती मे 'इंदुमती' ही छपी थी। 'सरस्वती' के हीरक जयती विशेषाक मे बालकृष्ण भट्ट की रचना 'नूतन ब्रह्मचारी' को कहानी कहा गया है जबकि बहुत से लोग उसे उपन्यास कहते हैं।

कहानी व उपन्यास मे, ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय तक कोई ऐसा अलगाव नही हो पाया था कि उनके बीच कोई विभाजक रेखा खीची जा सके। उपन्यास बहुआयामी होता है, अर्थात उसमे जीवन के अनेक सदर्भ सुगुफित होते ह। कहानी एक आयामी साहित्यिक विधा है जो सब मिला कर एक भाव या विचार पर केंद्रित रहती है। इन दोनो के बीच विभाजन की यह रेखा सर्वस्वीकृत हो चुकी है। इस दृष्टि से 'प्रणयिनी परिणय' कहानी ही कही जायगी।

प्रत्येक 'निष्क' को अलग-अलग खड मान लेने पर कहानी कई खडो म विभक्त दिखाई पडती है। इस तरह खडो म बाट कर कहानी लिखने की प्रथा चलती रही है। हर 'निष्क' या खड के आरभ मे श्लोकबद्ध नीति कथन है, ये श्लोक कहानी के रूप विन्यास मे बाधक सिद्ध होते है, किंतु इन्हे उपन्यास का तत्त्व नही कहा जा सकता। गोस्वामीजी के उपन्यासो मे इस प्रकार के श्लोक उद्धृत नहीं हैं। यह नीति आग्रह का सूचक है और सस्कृत की 'आख्यायिकाओं' के मेल मे है। जिस प्रकार भारतेन्दु हरिश्चद्र के नाटको मे पूर्व और पश्चिम की सक्रमणशीलता दिखाई पडती है, उसी प्रकार की सक्रमणशीलता गोस्वामीजी की इस कहानी मे भी है।

इसके रूप विन्यास पर आख्यान पद्धति का पूरा असर है। इसका आरभ, अत, वाक्य विन्यास, शब्द प्रयोग आदि पर आख्यान परपरा की स्पष्ट छाप है। अत म भरत वाक्य है। इस भरत वाक्य को ला परिष्कृत रूप मे प्रेमचद की प्रारभिक कहानियो मे भी देखा जा सकता है। भाषा सस्कृतनिष्ठ है। इसके कारण भी आपत्तिया उठाई जा सकती हैं। लेकिन सस्कृतनिष्ठता तो प्रसाद, यशपाल और अज्ञेय मे भी खूब है।

असली सवाल है कि तब इसका कहानीपन क्या ह? इसके उत्तर मे कहा जा चुका है कि एक केंद्रीय भाव—प्रगाढ प्रेम की सुखात परिणति! किंतु यह तो पुरानी कहानियो म भी मिलता है। इसका उत्तर होगा कि आज की कहानियो मे नही मिलता? किसी थीम को कहानी बनाता है उसका प्रस्तुतीकरण। इसके प्रस्तुतीकरण म साकाक्षता का जो विधान किया गया है वह पुरानी कहानिया से इसे अलग कर देता है। इसकी साकाक्षता सपाट न होकर

नाटकीय है। नाटकीयता का यह तत्त्व इसे आधुनिक कहानियो के मेल म ले आता है। यह नाटकीय तत्व इसकी कथा को कथानक का रूप देता है।

उस काल के परिप्रेक्ष्य म साहित्य को नैतिकता से अलग नही किया जा सकता। साहित्यिक विधा का क्रमागत रूप विकास बदलते हुए ऐतिहासिक सदर्भों मे ही विश्लेषित करना सगत है, यदि उस समय मे प्रकाशित कथा-साहित्य को ठीक ढग से विवेचित किया जाय, तो उपदेशपरकता (डाइडेक्टिसिज्म) उसकी सामान्य विशेषता होगी। जिसमे यह विशेषता न मिले, वह उस काल की सामान्य प्रवत्ति या प्रवत्तियो के बाहर पडेगा।

इस कहानी मे राजा की न्यायप्रियता, मित्र का त्याग, प्रेम की एकनिष्ठता आदि को उपदेशपरकता मे गिना जायेगा। पर पुलिस की क्रूरता, फासी की सजा पर पुनर्विचार समसामयिक परिस्थितियो की देन है, प्रेमी और प्रेमिका का एक ही बिरादरी का मान कर परपरागत रूढि को ही समर्पित किया गया है। इस तरह कहानी म वैचारिक सक्रमणशीलता भी दिखाई देती है।

चरित्रो म पिता को छोडकर शेष आदशवादी हैं—राजा, प्रणयिनी, मारशास्त्री सभी। पिता का यथाथ भी मित्र के आदश को पुष्ट करने के लिए रखा गया है। पिता दोषी पुत्र को त्याग सकता है पर मित्र उसके दोषो को स्वय स्वीकार करके दड भोगने के लिए प्रस्तुत हो सकता है। चरित्रो के चित्रण के निमित्त जो स्थितिया (सिचुएशस) उभारी गयी है, वे बहुत सटीक नही बन पडी है। पूरी कहानी को जैसे पात्रो के नाम मारशास्त्री, परदु खभजन मिश्र आदि, इस किसी हद तक अन्यान्यदेशिक भी बना देते हैं। इसलिए भी चरित्रों का विकास नही हो पाया है लेकिन उस समय इतना ही बहुत था।

जैसा पहले कहा जा चुका है, उस ऐतिहासिक परिदृश्य मे इस तरह की कहानी का बनना ही स्वाभाविक था। हिंदी कहानी-उपन्यासो की ही शुरुआत डाइडेक्टिक दृष्टिकोण मे नही होती, अग्रेजी कथासाहित्य भी ऐसी ही परिस्थितिया से होकर गुजरा है। पहली कहानी की जाच-पडताल के लिए इतिहास के इस सदभ को नजरअदाज नही करना होगा। ऐतिहासिक सदभ को छोड देने पर कहानी की विकास यात्रा को देख पाना सभव नही है।

प्रथम मौलिक कहानी (तीन)   सन् 1900 मे रचित और प्रकाशित

□ सुभाषित रत्न

माधवराव सप्रे

एक दिन एक विद्वान ब्राह्मण किसी धनवान मनुष्य के पास गया और कहन लगा—"महाराज, मैं कुटुबवत्सल पडित हू आजकल भयकर कराल रूपी दुष्काल ने चारो ओर हाहाकार मचा दिया है अन्न महगा हो जाने के कारण अपना चरिताथ नही चला सकता आप श्रीमान है परमेश्वर ने आपको अटूट सपत्ति दी है कृपा करके मुझे अपना आश्रय दीजिए इससे मेरी विद्वत्ता की साथकता होगी और आपका नाम भी होगा बिना आश्रय के पडितो की योग्यता प्रकट नही होती कहा है कि बिना आश्रय न शाभत पण्डिता, वनिता, लता । अर्थात पडित, वनिता, लता बिना आश्रय के शोभा को प्राप्त नही होते, अतएव हे महाराज, मुझे आश्रयदान द, यश सपादन कीजिये "

पडितजी का उक्त प्रस्ताव सुनकर धनिक महाशय ने कहा—"पडितजी सुनो, द्रय-प्राप्ति के लिए हमे कई प्रकार के उद्योग करने पडते है हमारे परिश्रम मे कमाए हुए धन मे तुम्हारा क्या हक है ? हरएक मनुष्य को चाहिए कि स्वपराक्रम से द्रव्याजन करे निरुद्योगी मनुष्य को आश्रय देने से देश मे आलस की वृद्धि होती है क्या तुमन पाश्चात्य लोगो का मत नही सुना ? तुम ता बडे विद्वान हो, फिर दरिद्र की नाइ भीख क्या मागते हो ? जो विद्या तुमने सीखी है, उसके बल पर कुछ राजगार करो नही तो नौकरी करो "

"सच है", पडितजी ने कहा, "महाराज, सच है आप बहुत ठीक कहते है । हम विद्वान् होकर ऐसे दरिद्री क्यो है, इस बात की शका जैसे आपको आई,

वैसी ही मुझे भी आई थी "

इस शका का निवारण करने के लिए एक दिन मैं प्रत्यक्ष लक्ष्मी के पास गया, और उससे पूछा कि है—

पद्मे मूढजने ददासि द्रविण विद्वत्सु कि मत्सरो।

हे लक्ष्मी, तू ऐसे (उस धनिक की ओर अगुरी बताकर) मूढ लोगों को द्रव्य देती है, और विद्वानो को नही देती, तो क्या तू विद्वानो का द्वेष करती है?" इस पर लक्ष्मीजी ने उत्तर दिया कि, हे ब्राह्मण नाह मत्सरिणी न चापि चपला नैवास्ति मूर्खे रति मूर्खेभ्यो द्रविण ददामि नितरा तत्कारण श्रूयताम विद्वान सर्वजनेषु पूजित तनमूर्खस्य नान्या गति

"मैं विद्वानो का मत्सर नही करती, मैं चचल भी नही हू, और न मैं मूर्खों पर कभी प्रेम रखती हू परन्तु मूर्ख मनुष्यो को नितराम मैं द्रव्य दिया करती हू उसका जो कारण है वह सुनो विद्वान लोगो की तो सर्वत्र पूजा हुआ करती है, और मूर्खों को कोई नही पूछता, इसीलिए मैं मूर्खों को द्रव्य दिया करती हू क्योंकि उन्हे दूसरी गति ही नही है '

"महाराज, लक्ष्मीजी का यह उत्तर यथार्थ है आज मुझे उसका अनुभव मिला आप भी इसी मालिका मे हैं, यह बात मुझे विदित न थी "

ऐसा कहकर पडितजी अपने घर चले आये

(2)

जिस धनवान पुरुष की सभा मे उक्त पडित महाशय गये थे, उनके पास चापलूसी करने वाले कई खुशामदी लोग भी बैठे हुए थे

अपने मालिक पर ऐसी मखमली झडन की नौबत देखकर उनमे से एक बोल उठा कि "पण्डितजी, ऐसे सस्कृत श्लोक कहने वाले यहा कई आते हैं क्या आप समझते हैं कि आप बडे सुभाषित वक्ता हैं? कुछ ऐसी बात कहते जिससे हमारे सरकार खुश होते, तो तुम्हारा काम भी हो जाता!"

इस मुहदेखी बातें करने वाले मनुष्य का अब क्या करें, बिचारा सुभाषित का महत्त्व नही जानता, समयोचित भाषण करने से चतुर पुरुष को कितना आनद होता है, यह उसको मालूम नही है, यद्यपि यह धनवान मनुष्य पैसे की गर्मी से अधा हो गया है तो भी उसके मन को शिक्षा का कुछ सस्कार हुआ है अतएव इसके सामने सुभाषित प्रशसा करना अनुचित न होगा ऐसा अपने मन में सोच कर पडितजी ने कहा, "हे महाराज—

इस पृथ्वी मे अन्न, जल और सुभाषित—ये ही तीन मुख्य रत्न हैं मूर्ख लोग हीरा माणिक आदि पत्थर के टुकडो को ही रत्न कहते हैं "

यह सुनकर श्रीमान गृहस्थ अपने मन मे बडा ही लज्जित हुआ

एक विवेचन

देवीप्रसाद वर्मा

माधवराव सप्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिट्टी' को हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी के रूप मे स्वीकार कर लेन के पश्चात भी कई लोग किसी-न-किसी बहाने उस तथ्य को नकारने का प्रयत्न करते दिखाई देते है। इसके मूल मे वही भावना है जो द्विवेदी शुक्ल के जमाने मे थी। जिस नाम को सुनियोजित ढग से नकार दिया गया, फिर आज उस नाम को कैसे और क्यो लाया जाये ? इस पूर्वाग्रह या हठवादिता को क्या कहे ? एक आवश्यक तथ्य के रूप म कि माधवराव सप्रे का कहानी के प्रति क्या आकपण और रुझान था, उसका एक उदाहरण प्रस्तुत करता हू। वे लिखते है

'इस समय हम अपनी पूर्वावस्था के एक शिक्षक का स्मरण हुआ। जब हम बिलासपुर मे अग्रेजी शाला मे पढते थे, उस समय हमारे शिक्षक श्री रघुनाथ राव यद्यपि बडे विद्वान न थे तो भी पूण आत्मसयमी थे और उपद्रवी और आलसी लडको को माग पर लाने मे बडे कुशल थे। वे शारीरिक दड का उपयोग कम करते वरन नीति शिक्षा अधिक करते थे। समय समय पर सुनीति से भरी छोटी-छोटी शिक्षाप्रद कहानिया कहकर विद्यार्थियो का मन अभ्यास म लगाते और उन्ह नीतिवान करने का प्रयत्न करते थे। 'सबसे बुरी चीज़', 'हाथी को हाथ मे लेना', 'दुश्मन' आदि कहानियो का स्मरण हमारे सहपाठियो को अवश्य होगा।' (माधवराव सप्रे—1901)

उपरोक्त उदाहरण प्रमाणित करता है कि 12 वर्षीय छात्र (माधवराव सप्रे) के मन मे निरन्तर कहानी विधा तैर रही थी और उसका प्रभाव उसके परिपक्व लेखन पर भी था और यही कारण था कि वे इस विधा के प्रति सर्वाधिक प्रयत्नशील थे। जब सप्रे जी हाई स्कूल के छात्र के रूप मे लारी स्कूल, रायपुर, म भर्ती हुए, तब वे अपने शिक्षक नदलाल दुबे के सपक मे आये, जिन्होने न केवल सप्रे

जी के मन में हिन्दी के प्रति अगाध श्रद्धा का निर्माण किया अपितु सप्रे जी का महान लेखक के रूप में निरूपित करने में भी सफल हुए।

1895 में उनका उपन्यास 'उद्यान मालती' काफी चर्चित रहा था। उन्होंने 'शाकुन्तल' और 'उत्तर रामचरित' का अनुवाद किया था और ये दोनों ग्रंथ प्रकाशित हुए थे।

यदि कहानी को जीवन की कल्पनामूलक गाथा कहें तब वास्तविकता की प्रतीति तथा प्रामाणिकता के लिए कहानी को अपने जीवन से सपृक्त रखना अनिवार्य शर्त हो जाती है और यही कारण है कि कथाकार उसी दिशा में निरंतर प्रयत्नशील रहता है। सप्रे जी आरंभ से ही सामाजिक अव्यवस्था के विरोधी तथा गरीबों के मसीहा थे। राष्ट्रप्रेम उनके हृदय में कूट-कूट कर भरा था। वे कहानी विधा को सही रूप देने के लिए निरंतर प्रयत्नशील थे। उनकी संक्षिप्त कथायात्रा हम यहां प्रकाशित कर रहे हैं। उनकी प्रकाशित कहानियों की सूची निम्न प्रकार है —

सुभाषित रत्न	जनवरी 1900
सुभाषित रत्न	फरवरी 1900
एक पथिक का स्वप्न	मार्च-अप्रैल 1900
सम्मान किसे कहते हैं	मार्च-अप्रैल 1900
आजम	जून 1900
एक टोकरी भर मिट्टी	अप्रैल 1901
एक व्यंग्य	जून 1901

यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि भारतेंदु युग में कहानी का कोई स्पष्ट स्वरूप नहीं बन पाया था। वह युग अनुवाद का युग था और उससे हटकर जो कहानियां आ रही थीं। उनके मूल स्रोत दो थे

1 संस्कृत कथाएं
2 लोक कथाएं

साथ ही भारतेंदु के पश्चात हिन्दी कहानी पर बंगला की छाप अधिक दिखाई देती है पर सप्रे जी कहानी का भी सही स्वरूप प्रस्तुत करना चाहते थे। मौलिक कहानी देने की दिशा में जो प्रयत्न उन्होंने किया उसका संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार है।

जनवरी सन 1900 में सुभाषित रत्न शीर्षक कहानी छपी, जिसमें संस्कृत श्लोकों का चयन अपने कथानक को प्रमाणित एवं बल देने के लिए किया गया

है। कथानक पूणत स्वतत्र है। इस कहानी का अत कितने मार्मिक ढग से किया गया है।

'इस पृथ्वी मे अन्न, जल और सुभाषित ये तीन ही मुख्य रत्न हैं। मूख लोग हीरा, माणिक आदि पत्थर के टुकडो को रत्न कहते हैं। यह सुनकर श्रीमान गृहस्थ अपने मन मे बहुत लज्जित हुआ।' विषयातर न होगा यदि मैं यह कहू कि सप्रे जी के आदर्श कहानी के मूल्य और सिद्धात वे थे, जिन्हे किसी हद तक हम आज के उपयोगितावाद से जोड सकते हैं।

इसी शीर्षक पर छोटी छोटी कहानिया सस्कृत श्लोको के साथ उन्होने लिखी, जिसे लघुकथा का प्रयास ही कहा जायेगा। पर ये कहानिया सस्कृत श्लोको के आधार पर ऐसी लगती थी कि मानो ये सारी कहानिया श्लोको के आधार पर लिखी गयी है या सस्कृत कथाओ की प्रतिछाया मात्र हैं। सभवत यही कारण था कि सप्रे जी ने कहानी को सुभाषित रत्न' शीर्षक देना बद कर दिया।

उस समय अनुवादो का प्रभाव कहानियो पर काफी अधिक दखने म आता है। लबी कहानिया, जासूसी कहानिया ज्यादा प्रचलित थी। सप्रे जी ने उस दिशा मे भी प्रयत्न किया और माच अप्रैल के अक मे एक पथिक का स्वप्न' नामक कहानी 18 पृष्ठो मे फैली हुई है, तथा उसे तीन भागो मे विभाजित करके लिखा गया है। इस कहानी को ऐतिहासिक कहानी की सज्ञा (कहानी के साथ दी गयी पाद टिप्पणी के आधार पर) दी जा सकती है। पाद टिप्पणी इस प्रकार है

'हिदुस्तान क इतिहास म सुबुक्तगीन नाम का जो अत्यत प्रसिद्ध बादशाह हुआ, वही हमारा गरीब पथिक है। उसके लडके महमूद गजनवी ने भारतवर्ष को मुसलमानो के अधीन किया।' 'एक पथिक का स्वप्न' उस समय के ढर्रे पर चल रही कहानियो की पक्ति म ही आती है। इस अक मे उन्होने निबधनुमा ढग से 'सम्मान किसे कहते है शीर्षक पर देशभक्ति से ओत प्रोत कथानक को प्रस्तुत किया जिसे 'नानी की कहानी' की प्रणाली या सपाटबयानी या किस्सागोई कह सकते है।

जून 1900 म उन्होने गोल्डस्मिथ के आधार पर रची हुई एक शिक्षाप्रद कहानी की घोषणा के साथ 'आजम' शीर्षक कहानी लिखी, परतु सप्रे जी का कथाकार मौलिक कहानी के प्रस्तुतीकरण हेतु निरतर छटपटा रहा था और उनके कथाकार को पूण सतुष्टि सन् 1901 म 'एक टोकरी भर मिटटी लिखने के बाद मिली। इस विधा के प्रति सप्रे जी जागरूक एव प्रयत्नशील थे। सवा साल की कथा यात्रा म उनके विभिन्न प्रयोग उनकी सही कहानी की तलाश को ही प्रमाणित करते है। यह बात भी अपना अलग महत्त्व रखती है कि 'एक टोकरी भर मिटटी लिखने के बाद सप्रे जी ने कोई भी कहानी नही लिखी। इससे हमारे कथन की पुष्टि ही मिलती है कि एक टोकरी भर मिट्टी' हिन्दी की प्रथम

मौलिक कहानी है।

क्योंकि लेखक का (उस कहानी के बाद) कहानी न लिखना 'एक टोकरी भर मिट्टी' को यही प्रमाणित करता है कि इसे उन्होंने परम लक्ष्य की प्राप्ति ही निरूपित किया होगा।

परंतु हम आज भी सप्रे नाम से परहेज कर रहे हैं। मैं हिन्दी आलोचना के कर्णधारों के समक्ष एक उदाहरण प्रस्तुत करता हूं और उनसे अपेक्षा करता हूं कि वे इस ओर ध्यान दें।

मुद्रण कला में पूर्ण विराम के स्थान पर बिंदु का प्रचलन सन् 75-76 की पत्रकारिता क्षेत्र की बहुत बडी उपलब्धि है परंतु माधवराव सप्रे की कहानी 'सुभाषित रत्न' में यह प्रयोग उन्होंने जनवरी सन् 1900 में ही किया था। हो सकता है—सप्रे जी को यह श्रेय (विराम की जगह बिंदु के उपयोग का) भी आगे चलकर न दिया जाय।

स्व० सप्रे जी के डायरी के कुछ पन्ने मुझे मिले हैं, उनमें एक स्थान में लिखा है, काम जो करना है—(यानी सप्रे जी की जागरूकता और साहित्यिक विधाओं के प्रति उनकी आसक्ति तो देखिए)।

इसमें 14 ग्रंथों का अनुवाद करने के नाम उन्होंने लिखे थे, पहला है—भारतेंदु के सभी नाटक। आज एब्सर्डिटी के नाम पर 'अंधेर नगरी' की (सन् 1975 में) चर्चा की जाती है, तब उनकी दृष्टि को सहज ही स्वीकारना पडता है। उन्होंने भारतेन्दु के सिर्फ नाटक ही चुने, कविता निबंध नहीं। वे अनायास स्वांत सुखाय के लिए साहित्य सर्जना या अनुवाद नहीं कर रहे थे, उनका एक निर्दिष्ट मंतव्य था।

तथाकथित इतिहास चाहे माधव राव सप्रे को ओझल करता रहे परंतु आज नहीं तो कल ईमानदारी के साथ यह स्वीकार किया जायेगा कि वह युग वास्तव में सप्रे युग था, जिसे द्विवेदी-युग की संज्ञा दी गई है।

□ उर्दू

आद्य कथाकार सैयद अहमद खां

अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के बानी मबानी और भारतीय मुसलमानो के पुनर्जागरण के प्रेरक सैयद अहमद खा (1817-1898) की गणना उन्नीसवी शताब्दी के क्षितिज पर आविर्भूत होने वाले उन रौशन और गतिमान व्यक्तियो मे की जाती है जिनके कारनामे न केवल साहित्य बल्कि धम, राजनीति, समाज-सुधार और शिक्षा आदि क्षेत्रो मे भी कभी भुलाये नही जा सकते।

सर सयद अहमद खा का जन्म दिल्ली के एक प्रतिष्ठित परिवार म हुआ था। खानदानी परपरा के अनुसार उन्ह अरबी और फारसी की उच्च शिक्षा दिलायी गयी। फिर सरकारी नौकरी कर ली। पहले सरिश्तेदारी की, और फिर सब-जज बन गये।

लिखने-पढने का शौक सैयद अहमद को बचपन ही से था जो सर्विस की कठिनाइयो के बावजूद बराबर बढता गया। 1842 मे उन्होंने 'रिसाला जिला उलकुलूब बजिकुल मेहबूब' लिखा। सन 1844 मे 'रिसाला-तोहफाए-हुस्न' और उसी वष 'रिसाला तेहसील फी जरूस्सकील' पूण किया। सन् 1848 म उनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'आसारुस्सनादीद' प्रकाशित हुई।

1857 की ऐतिहासिक क्रांति मिर्जा गालिब के साथ सैयद अहमद ने भी देखी थी। सैयद अहमद ने मुसलमानो को सलाह दी कि सारा जोर केवल शिक्षा पर केंद्रित करें। इसी उद्देश्य के तहत उन्होंने 1864 में गाजीपुर म एक विद्यालय की नीव रखी और सायटीफिक सोसायटी भी कायम की। 1866 मे 'अलीगढ इस्टीटयूट गजट' नामक अखबार जारी किया। सन् 1867 मे वर्नाक्यूलर विश्वविद्यालय की स्थापना के सबध म वायसराय को एक निवेदन-पत्र भेजा। 1869 मे वे इग्लड गये। वहा उन्होंने पाश्चात्य संस्कृति और शिक्षा-पद्धति का गहन अध्ययन किया। भारत वापसी के पश्चात् उन्होंने 'तहजीबुल अखलाक'

नामक अखबार का प्रकाशन आरभ किया। इस मशहूर अखबार ने मुसलमानो को मानसिक पतन की स्थिति से निकाल कर उनके विचारा मे परिवतन और गति पैदा करने जैसा महत्त्वपूण काय किया।

1876 मे सैयद अहमद ने कुरान की व्याख्या नये ढग से लिखने की शुरुआत की, किंतु वे यह काय पूरा न कर सके। इस व्याख्या ने जहा एक ओर परपरागत विचारधारा वाले मौलवी मुल्लाओ को आपे से बाहर कर दिया था, वहा दूसरी ओर मुस्लिम आलिमो की कई पीढियो को प्रभावित किया और कुरान की आधुनिक व्याख्या के लिए मागदशन का काम भी किया।

सन् 1889 मे एडिनबरा विश्वविद्यालय ने उन्हे 'डाक्टर आफ ला' की सम्मानित उपाधि प्रदान की। उर्दू भाषा और साहित्य को उनका योगदान कभी भुलाया नही जा सकता। उन्हें आधुनिक उर्दू गद्य का बाबा-आदम भी कहा जाता है। कई एव स्थायी ग्रथो के अतिरिक्त उन्होन विभिन्न विषयो पर अगणित लेख भी लिखे। उद्देश्य को उनके लेखन मे प्राथमिकता का दर्जा प्राप्त है। वे बाकायदा कहानीकार तो नही थे, किंतु उर्दू की प्रथम मौलिक कहानी लिखने का श्रेय उन्ही को प्राप्त है। 'गुजरा हुआ जमाना' उनकी पहली और अतिम कहानी है।

प्रथम मौलिक कहानी सन् 1870 मे प्रकाशित

□ गुजरा हुआ जमाना

बरस की अखीर रात को एक बुड्ढा अपने अधेरे घर मे अकेला बैठा है। रात भी डरावनी और अधेरी है। घटा छा रही है। बिजली तडप-तडप कर कडकती है। आधी बडे जोर से चलती है। दिल कापता है और दम घबराता है। बुड्ढा निहायत गमगीन है, मगर उसका गम न अधेरे घर पर है और न अकेलेपन पर और न अधेरी रात और बिजली की कडक और आधी की गूज पर और न बरस की अखीर रात पर। वह अपने पिछले जमाने को याद करता है और जितना ज्यादा याद आता है, उतना ही ज्यादा उसका गम बढता है। हाथो से ढके हुए मुह पर, आखो से आसू भी बहे चले जाते है।

पिछला जमाना उसकी आखा के सामने फिरता है। अपना लडकपन उसको याद आता है, जबकि उसको किसी चीज का गम और किसी बात की फिक्र दिल मे न थी। रुपये-अशरफी के बदले रेवडी और मलाई अच्छी लगती थी। सारा घर मा-बाप, भाई बहन उसको प्यार करते थे। पढने के लिए छुट्टी का वक्त जल्द आने की खुशी मे किताबें बगल मे ले मक्तब मे (पाठशाला) चला जाता था। मक्तब का ख्याल आते ही उसको अपने हम मक्तब (सहपाठी) याद आते थे। वह ज्यादा गमगीन होता था और बेइख्तियार चिल्ला उठता था "हाय वक्त, हाय वक्त! गुजरे हुए जमाने! अफसोस कि मैंने तुझे बहुत देर म याद किया।'

फिर वह अपनी जवानी का जमाना याद करता था। अपना सुर्ख सफेद चेहरा, सुडौल डील, भरा भरा बदन, रसीली आखें मोती की लडी से दात उमग मे भरा हुआ दिल, जजबात इसानी के जोश की खुशी उसे याद आती थी। उस आखो म अधेरा छाये हुए जमाने म मा-बाप जो नसीहत करते थे और नकी

और खुदा परस्ती (धर्मनिष्ठता) की बात बताते थे और यह कहता था कि आह अभी बहुत वक्त है, और बुढ़ापे के आने का कभी ख्याल भी न करता था, उसको याद आता था और अफसोस करता था कि क्या अच्छा होता अगर जब ही मैं उस वक्त का ख्याल करता और खुदा परस्ती और नेकी से अपने दिल को सवारता और मौत के लिए तैयार रहता। आह वक्त गुजर गया! आह वक्त गुजर गया! अब पछताए क्या होता है? अफसोस मैंने आप अपने तई हमेशा यह कहकर बरबाद किया कि अभी वक्त बहुत है।

यह कहकर वह अपनी जगह से उठा और टटोल-टटोल कर खिडकी तक आया। खिडकी खोली देखा कि रात वैसी ही डरावनी है। अधेरी घटा छा रही है। बिजली की कडक से दिल फटा जाता है। हौलनाक आधी चल रही है। दरख्तो के पत्ते उडते है और टहने टूटते है। तब वह चिल्ला कर बोला—'हाय-हाय मेरी गुजरी हुई जिंदगी भी ऐसी ही डरावनी है जैसी यह रात', यह कहकर फिर अपनी जगह आ बैठा।

इतने म उसको अपने मा बाप, भाई-बहन, दोस्त-आश्ना याद आए जिनकी हडिडया कब्रो मे गल कर खाक हो चुकी थी। मा गाया (मानो) मोहब्बत से उसको छाती से लगाये आखो मे आसू भरे खडी है, यह कहती हुई कि हाय बेटा वक्त गुजर गया। बाप का नूरानी चेहरा उसके सामने है और उसमे से यह आवाज आती है कि क्या बेटा हम तुम्हारे ही भले के लिए न कहते थे। भाई-बहन दातो मे उगली दिये हुए खामोश है और उनकी आखो से आसुओ की लडी जारी है। दोस्त आश्ना सब गमगीन खडे हैं और कहते है कि अब हम क्या कर सकते हैं।

ऐसी हालत म उसको अपनी वह बातें याद आती थी जो उसने निहायत बेपर्वाई और बेमुरव्वती और कजखुल्की (दु शीलता) से अपने मा-बाप, भाई-बहन, दोस्त आश्ना के साथ बर्ती थी। मा को रजीद रखना, बाप को नाराज करना, भाई-बहन से बेमुरव्वत रहना, दोस्त-आश्ना के साथ हमदर्दी न करना याद आता था। और उस पर उन गली हड्डियो मे से ऐसी मोहब्बत का देखना उसके दिल को पाश-पाश करता था। उसका दम छाती मे घुट जाता था और वह कह कर चिल्ला उठता था कि हाय वक्त निकल गया। हाय, वक्त निकल गया। अब क्याकर उसका बदला हो!

वह घबरा कर फिर खिडकी की तरफ दौडा और टकराता-लडखडाता खिडकी तक पहुचा उसको खोला और देखा कि हवा कुछ ठहरी है और बिजली की कडक कुछ थमी है पर रात वैसी ही अधेरी है। उसकी घबराहट कुछ कम हुई और फिर अपनी जगह आ बैठा।

इतने में उसको अपना अधेडपन याद आया जिसमे कि न वह जवानी रही

थी और न वह जवानी का जोबन, न वह दिल रहा था और न दिल के वलवलो का जोश। उसने अपनी उस नेकी के जमाने को याद किया जिसमे वह बनिसबत वदी (बुराई) के, नेकी की तरफ ज्यादा माईल था। वह अपना रोजा रखना, नमाजें पढनी हज करना, जकात देनी, भूखा को खिलाना, मस्जिदें और कुए बनवाना याद कर अपने दिल को तसल्ली देता था। फकीरो और दरवेशो की जिनकी खिदमत की थी। अपने पीरो (धर्मगुरुओ) की जिनसे बैअत (हाथ चूमकर पीर का मुरीद या अनुयायी बनना) की थी। अपनी मदद को पुकारता था मगर दिल की बे-करारी नही जाती थी, वह देखता था कि उसके जाती-आ माल (निजी आचार व्यवहार) का उसी तक खातिमा (अंत) है। भूखे फिर वैसे ही भूखे है। मस्जिदें टूट कर या तो खडहर हैं और या फिर वसे ही जगल है। कुए अधे पड़े हैं। न पीर और न फकीर कोई उसकी अवाज नही सुनता और न मदद करता है। उसका दिल फिर घबराता है और सोचता है कि मैंने क्या किया जो तमाम फानी (नश्वर) चीजो पर दिल लगाया। यह पिछली समझ पहले ही क्या न सूझी। जब कुछ बस नही चलता और फिर यह कहकर चिल्ला उठा—हाय वक्त, हाय वक्त ! मैंने तुझको क्यो खो दिया ?

वह घबरा कर फिर खिडकी की तरफ दौडा। उसके पट खोले तो देखा कि आसमान साफ है। आधी थम गयी है। घटा खुल गयी है। तारे निकल आए है। उनकी चमक से अधेरा भी कुछ कम हो गया है। वह दिल बहलाने के लिए तारो-भरी रात को देख रहा था कि यकायक उसको आसमान के बीच म एक रोशनी दिखाई दी और उसम एक खूबसूरत दुल्हन नजर आयी। उसने टकटकी बाधकर उसे देखना शुरू किया। ज्यू ज्यू वह उसे देखता था, वह करीब होती जाती थी, यहा तक कि वह उसके बहुत पास आ गयी। वह उसके हुस्नोजमाल (रूप और सौदय) को देखकर हैरान हो गया और निहायत पाक दिल और मोहब्बत के लहजे से पूछा कि तुम कौन हो ? वह बोली कि मैं हमेशा जिदा रहने वाली नेकी हू। उसने पूछा कि तुम्हारी तस्खीर (वशीभूत करना) का भी कोई अमल (जप) है ? वह बोली—हा है, निहायत आसान पर बहुत मुश्किल। जो कोई खुदा के फज उस बदवी (गवार) की तरह—जिसने कहा कि वल्लाह ला अजीदा ला अकस (अल्लाह की कसम इसमे न तो कोई अधिकता होगी और न न्यूनता) अदा कर कर इसान की भलाई और उसकी बेहतरी मे सई (प्रयत्न) करे उसकी मैं मुसख्खर (विजित) होती हू। दुनिया मे कोई चीज हमेशा रहनेवाली नही है। इसान ही ऐसी चीज है जो आखीर तक रहेगा। पर जो भलाई इसान की बेहतरी के लिए की जाती है, वही नस्ल-दर नस्ल अखीर तक चली आती है। नमाज, रोजा, हज, जकात इसी तक खत्म हो जाता है। उसकी मौत इन सब चीजो को खत्म कर देती है। माद्दी (भौतिक) चीजें भी चद रोज म फना हो

जाती है मगर इंसान की भलाई अखीर तक जारी रहती है। मैं तमाम इन्साना की रूह हू जो मुझको तस्खीर करना (जीतना) चाहे, इसान की भलाई म कोशिश कर। कम-स-कम अपनी कौम का भलाई म तो दिलो-जाना माल से साई (प्रयत्नशील) हो। यह कहकर वह दुल्हन गायब हो गयी और बुड्ढा फिर अपनी जगह आ बैठा।

अब फिर उसने अपना पिछला जमाना याद किया और देखा कि उसने अपनी पचपन बरस की उम्र म कोई काम भी इसान की भलाई और कम-स-कम अपनी कौमी भलाई का नही किया था। उसके तमाम काम जाती गरज पर मब्नी (निभर) थे। नेक काम जो किये थे, सवाब (पुण्य) के लालच और गोया खुदा को रिश्वत देने की नजर से किये थे। खास कौमी भलाई की खालिस नीयत (सकल्प) से कुछ भी नही किया था।

अपना हाल सोचकर वह उस दिल फरेब दुल्हन के मिलने स मायूस हुआ। अपना अखीर जमाना देखकर आयदा करने की भी कुछ उम्मीद न पायी, तब तो निहायत मायूसी की हालत मे बे-करार होकर चिल्ला उठा—हाय वक्त हाय वक्त क्या फिर तुझे मैं बुला सकता हू? हाय मैं दस हजार दीनारें (सोने की मुद्राए) देता अगर वक्त फिर आता और मैं जवान हो सकता—यह कहकर उसने एक सद आह भरी और बेहोश हो गया।

थोडी देर न गुजरी थी कि उसके कानो मे मीठी-मीठी बाता की आवाज आने लगी। उसकी प्यारी मा उसके पास आ खडी हुई। उसको गले लगाकर उसकी चुम्बी ली। उसका बाप उसको दिखाई दिया। छोटे छोटे भाई-बहन उसके गिर्द आ खडे हुए। मा ने कहा कि बेटा क्या बरस-बरस के दिन रोता है? क्यों तू बेकरार है? किसलिए तेरी हिचकी बध गयी है। उठ मुह हाथ धो, कपडे पहन, नौरोज की खुशी मना। तेरे भाई-बहन तेरे मुतजिर खडे हैं।

तब वह लडका जागा और समझा कि मैंने ख्वाब देखा और ख्वाब मे बुड्ढा हो गया था। उसने अपना सारा ख्वाब अपनी मा से कहा। उसने सुनकर उसको जवाब दिया कि बेटा बस तू एसा मत कर जैसा कि उस पशेमान (पश्चात्तापी) बुड्ढे ने किया, बल्कि ऐसा कर जैसा तेरी दुल्हन ने तुझसे कहा।

यह सुनकर वह लडका पलग पर से कूद पडा और निहायत खुशी से पुकारा कि ओ यही मेरी जिदगी का पहला दिन है मैं कभी उस बुड्ढे की तरह न पछताऊगा और जरूर उस दुल्हन को ब्याहूगा जिसने ऐसा खूबसूरत अपना चेहरा मुझको दिखलाया और हमेशा जिंदा रहने वाली नकी अपना नाम बतलाया। ओ, खुदा ओ, खुदा, तू मेरी मदद कर। आमीन!

ऐ मेरे प्यारे नौजवान हम वतनो! और ए मेरी कौम के बच्चो, अपनी कौम की भलाई पर कोशिश करो, ताकि अखीर वक्त म उस बुड्ढे की तरह न पछताओ। हमारा जमाना तो अखीर है। अब खुदा से यह दुआ है कि कोई नौजवान उठे अपनी कौम की भलाई मे कोशिश करे। आमीन!

एक विवेचन

सादिक़

उर्दू कहानी अब दुनिया की समुन्नत भाषाओं की कहानियों से आंख मिलाने योग्य हो गयी है। वह देश और काल की सीमाएं लांघ कर बहुत आगे निकल चुकी है। उसे भारत की किसी भी भाषा के साहित्य के सम्मुख गर्व के साथ प्रस्तुत किया जा सकता है। उर्दू कहानी भारत की अन्य भाषाओं की कहानियों से बहुत आगे है वगैरह वगैरह जैसी बातें कह लिखकर बगलें बजाने वाले खुशफहमों की पंक्तियों में जो चेहरे सबसे आगे दिखाई देते हैं, उनमें मेरे सहव्यवसायी प्राध्यापकों की संख्या अधिक है। सचमुच के आलोचकों के अफसोसनाक अभाव का लाभ उठा कर रातों रात आलोचक बन जाने की सुविधा इन्हीं लोगों ने प्राप्त की है।

यह कोई ढकी छुपी हकीकत नहीं कि 1947 के बाद से आज तक भारत में प्रकाशित होनेवाली उर्दू कहानी आलोचना संबंधी प्रमाणित पुस्तकों की संख्या अधिक नहीं। यह ऐसी बात है जो जबान पर आती है तो मुंह का मजा बिगाड़ देती है। शायरी के विभिन्न विषयों पर अलबत्ता इतना कुछ लिखा गया है और लिखा जा रहा है कि व्यवसायी प्रकाशकों ने कहानी और कविता प्रकाशन का काम शायरों और कहानीकारों के कंधों पर छोड़ दिया है। अब वे बेचारे अपने-अपने प्रांतों की उर्दू अकादमियों से आर्थिक सहायता लेकर अपनी पुस्तकें छपवायें या छपवाने के पश्चात उनसे पुरस्कार मिलने की आस लगायें, तो इसमें क्या बुराई है?

मैं कह यह रहा था कि उर्दू में कहानी की आलोचना बहुत कम हुई है और शायरी की बहुत ज्यादा। परिणामत मौका पाकर कई एक आलोचकों ने मुनादी करा दी कि कहानी साहित्य की महत्वपूर्ण विधा नहीं। शायरी की तुलना में उसका स्तर बहुत निम्न है। उसका उपयोग प्रचार प्रसार और विज्ञापन इत्यादि

के लिए ही उपयुक्त हो सकता है। कहानी का भविष्य अंधकारमय है और यह भी कि नया दौर अभी तक कोई प्रेमचंद पैदा नहीं कर सका है।

कहानी पर लगाये गये यह सारे आरोप जब सामने आये तो कहानी अपनी पैरवी के लिए कोई आलोचक उपलब्ध न कर सकी। अन्ततः कहानी का समर्थन करने के लिए बेचारे कहानीकारों को ही मैदान में आना पड़ा। उत्तर में कहानी के पक्ष में उड़नछू किस्म के कुछ पत्र छप गये और अब फिर सन्नाटा है। आज की स्थिति कुछ ऐसी ही है कि शोधकर्ताओं से मीर के दीवानों की तादाद और गालिब की टोपी का साइज मालूम कर लेने की आशा तो की जा सकती है, किंतु कहानी-क्षेत्र में सजीदगी से कोई काम अंजाम देने की नहीं।

बहुत से विवादास्पद आलोचकों ने उर्दू कहानी को पश्चिमी साहित्य की देन करार दिया है। उनका कहना है कि उर्दू में उपन्यास और कहानी की विधाएं अंग्रेजी भाषा द्वारा पश्चिम से आयी हैं। कहानी लिखने की कला हमने पश्चिम से सीखी है। बहुत से आलोचनात्मक ग्रंथ यहां तक कि उर्दू साहित्य के कतिपय इतिहास भी, इसी बात की पुष्टि करते हैं। इस प्रकार उर्दू कहानी की शुरुआत के संबंध में एक ऐसा मजबूत झूठ निर्माण हो गया है जिसे तोड़ने के लिए छोटे छोटे सत्य कुछ और अपर्याप्त लगते हैं। यदि कहानी लिखना हमने पश्चिम से सीखा है तो फिर लगे हाथों यह धारणा भी कर लेना चाहिए कि जीवन जीना भी हमने पश्चिम से सीखा है और जीवन के अनुभव भी हमें पश्चिम ही ने दिये हैं। हमारे अपने देश की साहित्यिक परम्पराएं तो जैसे बांझ ही थीं।

उर्दू कहानी को पुरानी विधा साबित करने की कोशिश में दो एक आवाजें ऐसी भी बुलंद की गयी कि इंशाअल्लाह खां द्वारा लिखी गयी 'रानी केतकी की कहानी' उर्दू की प्रथम मौलिक कहानी है और इंशाअल्लाह खां आद्य-कथाकार। किंतु इस बात में कितना वजन है, कहने की जरूरत नहीं। वैसे 'रानी केतकी की कहानी' के अतिरिक्त इंशा की ऐसी ही एक और रचना भी है, यह बात बहुत कम लोगों को ज्ञात है। 'रानी केतकी की कहानी' में इंशा ने दावा किया था

यह वह कहानी है जिसमें हिन्दी छुट
किसी और बोली का मेल है और पुट।

और अरबी फारसी शब्दों के उपयोग के बिना कहानी लिखकर उन्होंने अपने इस दावे को पूरा भी कर दिखाया था। उनकी दूसरी रचना का शीर्षक 'सिल्के-गौहर' है। इसकी एकमात्र पाण्डुलिपि रामपुर की रजा लायब्रेरी में सुरक्षित है। 'सिल्के-गौहर' में इंशा ने एक दूसरा ही प्रयोग किया है। यह पूरी रचना बेनुक्त है अर्थात इसमें नुक्ते (बिंदु) वाले अक्षरों का उपयोग नहीं किया गया है। उर्दू अक्षरमाला में नुक्तों को बड़ा महत्व प्राप्त है। बगैर नुक्तोंवाले अक्षरों की संख्या

उदू में कम है। फिर भी 'सिल्के गौहर' लिखकर इन्शाअल्लाह खा ने बेनुक्त किस्सा लिखने का सफल प्रयोग किया है। डा० ज्ञानचद जैन ने अपनी पुस्तक 'उदू की नसरी दास्तानें' में इसका जो उल्लेख किया है, उसके आधार पर बडी सरलता के साथ यह अन्दाजा कायम किया जा सकता है कि यह दास्तान के रग का किस्सा है जो कहानी की कसौटी पर खरा नही उतर सकता।

मौलाना मोहम्मद हुसैन आजाद (1836 1910) के 'नैरगे-ख्याल' की रचनाओं को मालिक राम ने उदू में कहानी के सर्वप्रथम चिह्न कहा है। वस्तुत यह कहानी टाइप लेख है जो 'अजुमन मुफीदे आम' की मासिक पत्रिका 'रिसाला' मे 1875 से 1877 तक प्रकाशित हुए थे। किंतु 'नैरगे ख्याल' के करीब-करीब सारे लेख अपनी रचनात्मक श्रेष्ठता के बावजूद मौलिक नही है। दूसरी बात यह कि वे रूपक है, कहानी नही।

मौलवी नजीर अहमद के किस्सो में उदू की आरभिक कहानियो की झलक देखने और दिखाने की कोशिश भी एक असफल प्रयास से अधिक महत्व की चीज नहीं। उन्हें कहानी का नाम देना उन पर एक आरोप ही होगा। वह किस्से बाकायदा उपन्यास भी नही, अलबत्ता किसी हद तक उपन्यास के करीब जरूर हैं। मोहम्मद अहसन फारुकी ने उन्हें तमसीली अफसाना (रूपकात्मक-कथाओ) की सज्ञा देकर बडी सफाई के साथ उपन्यास के दायरे से निकाल बाहर किया है। हकीकत यह है कि उन्हें उपन्यास के दायरे में तो रखा जा सकता है, किंतु कहानी के दायरे मे कदापि नहीं रखा जा सकता।

पडित रतननाथ सरशार का लोकप्रिय और विख्यात 'फसाना ए-आजाद' अनेक कहानियो की कडिया मिलाकर बनाया हुआ एक उपन्यास है जो नवल किशोर प्रेस, लखनऊ के 'अवध अखबार' में दिसबर 1878 से दिसबर 1879 तक धारावाहिक रूप से प्रकाशित हुआ था। सन 1880 मे इसका प्रथम सस्करण पुस्तक रूप मे प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास की बहुत सी कडिया ऐसी हैं जिन्हें अलग-अलग करके कहानिया साबित करना कोई कठिन काम न होगा। यह बात भी अपनी जगह गलत नही कि प्रेमचद को कहानी लिखने की प्रेरणा 'फसाना-ए-आजाद' द्वारा ही मिली थी। स्वय प्रेमचद ने इस बात का इकरार किया है। किंतु 'फसाना ए-आजाद' उपन्यास है। उसके कुछ हिस्सो को अलग करके कहानी का नाम देना उचित नही।

मौलाना राशिदुल खैरी, सुल्तान हैदर जोश सज्जाद-हैदर यलदरम और प्रेमचद—ये चारो नाम ऐसे है जो उदू के आद्य कथाकार के तौर पर लिये जाते हैं। किंतु अधिकतर आलोचको ने प्रेमचद ही को उदू का आद्य कथाकार माना है। प्रेमचद की कहानियो का पहला सग्रह 'सोजे वतन' जून 1908 में प्रकाशित हुआ था। उस समय वे नवाब राय नाम से कहानिया लिखते थे। 'सोजे वतन' में कुल मिला

कर पाच कहानिया थी जो मुशी दयानारायण निगम की पत्रिका 'ज़म (कानपुर) म 1903 स 1908 के बीच प्रकाशित हो चुकी थी। यदि 'सोज़ व ही की कहानिया के आधार पर प्रेमचद को उदू का आद्य कथाकार माना जा स है तो फिर इशाअल्लाह खा का आद्य कथाकार कहने वाला की बात भी सही मा होगी क्योकि 'साजे वतन' की सारी कहानिया पर दास्तानी रग और अ छाया हुआ है। वस्तुत प्रेमचद ने पहली कहानी तो बहुत बाद मे (19 लिखी है।

उपर्युक्त समस्त लेखको मे इशाअल्लाह खा (1756-1818) सब से पुर नाम है लेकिन उनकी दोनो रचनाए 'रानी केतकी की कहानी' और 'सिल्के गौ कहानिया करार नही दी जा सकती, क्योकि वह सक्षिप्त दास्तानें हैं।

अब तक मिली कहानिया के आधार पर उर्दू की पहली मौलिक कह 'गुज़रा हुआ ज़माना' है, जिसके लेखक सर सैयद अहमद खा हैं। यह कह उनके प्रसिद्ध अखबार 'तहज़ीबुल-अखलाख' म—सफर सन् 1290 हिजरी (लग सन 1870 ई०) के अक मे प्रकाशित हुई थी। यह न तो दास्तानी रग की रच है और न ही किस्सा या रूपक। अपनी अपरिपक्वता और यूनता के बाव 'गुज़रा हुआ ज़माना' उर्दू की प्रथम मौलिक कहानी है। वैसे इसे कहानी की स देते हुए थोडी हिचकिचाहट भी होती है क्योकि उर्दू कहानी ने जिस तीव्र ग से तरक्की है और आज हम उस जिस मजिल पर देखते हैं, 'गुज़रा हुआ ज़मान कहानी उससे बहुत पीछे नजर आती है। उसके और आज की कहानी के बी करीब-करीब एक सदी का अतर है। इस एक सदी मे कहानी की भाषा अ परिभाषा, स्वरूप और तकनीक सभी, प्रयोग और परिवतन से गुजर कर बहु कुछ बदल चुके हैं, सब कुछ बदल गया है। ज़माना ही बदल गया है। फिर 'गुज़रा हुआ ज़माना म बीज के रूप मे वह तत्व देखे जा सकते हैं, जो उसे पद्य व अन्य विधाओ से अलग करके कहानी करार देते हैं।

यह हकीकत भी दिलचस्पी मे खाली नही कि सैयद अहमद खा का उल्ले एक कहानीकार के रूप मे कभी और कही नही मिलता, क्योकि 'गुज़रा हु ज़माना' उनकी पहली और अन्तिम कहानी है। सभवत इसी उर्दू कहानी पहली बार 'एक आम इसान' कहानी का प्रमुख पात्र बना है वैसे वह एक बाल है।

सैयद अहमद खा से पूव उदू गद्य इतना सरल और तरल न था। अलकारि भाषा लिखना उस समय का लोकप्रिय फैशन था। सैयद अहमद खा ने उस तिलि स्म को तोडकर सीधी-सादी भाषा लिखने की एक नयी परपरा कायम की। मी अम्मन दिल्ली वाल की 'बागोबहार' और मिर्जा गालिब क पत्रा क बाद सयद अहमद की भाषा उदू के गद्य साहित्य मे बडा महत्व रखती है। उन्होंने उदू गद्य

को न केवल महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों से अवगत कराया, बल्कि उसे ऐतिहा
भी प्रदान किया।

'गुजरा हुआ जमाना' की भाषा सरल और स्पष्ट है। रोजमर्रा औ
करों का उपयोग अनावश्यक नहीं बल्कि उचित है। कहानी उसी स
प्रभावशाली भाषा में लिखी गयी है जिसकी बुनियाद पर सयद अहमद
निक उर्दू गद्य का बाबा-आदम कहा जाता है।

सैयद अहमद खां सर्वप्रथम एक सुधारक की हैसियत रखते हैं। 'त
असलाक' में प्रकाशित होनेवाले उनके समस्त लेख एक विशेष उद्देश्य
लिखे गये थे। प्रस्तुत कहानी में भी सुधारवादी सयद अहमद को अप
रूप में आसानी से साथ देखा जा सकता है। साफ शब्दों में यह कि
'गुजरा हुआ जमाना' पर उद्देश्य इतना अधिक छाया हुआ है कि वह
उस उद्देश्य के बोझ तले दबकर पूरी तरह उभर नहीं सकी है।

□ पजाबी

आद्य कथाकार सतसिंह सेखो

सेखो का जन्म चक न० 70, जिला लायलपुर (अब पाकिस्तान) मे श्री हुक्म सिंह के घर हुआ। लायलपुर मे इनके पिता खेती का काम करते थे। इन्होंने खालसा कालेज, अमृतसर, मे अर्थशास्त्र और अंग्रेजी भाषा मे एम ए किया और सन 1931 मे उसी कालेज मे प्राध्यापक नियुक्त हो गए। 1936 मे कालेज मे हडताल होने की वजह से नौकरी छोडनी पडी और नौकरी से विमुक्त होकर लाहौर से 'नादन रिव्यू' नामक पत्रिका निकाली। 1940 मे फिर खालसा कालेज, अमृतसर, की प्राध्यापकी की—यानी नौकरी स्वीकार कर ली। सन 43 मे ठेकेदारी के पेशे का प्रयोग किया जो असफल रहा और घाटे का सौदा सिद्ध हुआ। 1948 मे फिर खालसा कालेज, अमृतसर, की नौकरी की। फिर 1952 के चुनावो मे मार्क्सवादी पार्टी की ओर से खडे हुए, परतु पैसे की कमी के कारण जीत न सके। तत्पश्चात् कुछ समय तक 'गुरु सर सुधार कालेज' मे प्राध्यापक रहने के बाद, पहले वह माता गूजरी कालेज, सरहिंद, के प्रिंसिपल और फिर कुछ समय के लिए गुरु गोबिंद सिंह रिपब्लिक कालेज, जडियाला (जालधर) के प्रिंसिपल रहे। उनका विचार है कि वह अपने कालेज को ही एक विश्वविद्यालय और स्वय को उपकुलपति समझते रहे हैं। यदि वह मार्क्सवादी न होते, तो अवश्य ही किसी विश्वविद्यालय के उपकुलपति बन चुके होते।

आजकल सतसिंह सेखो अपने गाव दाखा (जिला लुधियाना) मे फार्मिंग करते हैं और साथ मे पजाबी विश्वविद्यालय पटियाला, के लिए अर्थशास्त्र-पजाबी शब्दकोश तैयार करवा रहे हैं।

सतसिंह सेखो शुरू-शुरू मे अंग्रेजी मे कविता और कहानी लिखते थे। उनकी कुछ कविताए इग्लैड की पत्रिकाओ मे भी प्रकाशित हुई है।

श्री सेखो पजाबी के प्रमुख कहानी लेखक, कवि, नाटककार, उपन्यासकार, निबंध लेखक और आलोचक हैं। उन्होंने ही पजाबी आलोचना को मार्क्सवादी दिशा दी है। लेनिन के जीवन पर उन्होंने जो नाटक लिखा—'मित्र प्यारा'—उस पर उन्हें साहित्य अकादमी का 5000 रु० का पुरस्कार प्रदान किया गया।

सतसिंह सेखो के पक्ष और विरोध में जितना कुछ लिखा गया है, और किसी लेखक के बारे में, उसके जीवन काल में, इतना कुछ कभी नहीं लिखा गया।

सतसिंह सेखो सागर की तरह विशाल हैं, जो अपनी मर्यादा नहीं छोड़ता।

प्रथम मौलिक कहानी
सन् 1935 मे लिखित और 1936 मे प्रकाशित

□ भत्ता

नामो शायद रात के समय देर तक गुडिया के सूटो की चिंता म डूब रही थी, शायद पश्चिम की ठडी वायु के कारण अथवा किसी और वजह से। दूसरे दिन वह सुबह सूय उदय होने तक चारपाई से न उठी। मा उनकी कुछ करारे स्वभाव की थी, उसने आवाजो से छत फाडनी शुरू कर दी थी।

—अरी राड! अब और क्या तू बन की तरह बढेगी। बारह वर्षों की हो गयी है, इतनी बडी है, और अब तक सोई पडी है। मैं भी जगाती नही आज रोटी तून ले जानी है। जब जी चाह ले जाना। वहा तेरा बाप ही तुझे ठीक करगा।

यदि नामो बीमार भी होती तो भी मा के इस 'न जगाने' से उठ बठती, इसलिए वह क्षण मे ही बिछौना और चादर लपेट कर कधे पर रखती हुई नीचे उतर आयी। पानी का गिलास भर कर हाथ-मुह धोया और अपनी रोटी तथा दही की कटोरी निकाल कर खाने लगी। उधर मा भी अपना 'न जगान' का प्रण पूरा करती रही और नामो के खसम (पति) और भाइयो को पीटती रही। पडोस से पीतो की माता न भी आवाज दी—नामा, अरी बेटी! हमारी पीतो को भी रोटी दने के लिए साथ ले जाना।

नामो न शीघ्र ही हाजरी खत्म कर ली और फिर उधर मुडकर देखा। मा न राटिया, दही और प्याज कपडे मे बाधकर लस्सी की मटकी पर रख दिये थे। नामो ने उन्हें उठाया और चुपचाप घर से चल दी। रास्ते म पीतो को भी बुला लिया और दानो सरिया खेता मे रोटी देन चल पडी।

उधर हरनाम सिंह हल रोक कर गाव की ओर देख रहा है। उस यह भी डर है कि उसक साथ वाल हलवाहक बापू का पता न चल जाए कि पीछे वाला हल

खडा हो गया है। हरनामसिंह की दृष्टि थक गयी है। उसी समय, क्षण भर मे ही ईख के पीछे से लबे लबे कदम उठाती और थिरकती हुई एक बहू, जिसने घी-कपूरी घाघरा पहना हुआ और सिर पर गुलाबी दुपट्टा ओढा हुआ था, भत्ता उठाये आ रही थी।

—वह मेरी रोटी आती है, मन पुलकित होकर कहता है। यह केवल भत्ता ही नही बल्कि प्रात काल हल चलाने के कारण उठ जाने की वजह से, प्राप्त न हो सकी प्रेम की अतिम किस्त ब्याज सहित साथ लिये आ रही है। आखो मे से एक झनझनाहट-सी शुरू होकर कमर मे, कूल्हो मे से गुजरती हुई जाघो मे उतरती है और फिर ऊपर को चढ जाती है। दिल म चटक सी होती है। हलवाहक उधर से मुख मोडकर बैल को पराणी (पशुओ को हाकनेवाली छडी) मारता और ललकारता है। सिपाड (हल द्वारा बनाई गयी दरार) बहुत जल्दी आ जाती है और उसी जगह आकर वही अवस्था हो जाती है। दूसरा सिपाड निकाल कर जब वह फिर उसी जगह आता है तो गुलाब दुपट्टे और घी-कपूरी घाघरे वाली सुदरी के चेहर की रश्मि आखा से टकराती है। आखें विद्युत से भी अधिक तेजी से वहा पहुचती हैं और सुदरी क्षण म ही घूघट निकाल लेती है।

—अरे, यह ता वत की बहू है। दिल धरती मे धसता हुआ चला जाता है।

फिर वही पुरानी रफ्तार, शरीर की लचक गायब, पाच छ सिपाड निकाल कर बेचारा उत्सुक आखा को फिर उस ईख के खेत की नुक्कड की ओर जाने की आज्ञा दे देता है। बैल आहिस्ता चलने लगते है। क्षण-भर देखने के बाद निराश होकर फिर आखा और दिल को मोड लेता है और खीझकर बैल को छडी मारता है। ललकार की जगह एक सुस्त-सी चिटकारी ही निकलती है। दिल करारा करके दो-तीन सिपाड और निकाले तो फिर दिल आखो को ईख की उसी नुक्कड पर ले गया कि अबकी जरूर इच्छा पूरी हो जाएगी। क्षण भर बाद जब आखें कही और इधर उधर झाकने के लिए तैयार हो रही होती हैं तो ईख की नुक्कड से क्षण मे ही एक लबी चमकदार, पतली (कृशकाया) ने मोड काटा। मगर, उसका घाघरा घी कपूरी नही बल्कि किसी और ही रग का है। (वह पत्नी के रोज के घाघरे का घी कपूरी रग और दुपट्टे का गुलाबी रग ही जानता है) शायद घाघरा बदल लिया हो परतु आशा का सूत्र टूट जाता है जब दो गुडियो जैसी लडकिया साथ ही, उसके पीछे आती हुई दिखाई देती है।

—यह तो नामो है, एक जबडे ने तो रोटी खाने की सलाह ही हटा दी है। मा ने काम के लालच की वजह से नही आने दिया, नामो को ही भेज दिया।

क्या कर सकता था ? बैल को एक छड और मार दी जो उसके कूल्हे पर लगी। वह कुछ उछल गया और सिपाड टेढा हो गया 'दरार पडी रह जाए।' कहकर सिपाड के पीछे चल पडा।

आठ-दस सिपाड निकल चुके। दिल की कामना पूरी नही हुई तो पट क्यो खमियाजा भुगते ? बेचारे ने फिर रास्ते की ओर देखा। घाघरे वाली तो साथ के खेत की ओर चली गयी। नामो और पीतो पहुच गयी।

—भाई, रोटी खा ले, नामो ने मधुर आवाज म पुकारा।

—खा लेते हैं, यह सिपाड निकाल लें, हरनाम सिंह ने भर्राए गले से उत्तर दिया।

सिपाड आ गया और पिता-पुत्र हल छोडकर रोटी खाने के लिए बठ गए। हरनाम सिंह को तो हाथ धोने की भी बात न याद रही। पिता भी जानता है कि बहू के न आने से लडका कुछ सुस्त पड गया है।

—नामो पुत्तर, अपनी भाभी का रोटी देकर भेजा कर। तू लस्सी बहुत कम लाती है। बडी मटकी उठा नहीं सकती, यह लस्सी तो हम अभी पी लेंगे।

—नही बापू ! भाभी आज दाने पीसती थी। आटा खत्म हो गया था। इसलिए नही आयी।

—दाने ! दाने हम चक्की पर पीस देंगे। अपनी मा से कहना, चने सूखने के लिए रख छोडे, हम आज दान पीस देंगे ! हरनाम सिंह ! आज हल चाहे जरा जल्दी ही छोड दें, जाकर दाने पीसने हैं।

हरनाम सिंह को आज पिता और सब दिनो की अपेक्षा अच्छा लगा। उस दिन भी अच्छा लगा था जिस दिन उसकी शादी थी और पिता ने कपडो के लिए तीस रुपये दे दिये थे। मगर वह 'अच्छा' कहकर चुप कर गया था। उसके दिल में कुछ चुभन की तरह चला गया था जो मा के विरुद्ध सब बातो की गाठ खोलने लग पडा था।

—बापू, आप रोटी खा लीजिए। हम आगे जाकर पीतो की रोटी दे आए। नामो क्षण भर बाद बोली।

नामो के पिता को पीतो बहुत अच्छी लगती थी—पीतो तेरी भाभी नही रोटी लेकर जाती ? उसने पीतो को प्यार से पूछा।

पीतो को पता नही था कि उसकी भाभी रोटी देने के लिए खेतो मे क्यो नहीं आया करती थी। उसका भाई कालेज मे पढता था और पिता ही मजदूरो के साथ हल चलाता था। उनकी रोटी पीतो की मा ले जाती थी अथवा जिस दिन पिता हल चलान के लिए न जाए वह ले जाता था और कभी-कभी पीतो की भी बारी आ जाती थी। नामो के पिता को पता था कि यदि लडका हलवाहक न हो तो बहू रोटी लेकर नही जाती मगर उसने यह प्रश्न केवल पीतो के साथ बातें करने के लिए ही किया था।

—पता नही, चाचा, पीतो ने पहले से भी अधिक मिठास के साथ उत्तर दिया। पिता पुत्र दोनो मुसकरा दिये मगर नामो और पीतो, दोनो को, अतर्मन

की बात का पता न चला।

—पीतो, तेरी भाभी पढे हुए की बहू है, वह रोटी लेकर नही जाती।

—नही, मेरी मा ने कभी उसे कहा ही नही। पीतो ने अपनी भाभी के पक्ष मे बात की, मगर फिर चाचा की बुद्धि के सामने अपनी बुद्धि को थकाकर कहा, पता नही, इस तरह ही होगा।

पिता और पुत्र दोनो हस दिये और नामो और पीतो भी मुसकराने लगी। हरनाम सिंह आदि तो रोटी खाते रहे और नामो और पीतो, पीतो की जागीर की ओर चल दी।

खेत भर की दूरी पर जाकर पीतो ने नामो से पूछा—अरी, तेरी भाभी रोटी लेकर क्यो नही आती?

नामो को भी पता नही था, मगर उसने एक उपाय सोचा—पीतो, कल को तुम अपनी भाभी को साथ लेकर रोटी देने के लिए आना। मैं भी अपनी भाभी के साथ आऊगी। अगर तुम्हारी भाभी न आई तो तुम पूछना कि क्या नही आती।

—अच्छा, पीतो को भी बात कुछ जच गयी। मगर फिर कहने लगी, तेरी मा ने तुम दोना को नही आने देना। कहेगी एक जनी जाओ। नामो को भी इसी तरह महसूस हुआ आर उसने कोई और बात न की।

पीतो के खेतो मे पीतो का पिता और दो मजदूर हल चला रहे थे। पीतो को देखकर सभी प्रसन्न हो गए।

—आज पीतो रोटी लेकर आयी है? एक ने कहा, अरी, थक तो नही गयी? दूसरे ने बगल से कहा, नामो को महसूस हुआ कि पीतो को सब प्यार करते है परतु उसकी कोई परवाह नही करता।

पीतो ने मजदूरो की खुशामद और नामो की उदासी, किसी की ओर ध्यान न दिया। क्षण म ही वे रोटिया पकडाकर वापस चल पडी। बतन बापू ले आएगा।

—अरी, कल को भी रोटी देने तू ही आएगी? नामो ने पीतो से पूछा।

—अरी बहन, मैं तो आज थक गयी हू। पीता थकावट की सास लेकर बोली, कही बैठकर आराम कर लें।

—उस शीशम की छाव म बैठेंगे, नामो ने खेत भर की दूरी पर शीशम के वृक्ष को देखकर कहा। जब वे उस शीशम के नीचे पहुची ता पीता तुरत बैठ गयी।

—पीतो, तू तो बहुत जल्दी थक गयी। नामो ने कहा, इतनी जल्दी थक जाती हो? मैं तो कोस भर और चलू ता भी न थकू। अब तक वे कोस से अधिक चल चुकी थी, परतु नामो के कोस का अर्थ कोई थका देने वाला रास्ता था।

—बहन, मैं ता थक गयी। मेरा तो जैसे सिर घूम रहा हो, पीतो ने सिर

पकड कर कहा।

—पीतो अब भाभी ने बाग लगा लेना है। मा कहती है कि तू उसका चर्खा लेकर कात लिया करना। कभी तुम्हारे घर कातने बैठ जाया करेंगे, कभी हमारे। नामो ने जैसे पीतो से प्राथना की।

—बहन, तुम्हारे घर तुम्हारी मा से डर लगता है। हमारे घर ही आ जाया करना, पीतो ने कुछ गर्व से उत्तर दिया।

—अच्छा, फिर कभी-कभी हमारे घर भी काता करेंगे। कभी-कभा के लिए मेरी मा कुछ नही कहती, नामो ने पराजित सी होकर कहा।

—नामो! तेरी भाभी कैसी है? पीतो ने अपनी बडाई करने की इच्छा से पूछा, तेरे साथ अच्छा व्यवहार करती है?

—अच्छा ही है, नामो ने उत्तर दिया। नामो भाभी की ओर से अभी निराश नही हुई थी। अभी तो अच्छी ही है, कल का पता नही।

—मेरी भाभी तो, भई बडी अच्छी है, पीतो फिर बडाई करने लगी। एक बाग गुलखइरो का पूरा भी कर लिया, और कहती है, बीबी! मायके से मैं सरपल्लू काढ कर लाऊगी।

—तुझे तो सरपल्लुओ की पडी रहती है, नामो की बात भी बन गयी, तेरा तो अभी से गौना लेने को जी चाहता है।

—कहा की कहा ले जाती है बात को, पीतो ने लज्जित होकर उत्तर दिया।

—अच्छा फिर उठो, चलें। धूप चढ़ रही है। कह कर नामो ने गडवा उठाया और खडी हो गयी।

—अरी, हम उस बुढ़िया को साथ ले लें, दो कदम चलकर पीतो ने पीछे आ रही बुढिया की ओर सकेत किया, अकेली चली तो सडक से डर लगेगा।

रास्ते मे एक जरनली सडक थी, जहा से गाव के छोटे बच्चे बहुत डरते थे, क्योकि उधर से कई तरह के लोग जागली और राखे मजदूरी करने वाले गुजरते थे।

नामो मे कुछ साहस था—अरी डर काहे का? उसने कहा, तुम्हे कोई नही पकडेगा।

—इस तरह की बात न कर, पीतो ने अलमदो जैसा मुह बना कर कहा, भाभी के गाव के समीप एक गाव है। वहा इसी तरह अपने जैसी लडकी को राते उठाकर ले गए।

यह बात सुनकर नामो पीछे आ रही उस बुढिया को अपने साथ मिलाने के लिए मान गयी। दो एक क्षणो के बाद वह बुढिया उनके पास थी।

—अम्मा हमे सडक से डर लगता था। हमने कहा, अम्मा के साथ चलेंगे।

नामो ने अम्मा को प्रसन्न करने के लिए कहा।

—अरी, तुम्हें कौन उठा ले जाता। हूरजादियों का सडक से ? बुढिया खीझ कर बोली।

—ओह हाय, अरी अम्मा ! पीतो के मुह से निकला।

—चलो, बेटी, चलो ! उसने तुरत पसीज कर कहा।

एक विवेचन

जसवत सिंह विरदी

आज की पजाबी कहानी किसी भी भारतीय भाषा की कहानी की तुलना मे रखी जा सकती है। बल्कि पजाबी कहानी देश काल की सीमाओ को पार करके विश्व साहित्य मे भी अपना स्थान बना रही है। विश्व कहानियो के पश्चिम जमनी से छपने वाले एक सकलन मे श्री सुजान सिंह की कहानी सम्मिलित है। इसी प्रकार एक और सकलन मे श्री करतारसिंह दुग्गल और अमता प्रीतम की कहानिया भी शामिल है। रूसी भाषा मे तो अनेक लेखको की कहानिया छप चुकी हैं।

पजाबी कहानी ने यह प्रगति शताब्दियो के वक्फे मे नही की, बल्कि आधी शताब्दी मे ही पजाबी कहानी को यह गौरव प्राप्त हो गया है।

इस समस्या को लेकर पजाबी साहित्य क्षत्र मे बहुत चर्चा होती रही है कि पजाबी की प्रथम मौलिक कहानी कौन सी है ? और क्या यह पश्चिम के प्रभाव द्वारा शुरू हुई है अथवा इसके तत्त्व पहले ही बीज रूप मे उपस्थित थे ?

पजाबी गल्प साहित्य म ' आदि जन्मसाखी ' को पयाप्त मान्यता प्राप्त है, परतु यह 'जन्मसाखी' कई शताब्दियो पूव लिखी गयी थी और इस म आधुनिक कथा अथवा कहानी वाली कोई बात नही है। स्वर्गीय ज्ञानी हीरासिंह दद ने 'पजाबी सघरा' (1940) कहानी सग्रह म लिखा है—'पजाबी मे प्रथम मौलिक छोटी कहानी जो मैंने पढी है जहा तक मुझे स्मरण हो आता है वह 'कमला अकाली' नाम की कहानी थी जो म० लाल सिंहजी कमला, अकालीजी ने लिखी थी और शायद 1921 मे 'अकाली' समाचार पत्र मे छपी थी। यह कहानी धार्मिक थी।

'कमला अकाली' नाम की कहानी अब तक किसी सकलन म नही छपी और न ही पजाबी की प्रथम कहानी के रूप म उसकी चर्चा ही हुई है। ज्ञानी हीरासिंह दद जी न सन् 1924 से लेकर 1940 तक अपने मासिक पत्र 'फुलवाडी' म सभवत

तीस कहानियां प्रकाशित की थीं और जो कहानी संकलन उन्होंने संपादित किया, उसमें भी उन्होंने इस कहानी को सम्मिलित नहीं किया।

डा० सविंदर सिंह उप्पल अपनी पुस्तक 'पंजाबी कहानीकार' में स० चरण-सिंह शहीद के बारे में लिखते हैं—पंजाबी का वह प्रथम कहानीकार है जिसने सुचारु रूप से पंजाबी छोटी कहानी को पश्चिम और विशेषतः अंग्रेजी कहानी के मार्ग पर चलाया और अपनी कहानियों के लिए आदर्श अंग्रेजी कहानी को बनाया।

मगर स० चरणसिंह कहानी के क्षेत्र में मौलिक लेखक नहीं थे। एंतन चेखव की प्रसिद्ध कहानी—'गिरगिट' उनके नाम से पंजाबी में छपी हुई है। शेष सामग्री भी उन्होंने इधर-उधर से ही प्राप्त की थी। इसी तरह भाई मोहनसिंह वैद्य और श्री बलवंत सिंह चतरथ जैसे कुछ और लेखकों ने भी धार्मिक और प्रचलित विषयों पर कथाएं लिखी जो कि मौलिक कहानियां नहीं थीं। इन कथाओं का शिल्प भी नवीन नहीं था और शैली भी नहीं।

1920 से 1935 तक का समय पंजाबी गल्प के लिए विशेष संभावनाओं का समय था। इस काल में श्री गुरबख्श सिंह, ज्ञानी हीरासिंह दर्द, जोशुआ फजलदीन, गुरुमुखसिंह मुसाफिर, चरणसिंह शहीद तथा नानक सिंह ने गल्प के क्षेत्र में कुछ नये प्रयोग किये, परंतु पंजाबी की कलात्मक और मौलिक कहानी का जन्म 1935 में ही हुआ जबकि सर्व श्री संतसिंह सेखों, सुजानसिंह, मोहन सिंह और कर्तारसिंह दुग्गल ने लिखना शुरू किया। इनमें से संतसिंह सेखों प्रथम कहानी लेखक हैं, जिसने अंग्रेजी में लिखना छोड़ कर पंजाबी में कलम सम्भाली और उसने प्रथम कहानी 'भत्ता' लिखी। इस संबंध में सेखों के प्रथम कहानी संग्रह 'समाचार' (1943) की भूमिका में श्री मोहनसिंह जोश लिखते हैं—"संत सिंह सेखों ने सबसे प्रथम मेरे कहने पर पंजाबी पत्रिका 'प्रभात' के लिए लिखना शुरू किया था और 'प्रभात' में प्रो० साहिब की प्रथम दो कहानियां 'भत्ता' और 'कीटां अंदर कीट' फरवरी तथा मार्च 1936 के अंकों में प्रकाशित हुई थीं। 'भत्ता' की उस समय विशेष प्रशंसा हुई थी, और आज भी मेरी राय में विश्व साहित्य संसार में यह एक बहुत ऊंचा स्थान प्राप्त कर सकती है।

स्वयं संतसिंह सेखों ने भी पुस्तक—'झूठियां सच्चियां' की भूमिका में लिखा है—1935-36 में एक लूटमार परंतु स्वस्थ लड़की की भांति पंजाबी कहानी का यौवन एकदम प्रस्फुटित हो गया, 'प्रभात,' 'लिखारी' और 'पंज दरिया' ने पंजाबी में नई कहानी को क्षेत्र प्रदान किया। सुजानसिंह, कर्तारसिंह दुग्गल, मोहनसिंह और संतसिंह सेखों की कहानियां के संकलन 'दुख-सुख' (1939), 'सवेर सार'(1940), 'निक्की निक्की वासना' (1942)और'समाचार (1943), प्रकाशित होने से पंजाबी कहानी भारत की अन्य भाषाओं की कहानी की पंक्ति

मे खड़ी हो गयी।

मेरे विचार म सन् 1920 से लेकर 1935 तक पजाबी पत्र-पत्रिकाओं म त्रिव गल्प रूप के प्रयोग हो रहे थे उन्होंने 1930 के बाद अपना गल्प स्वरूप निश्चित करना शुरू कर दिया होगा। फलस्वरूप, सतसिह सेखों की कहानी 'भत्ता' पजाबी की प्रथम मौलिक कहानी है जिसके द्वारा पजाबी म कहानी के विलक्षण अस्तित्व की परपरा शुरू होती है। उपरिलिखित लेखकों और उनके बाद के लेखको न विशेष रूप से पश्चिम की कहानी से प्रभाव ग्रहण किया है। इन लेखकों के बारे मे तो सतसिह सेखों ने 'झूठियां-सच्चियां' की भूमिका में भी लिखा है कि—सतसिह सेखों, प्रो० मोहनसिंह, करतारसिंह दुग्गल और सुजान सिंह कहानी-ससार म कैथरीन मसफील्ड के सप्रदाय के अनुयायी हैं।

श्री सुजानसिह ने भी 1935 तक लिखना शुरू कर दिया था परतु उनकी प्रथम कहानी 'भुलेखा से 'भत्ता' पहले लिखी गयी थी। यह वही समय था जबकि प्रेमचद हिंदी मे 'कफन' लिख चुके थे और राजेंद्रसिंह बेदी ने भी अपनी प्रथम कहानी 'भोला' लिख ली थी।

सतसिह सेखो की कहानियों का सूक्ष्म वातावरण कैथरीन मैंसफील्ड की कहानियों का स्मरण करवाता है। मगर अपनी कहानी के प्रथम चरण में सेखों एक ही समय फ्रायड और मार्क्स के दर्शन से प्रभावित थे। अभी तक भी वह इन दोनों के प्रभाव को छोड़ नही सके। यह अलग बात है कि मार्क्सवाद का प्रभाव उन पर अधिक रहा है।

'नीहा ते ममटियां' नाम के सग्रह मे डा० हरनामसिंह शान लिखते हैं कि आधुनिक पजाबी कहानी के निर्माण की बुनियादें 'पुरातन जन्म साखी' (जीवन कथा गुरु नानक) की साखियो म खोजी जा सकती हैं। यदि इस कथन के तर्क को मानना हो तो फिर 'पचतत्र' सर्वप्रथम कहानी सग्रह है।

मगर पजाबी कहानी ने अपने अस्तित्व के मूल तत्व पश्चिम की कहानी म से प्राप्त किये हैं भारतीय परपरा मे से नही। पजाबी के सभी विद्वान इस मत पर सहमत हो चुके हैं।

सतसिह सेखो पजाबी के सर्वप्रथम मौलिक कहानी लेखक हैं। उन्होंने कहानी को समकालीन जीवन के भावबोध और सचार का माध्यम बनाकर इसे समय के सत्य को प्रकट करने म समर्थ किया। इस लेखक द्वारा की गयी शुरुआत की वजह से ही कहानी को पजाबी मे गौरवमय स्थान प्राप्त हुआ है, जो स्थान कहानी को पश्चिम मे भी प्राप्त नही है। अब यदि कहानी सस्कृति के उत्थान की साहित्यिक प्रतीक बन गयी है तो इस परपरा का प्रारभ 'भत्ता' कहानी से ही हुआ है।

भत्ता कहानी मूल रूप म स्त्री-पुरुष के परस्पर शारीरिक आकर्षण की

कहानी है। सेखा की अधिक कहानिया स्त्री पुरुष के शारीरिक और मानसिक सबधा की समस्याओ की कहानिया है और गाव के जाट अथवा अय किसान जीवन के प्रतिनिधि होते है। इस कहानी का नायक हरनाम सिंह प्रात काल उठकर पिता के साथ खेतो मे काम के लिए आ जाता है। यह सूर्योदय के साथ अय किसानो की तरह घर से आने वाले 'भत्ते' (नाश्ता) का इतजार करता है। वह सोचता है कि उसकी नवविवाहिता पत्नी भत्ता लेकर आ रही होगी। मगर भत्ता लेकर उसकी पत्नी नही, बल्कि उसकी बहन नामो आती है। नामो को दख कर उसका शरीर शिथिल हो जाता है और मन दुखी, उसकी इस अवस्था को देखकर उसका पिता अपनी बेटी को कहता है—'नामो ! पुत्तर, अपनी भाभी का रोटी देकर भेजो। तुम लस्सी (छाछ) बहुत कम लाती हो !'

सम्पूर्ची कहानी मे लेखक का ट्रीटमेट मनोवैज्ञानिक है और भत्ता खेतो मे काम करने वाले किसान के लिए इतजार का प्रतीक बन जाता है। शिल्प की दृष्टि से इस कहानी म कसाव कम है तथा कुछ और भी कलात्मक त्रुटिया अवश्य रह गयी हैं *जिनके बारे मे इन पक्तियो के लेखक की सेखो साहिब से बात भी हा* चुकी है। उहोने कहा था—यदि यह कहानी सन 50 मे लिखी जाती, तो इसका स्वरूप कुछ और ही होता।

सतसिंह सेखो ने पजाबी कहानी को धार्मिकता तथा प्रचार के दलदल मे से निकाल कर इसे राजनीतिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक आधार दिया है और कथा का कहानी के शिल्प में ढाला है। सेखा के बयान मे सूक्ष्म कटाक्ष है और कहानी के वातावरण म ताजगी का प्रभाव फैला रहता है।

सतसिंह सेखो की प्रथम पुस्तक 'समाचार' पजाबी कहानी के स्वरूप को निश्चित करती ह और उनकी कहानिया का परवर्ती पजाबी कहानी पर इतना गहरा प्रभाव है कि उ ह पजाबी कहानी का पितामह माना जाता है।

▫ डोगरी

आद्य कथाकार भगवत्प्रसाद साठे

भगवत्प्रसाद साठे का जन्म सन् 1910 में हुआ। यह राज्य के सैन्य सेवा से संबद्ध प्रसिद्ध साठे घराने में जन्मे, पले तथा बड़े हुए। उनके पुरखे महाराष्ट्र से आये थे।

विद्यार्थी जीवन में ही साठे का झुकाव ललित एवं परिष्कृत रुचियों की ओर हो चला था। इसी समय समाजसेवा की ओर भी रुझान हो चला था। बाद में ये रुचियां साहित्य और समाजसेवा की सक्रिय प्रवृत्तियों के रूप में प्रस्फुटित हुईं।

साठे के व्यक्तित्व में आतरिक तथा बाह्य दृष्टि से महाप्राण निराला तथा मुक्तिबोध के व्यक्तित्व का सामजस्य आश्चर्य की सीमा तक समान दिखाई देता है। स्वतंत्र बौद्धिक चिंतन, दबंग वृत्ति, खरी और बेबाक प्रवृत्तियों के कारण अहं, न्याय तथा स्वाभिमान के स्तर पर जीवन भर संघर्ष करते रहे। वह अपने को युगों पुराने बर्फ के ग्लेशियरों के विरुद्ध जुटा हुआ पाते थे इस विश्वास के साथ कि अंतत बर्फ पर कुछ खरोंचें तो जरूर पड़ेंगी लगातार रगड़ से रस्सी भी पत्थर पर निशान छाप देती है।

इसी जीवन-दर्शन ने उन्हें जन्मजात विद्रोही की भूमिका पर ला खड़ा किया। डोगरी साहित्य-मंच पर अकेला खड़ा-बरदार, अकेला बागी। बग़ावत साहित्यिक गतिरोध के खिलाफ और किसी हद तक अपने विरुद्ध भी। साधन हीन व्यक्ति, कलात्मक रुचि, बढ़िया खान-पान और फ्री-लांसर होने का दृढ़ निश्चय। एक दायरे में सिमटी भाषा में लिख कर परिवार-पोषण और अपनी सुरुचियों को कायम रखना डोगरी में अभी एक खूबसूरत सपने की तरह ही है, पर साठे ने स्वप्न भंग के बाद की सभी तकलीफें और पीड़ाएं झेली हैं।

वह ज्योतिष तथा हस्तरेखा विज्ञान के भी प्रकाड पडित थे। डोगरी भाषा के साहित्यिक रूप और लौकिक रूप के मध्य समसामयिक पाठक, श्रोता, अध्येता के समक्ष बीच की कडी के रूप मे साठे प्रकट होते हैं।

जीवन का अधिकाश घूमने मे व्यतीत हुआ, परतु साहित्य का अनुराग छाया की तरह साथ लगा रहा। सन 1966 मे बबई से जम्मू वापस आये। पर यह वापसी जैसे 'रिप वान विकल' का कसबे को लौटना था परिचय म अपरिचय की अनुभूतियो की तरह भयानक मोह-भग की पराकाष्ठा थी यह।

यहा आकर उन्होंने दूसरा कहानी-सग्रह छपवाया। 'गोदान' तथा 'मृग-नयनी' का अनुवाद भी किया। 8 मई 73 को डोगरी के आद्य कहानीकार—इस सघर्ष पुरुष का प्राणात हुआ।

प्रथम मौलिक कहानी सन् 1950 के आसपास रचित

▫ मगते की पनचक्की

मुहाने पर दो मन की बोरी लगा कर मगता तबाकू पीने लगा था। अकस्मात चलती हुई पनचक्की रुक गयी।

—जाए बाढ मे बहे! भुनभुनाता जला फुका-सा वह उठा और कूल मे जलधार दखन लगा। कहा से टूटी होगी, सोचता-सोचता वह नाली के किनारे-किनारे चलने लगा। बरसात के पानी से बरस मे दो महीने चलने वाली मगते की मौसमी पनचक्की और उसे भी कसाइयो के लडके कूल तोड कर आखिरी सासो पर ले आते और मगते से गालिया का प्रसाद पाते।

खडड के मध्य से, जहा उसने पानी रोक कर कूल निकाली थी, किसी ने पत्थर उठा दिया था। पानी कूल छोडकर कल कल करता खड्ड मे बह रहा था। पत्थर जमाने के पहले मगते ने इधर-उधर नजर दौडाई। ऊपर की ओर महमदू खडा दिखाई दिया।

—ए महमदू तू मेरी जान क्यो खाने लगा है?

महमद बरहेकड के फूल चूस रहा था। मगते के वहा होने की जसे उसे खबर ही न हो। मगता तनिक सहज हुआ, तब महमदू का ध्यान मगते की ओर बध गया।

—नई ताऊ, मैंने रोक नही उठायी।

—तूने नही तो तेर बाप न उठायी है? तरटटनू न हो ता! इल्मदीन से कहू तो तरा पिंजर तोड देगा वह! पत्थर अटका कर वह फिर पनचक्की की आर मुडा तो महमदू भी उसी के पीछे पीछे चला आया। मगते ने नरगेला उठाया और गुडगुड करके मुह से धुआ निकालने लगा। महमदू न बरहेकड की तीन चार शाखाए मगते क आगे फेंकी—ले ताऊ, तू भी फुल्ल चूस ले!

—जा, बड़ा आया फुल्ल चुसवाने वाला ! चिलचिलाती दुपहरी में ताऊको दुक्ख देकर सरम नही आती ? डोम की लडकी और भाई से चुहल। भुनभुनाता हुआ मगता तवाकू गुडगुडाता रहा।

महमदू चुप था। कुछ देर बाद बोला—ताऊ, तू इतना बूढा हो चला है, किसी दिन टिकट कट गयी तो पनचक्की कौन चलायेगा ?

इस प्रसग पर आते ही मगते की आखें छलछला आती। अपना कहने तक को कोई न था।

महमदू उठ कर जान लगा, तो मगते ने उसे रोक लिया—अरे ठहर भी, जाना तो है ही।

—ताऊ, बकरिया कही ल्हा मे न फस जायें ! चल कर उन्हे देखू। यहा तेरे पास बैठने का क्या लाभ ? मरोगे, तो पनचक्की कोई झीवर ही सभालेगा !

—क्यू र, धीवर को क्या मुझे टके देन है ? जो कोई इस उम्र मे मेरे काम आयगा, वही सभालेगा पनचक्की।

महमदू मगते को चिढाता था, पर कुसमय काम भी वही आया करता। महमदू को और कोई लालच तो न था, हा, चलती पनचक्की के शोर मे उसे नीद बडी गाढी आती थी। जब तक पनचक्की चलती, महमदू का डेरा वही पर जमा रहता। इसी बात पर, इल्मदीन उससे कहा करता—ताऊ मर जायेगा, तो दूसरा कोई तुम्हे सोन देगा ! भोला महमदू समझता कि ताऊ मर जायेगा, तो पनचक्की उसी की हो जायगी।

मगते को बुखार आ रहा था। महमदू की बात ने उसे सोचने पर मजबूर कर दिया था। इन दिनो एक महमदू का ही सहारा था।

एक दिन मगता पूरा दिन महमदू का इन्तजार करता रहा, पर वह न आया। सूरज डूब चुका था। मगते न पनचक्की के कपाट बद किये और महमदू की खबर लेन चला। अधेरा और बुखार मगते पर पिल पडे थे। पर उसने हार नही मानी।

दिन की बात हो—बीत चुकी थी, पर मगते तक न पहुच पायी थी। बात यह थी कि साधु शाह की दुकान पर गुल्लू झीवर ने इल्मदीन पर बाली मारी—महमदू को ताऊ के पास सुलाते हो, कही पनचक्की पर तो नजर नही ?

इल्मदीन तरारे मे आ गया अब नही जाने दूगा। खाने-पीने का हमारे भी बहुत है।

इससे अधिक क्या होता। गुल्लू मगत का दूर-पार का सबधी था। इल्मदीन और महमदू के लिए तो बात खत्म हो चुकी थी, पर मगत की ओर से नही। महमदू रो चिल्ला कर माने लगा था कि मगता ऊघता-कराहता आ पहुचा। उसने इल्मदीन से पूछा, महमदू को बुलाया, गालिया निकाली। आराम किया,

जोर जोर से बोला, राया भी। शोर पडोसियो ने सुना। पर इल्मदीन ने महमद्दू को उसके साथ नही ही भेजा।

दूसरे दिन पहले पहर शोर पड गया मगता चक्की के पास मरा पडा था। रात को इल्मदीन के घर गालिया निकाल रहा था। इसी पर उन्होंने मगत को मार डाला और पनचक्की मे फेंक आये। लोगो की जीभा पर यही चढा हुआ था। गुल्लू इस बात तो मिर्च मसाला लगा रहा था।

पुलिस आयी। इल्मदीन और महमद्दू, दोनो को हथकडी लग गयी। फिर पनचक्की की तलाशी ली जाने लगी। मगते की वास्कट किल्ली पर टगी हुई थी इसमे तहाया हुआ एक कागज था। सारजेंट न खोल कर पढा। अपने साथियो को भी पढवाया। सभी ने अपने-अपने सिर हिलाये। कागज इल्मदीन के हाथ में दे दिया गया और उनकी हथकडिया खोलकर चुपचाप वे लोग चले गये।

एक विवेचन

ओम गोस्वामी

आज डोगरी भाषा मे वैचारिक वैविध्य के स्तर पर साहित्यकारो की एकाधिक पीढिया सजनात्मक लेखन म प्रवत्त हैं। वतमान समय डुग्गर समाज के जातीय जागरण का कालखड है। सामायत होता यह है कि किसी जाति की गौरवशाली परपराए प्रातिभ का सजन करके साहित्य-सरचना का क्षेत्र तैयार करती हैं। परतु डोगरी मे यह गति विपरीत रही है। यहा नवरचित साहित्य द्वारा जातीय उत्थान सभव हुआ है। साहित्य 'दमित डोगरा' के बचाव के लिए आगे आया है।

पर एक जमाना था, जब डोगरी पढना लिखना तो अकल्पनीय था ही शिष्ट समाज मे इसका व्यवहार फूहडता का प्रतीक भी था। हास्य-व्यग्य के किही हिदी उर्दू के नाटको मे अधम या मूख पात्रो के मुख से डोगरी बुलवायी जाती थी। उस समय यह कहकहो और विदूषको की भाषा हो कर रह गयी थी। डोगरी भाषी लोगो म निज भाषा के प्रति हेयत्व-बोध इस सीमा तक बढ चुका था कि वे किसी के सामने डोगरी बोलते समय बेहद शर्मिंदा महसूस करते थे। इसके अनेक राजनीतिक तथा मानसिक कारण थे। हीनत्व की रुग्ण प्रवत्ति की प्रतिक्रिया काव्य क्षेत्र मे बहुत पहले शुरू हो गयी थी परतु कहानी द्वारा इसे चुनौती देने वाले साठे पहले व्यक्ति थे। उहोने छोटी छोटी चुटीली प्रभावदार कहानिया लिखी। प्रत्येक सभास्थल या गोष्ठी मे, जहा साठे उपस्थित होते, मगलाचरण के गीत की तरह उनकी कहानी की फरमाइश की जाती। साठे का अपनी सभी कहानिया कठस्थ थी। बिना पाडुलिपि के जब वह बोलने लगते, तो वातावरण जानदार हो उठता। ऐसा लगता जैसे कोई निहायत सजीदा व्यक्ति अपने बहुमूल्य अनुभव सुना रहा है। इन कहानिया म जनमानस का पारदर्शी चित्राकन हुआ है। डोगरी भाषा की लौकिक गरिमा का प्रदशन करके साठे ने

लोगो को चौंका दिया। अपनी भाषा का यह पक्ष लोगो के लिए नयी-नवेली दुलहन की रूपयष्टि की तरह आकर्षक था। भाषा का अवगुंठन हटा कर उसका सौन्दर्य पान करने वाले साठे ही प्रथम व्यक्ति थे। यह रस्म उन्होंने 'पहला फुल्ल' की भेंट चढ़ा कर पूरी की।

कहानी का लिखित रूप सामने आने के पहले डोगरी में लोककथाओं का विपुल भण्डार मौजूद था। इसलिए साठे की कहानियों में लोकवार्ता के तत्त्व कथा-तत्त्वों के साथ नीरक्षीरवत संयुत है। विकास की स्वाभाविक प्रतिक्रिया में आगे की कहानियों में यह संयोग तिल-तंडुलवत् है। 'पहला फुल्ल' में संगृहीत अधिकांश कहानियों के आर्केटाइप और मोटिफ डुग्गराचल की लोक-कथाओं में उपलब्ध हो जाते हैं। लोक कहानी की सरलता, सहजता और रूपबंध की स्वाभाविकता भी इन कहानियों की विशिष्टता है। लोक तत्त्व की उपस्थिति से प्रभावित हो कर राजेंद्रसिंह बेदी ने साठे की 'कुडमे दा लामा' कहानी की मुक्तकंठ से प्रशंसा की थी। उनके शब्द थे—"यदि इस कहानी को ट्रांसलेट करने की अनुमति साठे दें तो मैं खदान के इस हीरे को कथा जगत में श्रीमंडित करना चाहूंगा।' यद्यपि इस कहानी में भी लोककथाओं के अभिप्राय और मानक विद्यमान है, फिर भी आज से पच्चीस वर्ष पूर्व ऐसी भावनात्मक आलोचना ने डोगरी कहानी की नयी नयी फूटी जड़ों के लिए खाद का काम किया।

साठे डोगरी के पहले कहानीकार थे, यह निश्चितप्राय है। परंतु उनकी कौन सी कहानी प्रथम या साहित्यिक दृष्टि से प्रथम, है यह दोनों तथ्य भिन्न हैं इन्हें एक कर देने पर ही अस्पष्टता पैदा होती है। कुछ लोग उनके प्रथम संग्रह की 'पहला फुल्ल' नामक कहानी से आभासित प्रथम प्रयास को सामने रख इसी को पहली कहानी मानते है।

'पहला फुल्ल' रामनगर में प्रचलित प्रसिद्ध लोककथा है। इसे तनिक लेखकीय परिवर्तन परिवर्द्धन से साठे ने लिखा था। सभाओं आदि में भी यही कहानी अधिक माकूल हुई, क्योंकि अपनी बात कहने के लिए उस समय जो मंच उपलब्ध था, वहां आध्यात्मिक स्वरों को गौर से सुना जाता था। प० हरदत्त शर्मा अपनी बात कथा बाचते समय इसी तरह कह दिया करते थे।

लोकमानस में सहज विश्वासों के श्रद्धामय अंशों से आप्लावित होने के कारण 'पहला फुल्ल' को साठे की प्रथम कहानी मान लेना या संग्रह की प्रधान कहानी होने के कारण यह निर्णय लाद देना सच्चाई से बलात्कार के बराबर है। 'पहला फुल्ल' के पूर्व साठे 'कुडमे दा लामा' और 'मंगते दा घराट' लिख चुके थे। जनश्रुतियों पर टिकी 'पहला फुल्ल' और 'कुडमे दा लामा' कहानियों ने उन्हें ख्याति प्रदान की थी। 'कुडमे दा लामा' भी लोक विश्वासों पर आधारित होने के कारण लोककथा-परंपरा से अलग दिखाई नहीं देती।

स्वय वह 'बुडमे दा लामा' को अपनी पहली कहानी मानते थे। रचनाक्रम की दष्टि से 'मगते दा घराट' का दूसरा स्थान है। 'मगते दा घराट' म लोक-वार्ता के तत्व न्यूनतम हैं। ये न्यूनतम अश भी इसके सरल-सपाट विन्यास की वजह से है। इसी कहानी से डोगरी कथा लौकिक पगडडियो से साहित्यिक राज-माग पर पहुची। इसके लेखन के बाद ही साठे का साहित्यिक व्यक्तित्व मुखर हुआ। उनकी बाद मे पक्व कहानिया के बीज इसी कहानी में छिपे हुए ह। यदि किसी भाषा की प्रथम कहानी का लौकिक वणन कोई त्रुटि नही है, तो निश्चय ही मगते दा घराट' डोगरी की प्रथम साहित्यिक कहानी है।

कुछ लोगो को आपत्ति है कि उनके समवर्ती सआदत हसन मटो कृष्णचदर, जैनेन्द्र, यशपाल, अज्ञेय आदि जब विषययुक्त और शिल्प शैली की दष्टि से उच्चस्तरीय कथा-रचनाए दे रहे थे, तब क्या कारण है कि उसी कालखड मे रची साठे की कहानिया उनके सामने ठहर नही पाती ?

यहा स्मरणीय है कि देश काल एक होने के बावजूद डोगरी भाषा की परि-स्थितिया भिन्न थी और जैसा कि कहा जा चुका है, डोगरी भाषा म बातचीत तक करना ग्राम्यत्व तथा मूखता का प्रतीक बन गया था, तब झिझक के वातावरण म कथा लेखन शुरू करने वाले लेखक से सीधे मजे हुए लेखन की अपेक्षा करना क्या ओवर एक्सपेक्टेशन नही ? इस तक मे क्या दम है कि माधवराव सप्रे न सामर-सेट मॉम जैसी कहानिया न लिख कर 'एक टोकरी भर मिट्टी' ही क्यो लिखी ?

साठे गरीब भाषा के कथक्कड थे। इस भाषा की दशा ऐसी ही थी, जैसे किसी गरीब ग्राम्य बाला का कोमल शरीर पुरानी 'गिद्दो' से झाक रहा हो और कोई शहरी मनचला उठकर कहे कि वह साडी या स्कट पहन कर क्यो नही रहती तक यही कि उसकी समकालीन बालाए शहरो म ऐसे ही रह रही हैं। ऐसी दलील उपयुक्त दिखाई नही देती। स्वाभाविक यह होगा कि वह सुत्थन और कुरता पहनकर ही साडी और स्कट की ओर लपके। साठे की कहा-निया विकास प्रक्रिया की इसी आधारभूत माग की प्रपत्तिया थी।

मरण के संघर्ष मे, सन 1947 के अंतिम चरण मे गठित 'कौमी कल्चरल मुहाज़' के तहत वहा के लेखको, कवियो, चित्रकारो आदि ने जो रोल अदा किया, उनमे श्री दीनानाथ 'नादिम' इन कलाकारो की अग्रिम पंक्ति मे खडे थे। उर्दू शायरी उन्होने छोड दी थी और आम जनता की भाषा कश्मीरी म वह सन 45-46 से ही कविता करने लगे थे।

'कौमी कल्चरल मुहाज़' के अंतर्गत गठित 'अंजुमने तरक्की पसंद मुसन्नफ़ीन', (प्रगतिशील लेखक संघ) के सन 1950 मे वह सचिव चुने गये। 1951 मे आल स्टेट अमन कौंसिल' के महामंत्री चुने गये। सन 1952 मे वह उस भारतीय प्रतिनिधिमंडल के साथ पीकिंग गये, जो वहा समायोजित एशिया एव प्रशात प्रदेशा के शांति सम्मेलन मे भाग लेने गया था। 1954 मे कश्मीर मे एक नया सास्कृतिक संगठन 'कल्चरल कान्फ़रेंस' बना और श्री 'नादिम' सन 1956 तक उसके निर्वाचित महामंत्री रहे। सन 1959 मे शुरू किये गये कश्मीरी भाषा के प्रथम मासिक पत्र 'कोग पोश' के, जिसकी कश्मीर के सास्कृतिक आदोलन मे और विशेषकर कश्मीरी साहित्य के उत्थान एव विकास म ऐतिहासिक भूमिका रही है, संपादक मडल के सदस्य और बाद मे संपादक रहे।

श्री 'नादिम' पेशे से अध्यापक है। सन 1940 मे वह शिक्षक नियुक्त हुए। उन्होने पहली बार जम्मू कश्मीर राज्य मे अध्यापक संघ को संगठित किया और वह इस संघ के संस्थापक अध्यक्ष बने। कई वर्षो तक राज्य की विधान परिषद मे निर्वाचित सदस्य के रूप मे राज्य के शोषित अध्यापको का प्रतिनिधित्व करते रहे। अध्यापको के इस संगठन के कश्मीरी मासिक मुखपत्र 'वोस्ताद (उस्ताद) की भी उन्होंने संस्थापना की और उसके काफ़ी समय तक संपादक रहे। राज्य की 'कल्चरल अकादमी' और 'साहित्य अकादमी' के वह कई वर्षों तक सदस्य रहे है। सन 1970 मे वह 'सोवियत भूमि नेहरू पुरस्कार' से सम्मानित हुए और इस सिलसिले मे सोवियत संघ की यात्रा भी कर आये।

श्री नादिम मूलत कवि है—एक महान कवि। लेकिन एक युग-प्रवर्तक लेखक के नाते उनको गद्य-लेखन की अनेक विधाओ—कहानी, निबंध, छाया-नाटक, गीति-नाटक (ऑपेरा) आदि मे भी एक पथप्रदर्शक का दायित्व निभाना पडा। इनम से अधिकाश विधाओ मे प्रथम रचनाकार 'नादिम' ही हैं। प्रथम कश्मीरी कहानी 'जवाबी कार्ड' (जवाबी काड) और पहला कश्मीरी गीति-नाटय 'बाुर यवरज़ल' (भौंरा और नरगिस) इसके उदाहरण है। काव्य क्षेत्र मे तो वह क्रांतिकारी परिवर्तन लाये ही।

प्रथम मौलिक कहानी सन् 1948 मे रचित
और सन् 1949 मे प्रकाशित

□ जवाबी कार्ड

जून दादी, जून दादी, क्या अभी तुम अदर ही हो ?

अपने आने की सूचना देकर निश्चित सा जमाल मीर चबूतरे पर बैठ गया। चिथडा हुए फयरन (लबा कुरता) के कही अदर की जेब से सुघनी की डिब्बी निकाली और एक बडी-सी चुटकी भरकर दातो पर मली। उसके हाथ मे एक लकडी का टुकडा था। उससे धूल पर चित्रकारी करता रहा।

दस-पद्रह मिनट प्रतीक्षा मे बीत गये। फिर गोशाला के दरवाजे की बायी ओर चरमराहट हुई। जमाल मीर चौका। पीछे मुडा और देखा जून दादी को, जैसे पूर्णिमा का चाद खडा हो। उसकी बत्तीसी बाहर निकल आयी और हृदय की गहराइयो से एक कहकहा फूट पडा।

—धत् तेरा भला हो! मैं भी सोचू, कौन सुबह ही सुबह आया है! नासपीटा, आवाज खूब बदल कर बोलता है! होठो मे मुसकराते हुए जून दादी बोली।

जून दादी गाव की नानी और गाव वालो की मा थी। एक लबी चौडी औरत। बर्फ जैसे सफेद बाल, बडी बडी गहरी आखें, लबी तीखी नाक और टेहुनो को छूती हुई मजबूत बाहे। सफेद बुराक सा फयरन पहन कर वह बनन्वी भी लगती थी।

—दादी, धूप इतनी चढ चुकी है और तुम अभी तक सोयी थी। जमाल मीर ने नसवार की पीक थूकते हुए कहा।

—तुम तो बुद्धू हो, और क्या कहू! जून दादी ने जवाब दिया—तुम आखिर समझदार कब बनोगे? तुमने देखा नही कि मैं अभी गोशाला से निकली

हू ? सोयी कहा थी ?

जमाल मीर शरमिंदा तो हुआ, लेकिन जरा छेड़ते हुए बोला—नहीं दादी, असल बात तो यह है कि तुम गुलाम मुहम्मद के लिए

जून दादी के माथे पर बल पड गये। जमाल मीर ने यह देख कर खुद ही बात काट दी। कुछ देर के लिए दोनो चुप रहे। आखिर जून दादी ने खामोशी तोड़ते हुए कहा—हा, ठीक ही तो है। मेरा ही क्या, हमारी गाय ने भी उसके बिछोह मे खाना-पानी छोड दिया है उसी की तीमारदारी म अभी तक गोशाला मे थी।

इसी बीच गाव के और भी बहुत से आदमी चबूतरे पर आकर बैठ गये। बातचीत अब और लबी होने लगी।

जून दादी कौन थी कहा की थी और कितनी आयु की थी, इन प्रश्नो का उत्तर गाव म कोई नही जानता था। इस गाव के बूढे से बूढे आदमी ने भी जून दादी को बिल्कुल ऐसा ही देखा था, जसी वह आज है। लेकिन इतना तो हर कोई जानता था कि जून दादी सब कुछ है—गाव की हाकिम, गाव की सरपच, गाव की रक्षक, नबरदार, चौकीदार, पटवारी, सब कुछ। वह बडो की सलाहकार, छोटो की लगोटिया यार और गाव की बहू-बेटियो की राजदार थी। गाव मे कही पचायत हो, तो जून दादी को फसला देना होता। लामबदी पर किसी को जाना होता, तो जून दादी का फसला ही अतिम होता। किसी की शादी ब्याह का मामला होता, तो दादी को दूती बन जाना पडता। किसी को दुख दद होना, तो ऐसा लगता कि दादी खुद ही बीमार और दुखी है।

सारे इलाके मे प्रसिद्ध था कि जून दादी की बात पत्थर की लकीर है, जो बडा लाट तक नही टाल सकता। इसीलिए जून दादी का झोपडा सारे गाव का ननिहाल सा था। किसी के पाव म काटा भी चुभता तो वह दौड कर दादी के पास पहुच जाता।

बानपुर गाव को उस तरफ के लोग 'कौओ का पीहर' कहते है। यह इसलिए कि उस ओर के सारे कौए आते जाते समय वहा के चिनारो पर रात गुजार लेते हैं। कई एक ने तो इन चिनारो पर अपने घोसले भी बनाये हैं।

आज भी सूर्यास्त के समय वहा कौए इतना अधिक शोर मचा रहे थे कि पास म बहते हुए नाले की आवाज भी उस शोर मे खो सी गयी थी। अचानक बदूक छूटने की आवाज आयी। कौए काव काव करते हुए चिनारो से उड कर भागने लगे।

—यहा यह बदूक की आवाज कसी ? वह देखो एक फौजी जवान आ रहा है! यह उसी की शैतानी है!

भरे-पूरे सुडौल अग, चौडी मजबूत छाती, मासल कधे, दमकता चेहरा और

सुदर चाल-ढाल, जैसे कोई फिरगी कप्तान निश्चित होकर मस्ती से चला आ रहा था। ज्यो ही वह हेरपुर गाव पहुचा, गाव के बच्चा ने उसको घेर लिया। कुछ बच्चे तो उसकी टागो से लिपट गये, कई उसकी जेबें टटोलने लग और कुछ उसकी बदूक छू कर देखने लगे। फिर सब बच्चे शोर मचाने लगे—गुलाम मुहम्मद आ गया जून दादी, गुल साहब आ गया । हमारा कप्तान आ गया । यही नारे लगाते बच्चो का यह जुलूस जून दादी के चबूतरे तक आ पहुचा।

खटाक से दरवाजा खोलकर जून दादी अपने घर से निकल आयी। आखो म हसी और चेहरे पर कृत्रिम गाभीर्य लिये वह बोली—हू ! गुल साहब ! कप्तान ! अगर ऐसे ही बुद्धू कप्तान बनने लगे, तो ' ! और उसी क्षण दोनो मा-बेटे एक दूसरे के गले से लिपट गये।

गुलाम मुहम्मद जून दादी का क्या लगता था, यह कोई भी नही जानता। इस बारे म जितने मुह उतनी बातें थी। कुछ लोग कहते हैं कि वह जून दादी की भावज की बेटी का बेटा है। कुछ कहते कि वह उसका पोता है। लेकिन बहुमत यही कहता था कि जून दादी का गुलाम मुहम्मद मखदूम साहब की मसजिद की सीढियो पर मिला है।

इनका जो भी सबध हो, इससे हम कोई गरज नही। हा, इतना तो सभी देखते थे कि जून दादी के प्राण यदि किसी म बसते है तो वह है गुल मुहम्मद।

और जब से उसका गुल मुहम्मद मिलीशिया (पाकिस्तान के आक्रमण से कश्मीर की रक्षा करने वाली जन सेना) म भरती हुआ था जून दादी के होठो पर उसका नाम चढा हुआ था। कभी वासुदव से कहती—भाई, सुना तुमने, गुल मुहम्मद ने मुहाज (मोर्चे) से खत लिखा है कि उसने एक दिन म सतरह कबाइलियो को मार गिराया है ! और कभी कहती—क्या कह सानमाली, सदके जाऊ गुल साहब के ! उसका लिखा एक जवाबी काड आज मिला है। लगता है जसे काड पर मोती पिरोये हो ! और कभी कहती—जमाल मीर, आज हमारी दस पीढिया तर गया ! सपूत हो तो गुल मुहम्मद जैसा ! सारे कश्मीर की रक्षा कर रहा है आजकल !

जिस दिन गुलाम मुहम्मद को मोर्चे पर वापस लौटना था, उस दिन सारे गाव म गहमा गहमी थी।

उस दिन बहुत तडके ही अपने अपने घर के काम से निबट कर सब-के-सब मर्द और औरतें, बच्चे और बूढे जून दादी के चबूतरे पर इकट्ठे हो गये थे। कुछ नैवेद्य लेकर आये थे और कुछ तावीज [illegible] गाव की कुछ औरतें अपने आचल के छोर मे अचार और किस्म किस्म [illegible] सूखा साग और सूखे शलगम लेकर आयी [illegible]

ज्यो ही जून द[illegible] हो गया।

हर व्यक्ति चाहता था कि उसका उपहार ही पहले गुलाम मुहम्मद को मिले।

—जून दादी यह लो सूखे शलगम की सब्जी! गुलाम मुहम्मद से कहना कि फारम बाग की शलगम है, मामूली नही! राहत गूजरी सकुचाती हुई बोली—यह शलगम तो मैंने गुल साहब के लिए बचा कर रखी थी।

—यह सूखा साग लेती जा, जून दादी! यह साग खुशपुर गाव के बाग का है। रजमान बेग बोला—गुलाम मुहम्मद से कहना कि ऐसा साग शहर-भर मे मिलना नामुमकिन है।

—यह अचार भी लेती जा, दादी! बोनपुर की असली कश्मीरी गाठ गोभी का बना है।

—अरी दादी, गुलाम मुहम्मद को तो बुला! क्या वह अभी तक सोया पडा है? वासुदेव भट्ट ने जानना चाहा।

—कहती हू ना कि तुम मूर्ख हो! हस कर जून दादी ने जवाब दिया—वह क्या अभी तक सोया पडा रह सकता है? वह तो मुह धोने नदी पर गया है। आता ही होगा। क्या तुम्हे जल्दी है क्या?

—काहे की जल्दी? मैं तो एक तावीज लाया हू पडित नीलकठ से। सोचा, खुद उसके गले मे बाध दू। वासुदेव भट्ट ने सहज भाव से कहा।

इतने मे नदी से गुलाम मुहम्मद मुह-हाथ धोकर लौट आया। देखते ही भीड ने उसे घेर लिया। कुछ लोगो ने उसे छाती से लगाया और कुछ ने उसका माथा चूम लिया। और जब वह फौजी वरदी पहनकर और बदूक हाथ मे लेकर बाहर निकला, तो सबकी छाती गर्व से फूल उठी।

औरतों ने जी खोल कर दुआए दी—गुल साहब, तुम फलो और फूलो! तुम्हारी तकदीर बुलन्द हो! सुखी रहो! खुश रहो!

सारा गाव उसके साथ साथ काफी दूर तक उसको विदा करने गया और जब वह 'छाया कुज' के पास पहुच कर नजरो से ओझल हो गया। तभी वे अपने घरो को लौटे।

आज पौ फटने के वक्त से ही आसमान कुछ धुधला धुधला-सा था। सूर्योदय होने तक पूरा आकाश बादलो से ढक गया और पर्वत शृखलाओ को घेरते हुए बादल नीचे दामन तक उतर आये। फिर पूरब की ओर भयानक बिजलिया चमकने लगी और ऐसा लगने लगा कि अभी मूसलाधार वर्षा होगी। प्राय ऐसे समय गाव के लोग अपने-अपने घर मे ही बैठते है। परतु आज यहा के सब आदमी नदी के किनारे टोलिया बना कर कुछ कानाफूसी कर रहे थे। सभी के चेहरों से उदासी और दुख टपक रहा था। मर्दों की टोली से हट कर औरतें अदर-ही अदर रो रही थी।

इतने मे वासुदेव भट्ट नगे पाव दौडता हुआ आया और बच्चो की तरह रोते

हुए उसने पूछा—करीम बाबा, यह मैंने क्या सुना ? क्या यह सच है ? हम तबाह हो गये ! यह कहते-कहते उसकी जीभ लडखड़ा गयी।

मुह पर उगली रख कर इशारा करते हुए करीम कुम्हार ने कहा—भाई चुप रहो बिल्कुल चुप ! इस तरह काम नही चलेगा। जरा धीरज धरो। जून दादी का क्या हाल होगा, जरा सोचो तो ! कैसे उस तक खबर पहुचायी जाये ?

—यह क्यो हुआ ? आखिर यह किसने चाहा ? यह कैसे हुआ ? वासुदेव भट्ट ने हताश स्वर म सिसकते सिसकते पूछा।

—किसने चाहा ? हमारे दुर्भाग्य ने ! कल जिल्दार डाकिया आया और उसने मेरे हाथ मे गुल साहब का कार्ड थमा दिया। उस पर कुछ लिखा न था। जैसा यहा से दादी ने भेजा था, वैसा ही कोरा वापस आ गया था गुलाम मुहम्मद मोर्चे पर ! इसके आगे करीम कुम्हार कुछ न बोल सका।

जी कडा करके व सभी एक एक करके जून दादी के चबूतरे पर पहुचे।

वह आज भी यथावत गोशाला मे अपनी गाय को चारा खिला रही थी—तुम्हे शर्म नही आती, आखिर मैं कब तक यहा बैठी रहूगी ? जब मेरा लाल मुहाज पर गया है तब से तुमने भी बरत रखना शुरू कर दिया ! लेकिन सोचा तो, इस तरह कैसे काम चलेगा ? जून दादी गोशाला मे गाय के साथ बातें कर रही थी। तभी बाहर उसने कुछ आवाजें सुनी।

अदर ही से जून दादी ने पुकारा—वासुदेव हो क्या ? तुम आज इतने सबेर कहा से आ टपके ? फिर वह गोशाला से बडबडाते हुए निकल आयी—गुलाम मुहम्मद ने तो इस गाय का सिर चढा रखा है और

इतना कह कर जून दादी सहसा रुक गयी। लगभग सारे गाव को वहा जमा देख कर भौचक्की-सी रह गयी। आखिर उसने पूछा—क्या बात है ? कहा लडाई झगडा तो नही किया है ? बोलते क्यो नही ?

लेकिन कोई जवाब न दे सका। सभी दम साधे खडे रहे।

—बोलो ना क्या बात है ? क्या मुह मे जबान नही ? जून दादी ने कुछ सहम कर पूछा। कोई सदेह उनके मन म प्रवेश कर चुका था।

आखिर वासुदेव भट्ट मुह नीचा करके बोला—क्या कहें, दादी, कुछ कहा नही जाता ! इतना कहकर वह फूटफूट कर रोने लगा। सभी की हिचकिया बध गयी।

फिर वासुदेव भट्ट जी कडा करके आहिस्ता से जवाबी कार्ड निकालकर जून दादी के हाथ मे देते हुए बोला—यह कल मिला हम, लेकिन यह कोरा है ? न जाने !

जून दादी पर जैसे गाज सी गिरी। वह देर तक [illegible] रही। हाथो मे फिरता हुआ जवाबी क[illegible] गया [illegible] रे गाई

ठीक किया और उसको वार-वार उलट पुलट कर दखने लगा।

चारा आर पूरी खामोशी छायी हुई थी। लगता था, जसे चिडियो न चहकना तक बद कर दिया है। केवल गाव की नदी की धीमी आवाज आ रही थी, जो एसी लगती थी, मानो ईद के दिन कोई मजार पर अपन विछडे हुओ के लिए विलाप कर रहा हा।

जून दादी का चेहरा पीला पड चुका था और इन्ही क्षणा मे उसके वूढे चेहरे की झुरिया उभर आयी थी। आसुआ के दो चार मासूम कतर उसकी पलका म झिलमिलाये

अचानक जून दादी ने एक कहकहा लगाया पागला का-सा। सब लाग सहमे और हैरान होकर उसको देखने लगे। जून दादी कह रही थी—कहा नही मैंन वासुदव कि तुम वेवकूफ हो! अगर तुम अक्लमद होते, ता आज तक क्या तहसीलदार नही वने हाते ? जरा रुक कर सबको जवावी काड दिखाती हुई फिर वोली—क्या तुम्ह दिखाई नही देता ? इस पर तो कुछ लिखा हुआ है। खाले गये काड की शिकनें दूर से पेंसिल की आडी तिरछी रेखाए जैसी दिखाई दे रही थी और जून दादी एलान कर रही थी—गुल मुहम्मद ने मुझे शहर आने को लिखा है 'नारी सेना' म भरती होने के लिए! और वह सहसा मुड कर अपने झापडे म घुस गयी।

जिस दिन जून दादी लकडी का वना हुआ वदूक लेकर और सफेद कोरे कपडे का फयरन पहन कर गाव म निकली, उस दिन सारे गाव का दिल दद से मसास उठा। उस दिन वोनपुर गाव मे न ता कोई वच्चा खेलता दिखाई दिया और न चिनारा पर कौए काव-काव करते नजर आये

एक विवेचन

ओमकार काचरू

कश्मीरी भाषा की प्रथम मौलिक कहानी पर विचार प्रस्तुत करने के पहले कश्मीरी गद्य पर सक्षिप्त रूप से विचार करना अनिवार्य है। ऐसा न करने से पाठक यह शीर्षक देख कर इस भ्रम म पड सकते हैं कि कश्मीरी गद्य, पद्य की तरह ही काफी विकसित और सैकडो वर्षों की परम्परा वाला है। बहुत से लोगों के लिए यह तथ्य सभवत आश्चयजनक हो कि कश्मीरी गद्य का जन्म, जिसम कश्मीरी कहानी भी शामिल है, पच्चीस-तीस वष पहले ही शुरू हुआ है। इसलिए कश्मीरी की पहली मौलिक कहानी का समय निधारण करना जहा अपक्षाकृत काफी सहज है, वहा इस पर कोई शोध निबध जैसा लेख तैयार करने की गुजाइश बहुत ही कम है।

कश्मीरी साहित्य म गद्य का जन्म इतनी देर से क्या हुआ, यह प्रश्न यहा कुछ असगत सा भले ही लगे, लेकिन मेरी समझ मे यह हमार मूल विषय से अनिवायत जुडा हुआ है। दूसरे शब्दो म, यह पूछा जा सकता है कि कश्मीरी पद्य, जो 13वी शताब्दी मे आरभ हुआ, और कश्मीरी गद्य के जन्म मे लगभग छह सौ से अधिक वर्षों का व्यवधान क्यो रहा? कारण अनक हैं। उन सभी कारणा पर यहा विचार करना अनावश्यक है। लेकिन दो प्रमुख कारणो का हमारे विषय से, कम से कम इसकी पष्ठभूमि से, सीधा सबध है, इसलिए उन पर सक्षिप्त रूप म प्रकाश डालना अनुचित न होगा।

कश्मीरी भाषा को पिछली अनेकानेक [illegible] म उसका यथोचित स्थान कभी नही मिला और [illegible] उससे [illegible] शासकों के शासन काल म सस्कृत भा[illegible] सौ [illegible] किये रखा। मुसलिम तथा सिख [illegible] सौ साल तक इस भाषा को दबाये [illegible] ने इसका

हक छीन लिया। सन 1947-48 की राजनीतिक और सामाजिक उथल-पुथल के बाद जब राजतत्र का स्थान 'अवामी राज' अर्थात लोकतत्र ने लिया, तो यह आशा और आकाक्षा स्वाभाविक ही थी और काफी प्रबल भी कि अब कश्मीर मे कश्मीरी भाषा और जम्मू म डोगरी का अपना यथोचित स्थान प्राप्त होगा। लेकिन आज आजादी के इतने साल बाद भी जम्मू-कश्मीर राज्य की तीन भाषाए—कश्मीरी, डोगरी तथा लद्दाखी—अपने अधिकारो से वचित रखी गयी हैं। इन अधिकार-हनन की जिम्मेदार उर्दू भाषा है, जो आज भी जम्मू-कश्मीर राज्य की राज्यभाषा बनी बैठी है। सैकडो वर्षों का यह तिरस्कार और उपेक्षा, कश्मीरी भाषा तथा उसके साहित्य के सम्यक विकास मे सबसे बडी बाधा रहे हैं।

कश्मीरी भाषा एव साहित्य के—विशेषकर गद्य के—विकास मे दूसरी बाधा रही है लिपि की समस्या। वैसे अन्य भाषाओ की तरह कश्मीरी भाषा ने भी अपनी विशिष्ट ध्वनिया तथा प्रकृति के अनुकूल एक लिपि का विकास किया था, जिसका नाम था 'शारदा'। यह लिपि सदियो तक कश्मीरी भाषा के लेखन का माध्यम रही। लेकिन राज्य एव बुद्धिजीवियो की लगातार उपेक्षा तथा तिरस्कार और एक धर्मविशेष के मतावलबियो के दुराग्रह के कारण (क्योकि 'शारदा' नागरी लिपि से मिलती जुलती है) विगत शताब्दी तक आते-आते कश्मीरी भाषा की यह लिपि निष्प्राण हो गयी। 'शारदा' का स्थान फारसी लिपि ने ले लिया, लेकिन बीसियो वर्षों के इस्तेमाल और काट छाट के बाद आज भी यह लिपि कश्मीरी भाषा के ध्वनि-विधान को पूणतया अभिव्यक्त करने म समथ नही हो सकी। 'शारदा' लिपि की उपेक्षा के सबध म जॉर्ज ग्रियरसन की 'लिंगविस्टिक सर्वे ऑफ इडिया' (खड 8, भाग 2, पृ० 238, पुनर्मुद्रित सस्करण 1968) की एक पाद टिप्पणी पर्याप्त प्रकाश डालती है।

वर्तमान शताब्दी के लगभग पूर्वार्ध की समाप्ति तक कश्मीरी गद्य की रचना नही के बराबर थी। सन 1940 (वि० सवत 31 श्रावण, 1997) मे कश्मीरी के सुप्रसिद्ध कवि स्व० गुलाम मुहम्मद 'महजूर' ने कश्मीरी भाषा का प्रथम साप्ताहिक अखबार 'गाश' (प्रकाश) शुरू करके एक स्तुत्य प्रयास किया। लेकिन कुछ ही समय बाद 'गाश' का प्रकाशन बद हो गया। सन् 1947 48 का समय कई दृष्टियो से ऐतिहासिक परिवर्तनो का युग था—भारत और कश्मीर, दोनो के लिए। देश विभाजन और भयकर साप्रदायिक दगो के रूप म बहुत बडी कीमत चुका कर भारत ने आजादी हासिल की और कश्मीर के जन आदोलन ने, जहा मुसलमान बहुसख्यक सप्रदाय है, साप्रदायिक एकता का एक भव्य आदर्श कायम करके और डोगरा राज के निरकुश राजतत्र को समाप्त करके राज्यसत्ता स्वय सभाली। इस ऐतिहासिक उपलब्धि को नकारने के लिए वे ही स्वदेशी और विदेशी शक्तिया तथा तत्त्व षडयत्र रचने में लगे हुए थे, जो भारत का विभाजन

एक विवेचन

ओमकार काचरू

कश्मीरी भाषा की प्रथम मौलिक कहानी पर विचार प्रस्तुत करने के पहले कश्मीरी गद्य पर संक्षिप्त रूप से विचार करना अनिवार्य है। ऐसा न करने से पाठक यह शीर्षक देख कर इस भ्रम मे पड सकते हैं कि कश्मीरी गद्य, पद्य की तरह ही काफी विकसित और सैकडो वर्षों की परम्परा वाला है। बहुत से लोगों के लिए यह तथ्य सम्भवत आश्चर्यजनक हो कि कश्मीरी गद्य का जन्म, जिसमें कश्मीरी कहानी भी शामिल है, पच्चीस-तीस वर्ष पहले ही शुरू हुआ है। इसलिए कश्मीरी की पहली मौलिक कहानी का समय निर्धारण करना जहा अपेक्षाकृत काफी सहज है वहा इस पर कोई शोध निबंध जैसा लेख तैयार करने की गुंजाइश बहुत ही कम है।

कश्मीरी साहित्य म गद्य का जन्म इतनी देर से क्यो हुआ, यह प्रश्न यहा कुछ असगत सा भले ही लगे लेकिन मेरी समझ मे यह हमारे मूल विषय से अनिवार्यत जुडा हुआ है। दूसरे शब्दो मे, यह पूछा जा सकता है कि कश्मीरी पद्य, जो 13वी शताब्दी मे आरभ हुआ, और कश्मीरी गद्य के जन्म मे लगभग छह सौ से अधिक वर्षों का व्यवधान क्यो रहा? कारण अनेक है। उन सभी कारणो पर यहा विचार करना अनावश्यक है। लेकिन दो प्रमुख कारणो का हमारे विषय से कम से कम इसकी पष्ठभूमि से, सीधा सबध है, इसलिए उन पर सक्षिप्त रूप म प्रकाश डालना अनुचित न होगा।

कश्मीरी भाषा को पिछली अनेकानेक शताब्दियो म उसका यथोचित स्थान कभी नही मिला और आज भी वह उससे वचित ही है। हिंदू शासको के शासन काल म सस्कृत भाषा ने बारह-तेरह सौ वर्षों तक इसको पदच्युत किये रखा। मुसलिम तथा सिख शासन कालो म फारसी भाषा ने लगभग पाच सौ साल तक इस भाषा को दबाये रखा और डोगरा शासको के राज म उर्दू भाषा ने इसका

हक छीन लिया। सन 1947-48 की राजनीतिक और सामाजिक उथल-पुथल के बाद जब राजतंत्र का स्थान 'अवामी राज' अर्थात लोकतंत्र ने लिया, तो यह आशा और आकांक्षा स्वाभाविक ही थी और काफी प्रबल भी कि अब कश्मीर में कश्मीरी भाषा और जम्मू में डोगरी को अपना यथोचित स्थान प्राप्त होगा। लेकिन आज आजादी के इतने साल बाद भी जम्मू-कश्मीर राज्य की तीन भाषाएं—कश्मीरी, डोगरी तथा लद्दाखी—अपने अधिकारों से वंचित रखी गयी हैं। इन अधिकार-हनन की जिम्मेदार उर्दू भाषा है, जो आज भी जम्मू-कश्मीर राज्य की राज्यभाषा बनी बैठी है। सैकडों वर्षों का यह तिरस्कार और उपेक्षा, कश्मीरी भाषा तथा उसके साहित्य के सम्यक विकास में सबसे बडी बाधा रहे हैं।

कश्मीरी भाषा एवं साहित्य के—विशेषकर गद्य के—विकास में दूसरी बाधा रही है लिपि की समस्या। वैसे अन्य भाषाओं की तरह कश्मीरी भाषा ने भी अपनी विशिष्ट ध्वनियां तथा प्रकृति के अनुकूल एक लिपि का विकास किया था, जिसका नाम था 'शारदा'। यह लिपि सदियों तक कश्मीरी भाषा के लेखन का माध्यम रही। लेकिन राज्य एवं बुद्धिजीवियों की लगातार उपेक्षा तथा तिरस्कार और एक धर्मविशेष के मतावलंबियों के दुराग्रह के कारण (क्योंकि 'शारदा' नागरी लिपि से मिलती जुलती है) विगत शताब्दी तक आते-आते कश्मीरी भाषा की यह लिपि निष्प्राण हो गयी। 'शारदा' का स्थान फारसी लिपि ने ले लिया, लेकिन बीसियों वर्षों के इस्तेमाल और काट छांट के बाद आज भी यह लिपि कश्मीरी भाषा के ध्वनि-विधान को पूर्णतया अभिव्यक्त करने में समर्थ नहीं हो सकी। 'शारदा' लिपि की उपेक्षा के संबंध में जॉर्ज ग्रियरसन की 'लिंगविस्टिक सर्वे ऑफ इंडिया (खंड 8, भाग 2, पृ० 238, पुनर्मुद्रित संस्करण 1968) की एक पाद टिप्पणी पर्याप्त प्रकाश डालती है।

वर्तमान शताब्दी के लगभग पूर्वार्ध की समाप्ति तक कश्मीरी गद्य की रचना नहीं के बराबर थी। सन 1940 (वि० संवत 31 श्रावण, 1997) में कश्मीरी के सुप्रसिद्ध कवि स्व० गुलाम मुहम्मद 'महजूर' ने कश्मीरी भाषा का प्रथम साप्ताहिक अखबार 'गाश' (प्रकाश) शुरू करके एक स्तुत्य प्रयास किया। लेकिन कुछ ही समय बाद 'गाश' का प्रकाशन बंद हो गया। सन 1947-48 का समय कई दृष्टियों से ऐतिहासिक परिवर्तनों का युग था—भारत और कश्मीर, दोनों के लिए। देश विभाजन और भयंकर सांप्रदायिक दंगों के रूप में बहुत बडी कीमत चुका कर भारत ने आजादी हासिल की और कश्मीर के जन आंदोलन ने, जहां मुसलमान बहुसंख्यक संप्रदाय है, सांप्रदायिक एकता का एक भव्य आदर्श कायम करके और डोगरा राज के निरंकुश राजतंत्र को समाप्त करके राज्यसत्ता स्वयं संभाली। इस ऐतिहासिक उपलब्धि को नकारने के लिए वे ही स्वदेशी और विदेशी शक्तियां तथा तत्त्व षड्यंत्र रचने में लगे हुए थे, जो भारत का विभाजन

करने और साम्प्रदायिक दगा की आग फैलाने म सफल हुए थे। अक्टूबर, 1947 म जम्मू कश्मीर राज्य पर कबाइलियो के साथ मिलकर पाकिस्तानी सेना का हमला इन्ही षडयन्त्रो का एक और प्रत्यक्ष रूप था। यह हमला कइ दृष्टियो स एक अभिशाप अवश्य था लेकिन सास्कृतिक चेतना को झकझोर कर जाग्रत करने और विकसित करने की दृष्टि से मैं इस हमले को एक वरदान भी मानता हू। यह इसलिए कि कश्मीर के इतिहास मे शायद पहली बार वहा के लेखक, कवि, चित्रकार तथा अन्य कलाकार और बुद्धिजीवी 'कौमी कल्चरल मुहाज' नामक सगठन के अतगत न केवल सगठित हुए, बल्कि जीवन-मरण के उस सघर्ष म लगी हुई आम जनता की लडाई का एक अभिन्न तथा सक्रिय अग भी बन गये।

हमलावरो का मुह मोडने के बाद 'कौमी कल्चरल मुहाज' को तोडकर पूरे सास्कृतिक आदोलन को एक स्थायी आधार दिया गया, 'कौमी कल्चरल काग्रेस' के रूप म। यह सन 1948 49 की बात है। सन 1948 मे रेडियो कश्मीर की स्थापना भी सास्कृतिक गतिविधियो को प्रोत्साहन मिलने की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण घटना कही जा सकती है। सास्कृतिक दृष्टि से आमतौर पर, लेकिन साहित्यिक दृष्टि से खासतौर पर सन 1949 का वर्ष अत्यत महत्त्वपूर्ण समय इस लिए कहा जा सकता है क्योकि इस वर्ष के सितबर मास म कश्मीरी भाषा के प्रथम मासिकपत्र 'कोग पोश (केसर का फूल)ने जन्म लिया। 'कल्चरल काग्रेस' का मुखपत्र होते हुए भी वह पूरे कश्मीर के तत्कालीन सास्कृतिक आदोलन का न केवल प्रमुख साधन बल्कि उसका पथ प्रदर्शक भी रहा। कश्मीरी साहित्य के स्वातन्त्र्योत्तर युग का प्रवतक एव नेतृत्व करने वाले कवि-लेखक श्री दीनानाथ 'नादिम' कश्मीर के उपयुक्त क्रातिकारी समय की उपज है, जो 'कोग पोश' सपादक मडल के सक्रिय सदस्य थे। कश्मीरी भाषा की प्रथम मौलिक कहानी इन्ही 'नादिम साहब की रचना और उसी युग की उपज है। इस कहानी का शीर्षक है जवाबी कार्ड। यह कहानी 'कोग पोश' के खड 1 अक 2 (चैत्र, 2006 विक्रमी) म प्रकाशित हुई है यानी सन 1949 म। (इलाहाबाद से प्रकाशित मासिक 'कहानी के नववर्षांक, जनवरी, 1955 मे इस कहानी का हिंदी अनुवाद छपा है।)

श्री 'नादिम' ही प्रथम मौलिक कश्मीरी कहानी के रचनाकार हैं यह हमारे यहा एक निर्विवाद तथ्य रहा है—कम-से [illegible] 0 तक—लेकिन लगता है कि प्रसिद्ध कश्मीरी स [illegible] श्री अमीन [illegible] सहमत नही हैं। जम्मू-कश्मीर राज्य की '[illegible] के [illegible] प्रकाशन 'शीराज़ा' के अगस्त, 1967 म [illegible] नव कश्मीरी कहानी विशेषाक) म [illegible] के सबध म कुछ बातें) मे उन्होंने [illegible] फरवरी,

1950 को आयोजित एक साहित्यिक बैठक मे पहली कश्मीरी कहानी पढी गयी। इसका नाम था 'यलि फोल गाश' (जब सुबह हुई) कहानीकार थे सोमनाथ जुत्शी। लेकिन श्री कामिल ने अपने लेख म अपने मत के पक्ष मे कोई भी उचित तक या ठोस आधार प्रस्तुत नही किया है।

इसके विपरीत, 'जवाबी काड' को प्रथम मौलिक कश्मीरी कहानी मान लेने के निम्नलिखित कारण है

पहला यह है कि मासिक 'कहानी' (इलाहाबाद) के प्रथम विशेषाक (जनवरी 1955) के लिए, उसके सपादक ने इन पक्तियो के लेखक से एक कश्मीरी कहानी का हिन्दी अनुवाद और कश्मीरी कथा-साहित्य के सबध मे एक परिचयात्मक लेख भेजने को लिखा था। इस सिलसिले मे मैं श्री दीनानाथ 'नादिम' के अलावा कई और कश्मीरी गद्यकारो से भी मिला। श्री 'नादिम' से बातचीत के दौरान 'जवाबी काड' के बारे म एक अत्यत महत्त्वपूण जानकारी मुझे यह मिली कि यह कहानी उन्होने रेडियो कश्मीर की स्थापना के अवसर पर—शायद जुलाई, 1948 मे—लिखी थी, जो प्रसारित भी हुई थी। श्री 'नादिम' की यह बात मैं आज भी सही मानता हू। इसके बाद सितम्बर 1949 मे जब 'कोग पाश' का जन्म हुआ, तो इस पत्र के दूसरे अक मे (जा प्रवेशाक के लगभग पाच महीने के बाद फरवरी, 1950 मे प्रकाशित हुआ) श्री जुत्शी की 'यलि फोल गाश' के साथ ही 'जवाबी काड भी प्रकाशित हुई। एक ही अक मे इन दोना कहानियो का प्रकाशन ही सभवत कामिल साहब के भ्रम का कारण है।

दूसरा यह कि 'यति फाल गाश' का उल्लेख 'कल्चरल काग्रेस' के तत्कालीन मत्री ने अपनी रपट म अत्यत साधारण शब्दा म 'कोग पोश' के उसी अक मे किया है जिसम यह कहानी छपी है। उन शब्दा का अनुवाद यह है मह सगठन (अजुमन तरक्की पसद मुसन्नफीन, अर्थात प्रगतिशील लेखक सघ) पाक्षिक (साहित्यिक) बठके करता है, जिनम कविताए, कहानिया नाटक, लेख आदि पढे जाते है। पिछले मास म यथावत दो बैठके हुइ। बैठको मे दो कहानिया और तीन कविताए पढी गयी। एक कहानी थी हबीब कामरान की उर्दू कहानी 'हलचल। दूसरी कहानी पढी सोमनाथ जुत्शी ने, जो कश्मीरी भाषा मे थी। नाम था 'यलि फाल गाश' (जब सुबह हुई) इस पूरी रपट म यलि फोल गाश' के लिए मात्र एक साधारण वाक्य इस्तेमाल किया गया है। यदि यह प्रथम कश्मीरी कहानी होती, तो 'कल्चरल काग्रेस' के मत्री अपनी रपट मे ऐतिहासिक महत्त्व की इस साहित्यिक घटना का महज एक वाक्य मे उल्लेख नही करते।

तीसरा यह कि व्यक्तिगत रूप से कश्मीर के उक्त सास्कृतिक आदोलन के साथ मेरा सक्रिय सपक रहा है और अपनी पीढी के अन्य अनेक व्यक्तियो की तरह

करने और साम्प्रदायिक दंगा की आग फैलाने में सफल हुए थे। अक्टूबर, 1947 में जम्मू-कश्मीर राज्य पर कबाइलियों के साथ मिलकर पाकिस्तानी सेना का हमला इन्हीं षडयन्त्रों का एक और प्रत्यक्ष रूप था। यह हमला कई दृष्टियों से एक अभिशाप अवश्य था, लेकिन सांस्कृतिक चेतना को झकझोर कर जाग्रत करने और विकसित करने की दृष्टि से मैं इस हमले को एक वरदान भी मानता हूं। यह इसलिए कि कश्मीर के इतिहास में शायद पहली बार वहां के लेखक, कवि, चित्रकार तथा अन्य कलाकार और बुद्धिजीवी 'कौमी कल्चरल मुहाज' नामक संगठन के अंतर्गत न केवल संगठित हुए, बल्कि जीवन-मरण के उस संघर्ष में लगी हुई आम जनता की लड़ाई का एक अभिन्न तथा सक्रिय अंग भी बन गये।

हमलावरों का मुंह मोड़ने के बाद 'कौमी कल्चरल मुहाज' को तोड़कर पूरे सांस्कृतिक आंदोलन को एक स्थायी आधार दिया गया, 'कौमी कल्चरल कांग्रेस' के रूप में। यह सन 1948-49 की बात है। सन 1948 में 'रेडियो कश्मीर' की स्थापना भी सांस्कृतिक गतिविधियों को प्रोत्साहन मिलने की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण घटना कही जा सकती है। सांस्कृतिक दृष्टि से आमतौर पर, लेकिन साहित्यिक दृष्टि से खासतौर पर सन 1949 का वर्ष अत्यंत महत्त्वपूर्ण समय इस लिए कहा जा सकता है, क्योंकि इस वर्ष के सितंबर मास में कश्मीरी भाषा के प्रथम मासिक पत्र 'कोंग पोश' (केसर का फूल) ने जन्म लिया। 'कल्चरल कांग्रेस' का मुखपत्र होते हुए भी वह पूरे कश्मीर के तत्कालीन सांस्कृतिक आन्दोलन का न केवल प्रमुख साधन बल्कि उसका पथ प्रदर्शक भी रहा। कश्मीरी साहित्य के स्वातंत्र्योत्तर युग का प्रवर्तन एवं नेतृत्व करने वाले कवि-लेखक श्री दीनानाथ 'नादिम' कश्मीर के उपर्युक्त क्रांतिकारी समय की उपज हैं, जो 'कोंग पोश' संपादक मंडल के सक्रिय सदस्य थे। कश्मीरी भाषा की प्रथम मौलिक कहानी इन्हीं 'नादिम' साहब की रचना और उसी युग की उपज है। इस कहानी का शीर्षक है 'जवाबी कार्ड'। यह कहानी 'कोंग पोश' के खंड 1 अंक 2 (चैत्र, 2006 विक्रमी) में प्रकाशित हुई है यानी सन 1949 में। (इलाहाबाद से प्रकाशित मासिक 'कहानी' के नववर्षांक जनवरी, 1955 में इस कहानी का हिन्दी अनुवाद छपा है।)

श्री 'नादिम' ही प्रथम मौलिक कश्मीरी कहानी के रचनाकार हैं यह हमारे यहां एक निर्विवाद तथ्य रहा है—*कम-से कम सन 1960 तक—लेकिन लगता है* कि प्रसिद्ध कश्मीरी साहित्यकार श्री अमीन कामिल इससे सहमत नहीं हैं। जम्मू-कश्मीर राज्य की 'कल्चरल अकादमी' के त्रैमासिक कश्मीरी प्रकाशन 'शीराज़ा' के अगस्त 1967 में प्रकाशित 'अज्युक कॉशुर अफसानु नंबर' (आधुनिक कश्मीरी कहानी विशेषांक) में अपने लेख 'कैंछा अफसानस मुतलक' (कहानी के संबंध में कुछ बातें) में उन्होंने लिखा है कि 'कौमी कल्चरल कांग्रेस' की 25 फरवरी,

1950 का आयोजित एक साहित्यिक बैठक मे पहली कश्मीरी कहानी पढ़ी गयी। इसका नाम था 'यलि फोल गाश' (जब सुबह हुई) कहानीकार थे सोमनाथ जुत्शी। लेकिन श्री कामिल ने अपने लेख म अपन मत के पक्ष म काई भी उचित तक या ठोस आधार प्रस्तुत नहा किया है।

इसके विपरीत, 'जवाबी काड' को प्रथम मौलिक कश्मीरी कहानी मान लेने के निम्नलिखित कारण हैं

पहला यह है कि मासिक 'कहानी' (इलाहाबाद) के प्रथम विशेषाक (जनवरी 1955) के लिए, उसके सपादक ने इन पक्तियो के लेखक से एक कश्मीरी कहानी का हिन्दी अनुवाद और कश्मीरी कथा-साहित्य के सबध मे एक परिचयात्मक लेख भेजने को लिखा था। इस सिलसिले मे मैं श्री दीनानाथ 'नादिम' के अलावा कई और कश्मीरी गद्यकारो से भी मिला। श्री 'नादिम' से बातचीत के दौरान 'जवाबी काड के बारे म एक अत्यत महत्त्वपूण जानकारी मुझे यह मिली कि यह कहानी उन्होंने रेडियो कश्मीर की स्थापना के अवसर पर—शायद जुलाई, 1948 म—लिखी थी, जो प्रसारित भी हुई थी। श्री 'नादिम' की यह बात मैं आज भी सही मानता हू। इसके बाद सितम्बर 1949 मे जब 'कोग पोश' का जन्म हुआ, तो इस पत्र के दूसरे अक मे (जा प्रवेशाक के लगभग पाच महीने के बाद फरवरी, 1950 म प्रकाशित हुआ) श्री जुत्शी की 'यलि फोल गाश' के साथ ही 'जवाबी काड' भी प्रकाशित हुई। एक ही अक मे इन दोनो कहानियो का प्रकाशन ही सभवत कामिल साहब के भ्रम का कारण है।

दूसरा यह कि 'यलि फोल गाश' का उल्लेख 'कल्चरल काग्रेस' के तत्कालीन मत्री ने अपनी रपट मे अत्यत साधारण शब्दा म 'कोग पोश' के उसी अक म किया है जिसमे यह कहानी छपी है। उन शब्दा का अनुवाद यह है यह सगठन (अजुमन तरक्की पसद मुसन्नफीन, अथात प्रगतिशील लेखक सघ) पाक्षिक (साहित्यिक) बैठकें करता है, जिनम कविताए, कहानिया नाटक, लेख आदि पढे जाते हैं। पिछले मास मे यथावत दो बठकें हुई। बठका मे दो कहानिया और तीन कविताए पढी गयी। एक कहानी थी हबीब कामरान की उर्दू कहानी 'हलचल'। दूसरी कहानी पढी सोमनाथ जुत्शी ने, जो कश्मीरी भाषा मे थी। नाम था 'यलि फाल गाश' (जब सुबह हुई) इस पूरी रपट मे 'यलि फोल गाश' के लिए मात्र एक साधारण वाक्य इस्तेमाल किया गया है। यदि यह प्रथम कश्मीरी कहानी होती, तो 'कल्चरल काग्रेस' के मत्री अपनी रपट मे ऐतिहासिक महत्त्व की इस साहित्यिक घटना का महज एक वाक्य मे उल्लेख नही करते।

तीसरा यह कि व्यक्तिगत रूप स कश्मीर के उक्त सास्कृतिक आदोलन के साथ मेरा सक्रिय सपक रहा है और अपनी पीढी के अन्य अनेक व्यक्तियो की तरह

मैं इस आदोलन के तीन चरणो—'कौमी कल्चरल मुहाज' 'कौमी कल्चरल काग्रेस' और 'आल स्टेट कल्चरल का फरेंस', (इसकी स्थापना सन् 1953 मे हुई)—का प्रत्यक्षदर्शी भी रहा हू, विशेषकर अतिम दा चरणा का और 'कहानी' म प्रकाशित अपने 'कश्मीरी कथा साहित्य नामक लेख मे इन पक्तिया के लेखक ने आज से लगभग अठारह वष पहले भी ये शब्द लिखे हैं कश्मीरी की सबसे पहली मौलिक कहानी यहा के सबसे प्रसिद्ध कवि श्री दीनानाथ 'नादिम' ने लिखी। इसका नाम है 'जवाबी काड'। आधुनिक कहानी के सभी तत्त्व कथावस्तु, चरित्र चित्रण, कथोपकथन, वातावरण आदि इसमे हैं। 'नादिम' के शब्दो मे इस कहानी का उद्देश्य कश्मीरी जनता को उन दिना कबाइली दरिंदा के विरुद्ध उभारना था। इसके अलावा यह कहानी यहा की हिंदू मुसलिम एकता की भावना को भी दिखाती है।

□ उडिया

आद्य कथाकार फकीरमोहन सेनापति

आधुनिक उडिया कहानी के जन्मदाता फकीरमोहन सेनापति का जन्म मल्लीकाशपुर (जिला बालेश्वर, उडीसा) मे सन 1843 की जनवरी मे, मकर सक्राति को हुआ था, 1868 मे उन्होने बालेश्वर मे प्रेस खोला और 'बोधदायिनी' तथा 'बालेश्वर सवाद वाहिका' नामक पत्रिकाओ का प्रकाशन किया। 1871 से 1896 तक उन्होने नीलगिरी, डोमपडा, ढेंकानाल, दशपल्ला, पाललहुडा और के ऊझर के राजाओ के दीवान के रूप मे काय किया।

इस सक्राति पुरुष ने जीवन-भर उडिया साहित्य की सेवा की और उडिया भाषा की प्रतिष्ठा के लिए निरतर सघष किया। फकीरमोहन सेनापति ने ही सव-प्रथम उडिया कथा साहित्य की भाषा को आधुनिक रूप प्रदान किया। उन्होंने विभिन्न धर्मों के तत्त्व को समझने का प्रयास किया और सस्कृत, हिंदी, बगला, फारसी अग्रेजी आदि भाषाए सीखी, पाडेय मुरलीधर और पाडेय मुकुटधर शर्मा ने उनके उपन्यास 'लछमा' का हिंदी मे अनुवाद किया था। उनकी अनेक कहानियो के हिंदी और अग्रेजी मे अनुवाद छपे, उनकी कहानियो का एक सग्रह और उपन्यास 'छमाण आठ गुठ कुछ ही समय पूव अग्रेजी मे प्रकाशित हुआ है, केन्द्रीय साहित्य अकादमी द्वारा उनकी अनेक कृतिया अनुवाद के लिए चुनी गयी है। उनकी प्रमुख कृतिया ये हैं 'छमाण आठ गुठ (उपन्यास), 'पुनर्मूषकाभव (उपन्यास) मामु' (उपन्यास), 'लछमा' (उपन्यास), 'प्रायश्चित (उपन्यास), 'राडि पुअ अनता (कहानी सग्रह), 'गल्प स्वरूप' (कहानी सग्रह) और आत्मजीवन चरित। उपयुक्त तथा उनकी अन्य कृतिया 1866 से 1927 तक की अवधि मे प्रकाशित हुईं। उनका 'आत्मजीवन चरित' एक अनोखी रचना है। घटनाक्रम की सूक्ष्मता की दृष्टि से उनकी इस कृति को उडीसा का सास्कृतिक, सामाजिक और राजनीतिक इतिहास माना जाता है।

प्रथम मौलिक कहानी   सन् 1898 मे रचित और सन् 1900 मे प्रकाशित

□ रेवती

कटक जिले के हरिपुर परगने म एक गाव है, नाम है, पाटपुर। गाव के एक सिरे पर एक मकान, आगे-पीछे चार कमरे, घर के परकोट पर से उतरती परछती मे ढेंकुली बिठायी गयी है। आगन के बीचोबीच कुआ, सामने बाहर का दालान और बाडी की ओर भीतर का। बाहर के दालान मे बने खुले कमरे मे बाहर से आये लोगो की बठक होती है। रैयत मालगुजारी अदा करने आती है। श्यामबधु महाति जमीदार की तरफ से गाव के गुमाश्ता हैं, महीने मे दो रुपये की तनखाह, तनखाह के अलावा मालगुजारी-सुधार, हक सावूती आदि से दो पसे हाथ आते हैं। कुल मिलाकर महीने मे चार रुपये से कम नही होते। दुनियादारी किसी तरह चलती है। किसी तरह क्यो ? अच्छी-खासी चलती है। यह नही है यह नही हो पाया, यह घर म किसी के मुह से सुनाई नही पडता। बाडी मे साग भाजी के अलावा दो सहिजन के पड है। घर मे दो गायें बधी हैं थाडा दूध थाडी छाछ हडिया मे पडी ही रहती है। बूढी तुस मिलाकर उपले थाप देती है जिससे ईंधन नही खरीदना पडता। जमीदार ने साढे तीन बीघा जमीन दी है खेती करने को, फसल न कम पडती, न बढती। श्यामबधु मीठे सादे आदमी, लोग उन्हे मानते हैं उनका आदर करते है, लोगो को भाई भतीजा कहकर दर दर जाकर लगान वसूलते हैं, किसी से अन्याय की एक पाई तक नही चाहते। चार अगुल के ताड के पत्ते पर लिख कर खुद जाकर छान मे खोस आते हैं। श्यामबधु के घर मे प्राणी चार है—वे दो जने, एक बूढी मा और दस वय की एक बेटी। बेटी का नाम है रेवती, श्यामबधु सध्या समय बरामदे मे बैठे 'कृपा सिंधु वदन ' गाते और कितने ही भजन गाते। कभी-कभी दीवार पर दीया जलाये भागवत पढते हैं। रेवती पास बठी सुनती

रहती है। उसने सुन-सुनकर कई भजन याद कर लिये हैं, उसके कोमल शिशु कठ से भजन अच्छे लगते है, सध्या समय बाबू के पास बठे वह भजन गाती है तो गाव के कई लोग आकर सुनते है। रेवती ने बाबू से एक भजन सीख लिया था। उसी को गाने से श्यामबधु खुश होते हैं। बेटी को वही भजन गाने को कहते हैं, रेवती गाती है।

दो वष पहले स्कूलो मे डेपुटी इस्पेक्टर देहात के दौरे के समय आकर एक रात के लिए पाटपुर म ठहर गये थे। गाव के मुखिया जसे लोगो के अनुरोध से डेपुटी जी ने इस्पेक्टर साहब से अज करके एक अपर प्राइमरी स्कूल खुलवा दिया है। शिक्षक हैं, कटक नामल स्कूल की अध्यापन परीक्षा पास छात्र वासुदेव, नाम जैसा वासुदेव है, वह भी वैसा वासुदेव, लडके के बाहर भीतर सब सुदर। गाव की गली मे चलते हुए सर उठाकर किसी की आर ताकता तक नही। उमर अदाजन बीस होगी। सुदर रूप, मानो गढातराशा गया हो। बचपन मे यकृत की खराबी हुई थी। उसकी मा ने सर पर तपती बोतल के मुह से आच लगायी थी, वह निशान अब भी है। पर वह निशान उसके चेहरे पर फबता है। वासुदेव बचपन से अनाथ, मामा के घर आदमी बना है। जात का कायस्थ है। श्यामबधु भी कायस्थ हैं, कभी पूनम, कभी गुरुवार आदि के पर्वों पर घर म पीठी मिठाई बनती है तो श्यामबधु पाठशाला जाकर कह आते है—बेटा बासु शाम को घर आना, तुम्हारी मौसी ने कहा है। इसी तरह आते जाते एक माया सी हो गयी है। रेवती की मा वासु को देखने पर कहती है—हाय, बचपन से मा-बाप नही हैं क्या खाता है कौन देखभाल करता है।

वासु रोज श्यामबधु के पास घडी आध घडी बैठ जाता है। उसे दूर देख कर रेवती 'वासु भाई आये वासु भाई आये 'चिल्ला कर बापू से कहती है। रेवती रोज शाम को बापू के पास बठ कर पुराने भजन गाकर वासु को सुनाती है। वासु को वे गीत नये-नये से लगते हैं एक दिन इधर-उधर की बातें हो रही थी कि श्याम बधु ने सुना, कटक मे लडकियो के लिए भी एक स्कूल है। वहा लडकिया पढती हैं, सिलाई सीखती हैं। उसी दिन से श्यामबधु न रेवती को पढाने का विचार किया और उन्होने अपने मन की बात वासुदेव से कही।

वासु श्यामबधु को पिता के समान मानता है। उसने कहा—जी, मै वही कहने की सोच रहा था। दोनो ने सलाह मशविरा कर रेवती को पढाने का तय किया।

रेवती पास बैठी सुन रही थी। दो ही फलाँग मे वह अदर चली गयी और मा और दादी तक मैं पढूगी मैं पढूगी खबर पहुच गयी।

मा बोली—ठीक है, ठीक है, तू पढेगी।

दादी चिहक उठी—पढाई क्या री? औरत जात, पढाई क्या होगी? रसाई

सीख, खीर मिठाई बनाना सीख, आलपना बना, पाठ का क्या करेगी ?

रात के समय श्यामबधु आम की लकडी के पीढे पर बठे भात खा रहे हैं, साथ बठी रेवती भी खा रही है। बूढ़ी सामने बैठकर भात ला दाल दे जा आदि हुक्म दे रही है बहू को। बात ही बात म बूढ़ी कहने लगी—अरे श्याम, खा पाठ पढेगी अरे अरे पाठ का क्या होगा ? औरत जात की पढाई कसी?

श्यामबधु ने कहा—कहती है, पढ़ेगी, तो पढे।

रेवती चिढ उठी और दादी को गाली देते हुए कहने लगी—तू जा बूढ़ी डोकरी कही की। और उसके बाद जिद करते हुए बापू मे कहने लगी—नहीं पिताजी, मैं पढूगी ?

श्यामबधु बोले—हा, हा पढेगी, तू। उस दिन बात झूठी ही हुई।

दूसरे दिन शाम को वासुदव ने सीतानाथ बाबू की लिखी 'प्रथम पाठ' किताब लाकर रेवती को दी तो वह खुश होकर, बापू के पास बैठ कर पुस्तक को शुरू स अत तक उलट-पलट कर देख गयी। उसमे हाथी, घोडे, गाय आदि के चित्र देख कर वह खुश हुई। राजा लोग हाथी घोडे रखकर खुश होते हैं, कोई चढ कर खुश होना है, तो रेवी तसवीर देख कर खुश हो रही है। रेवी दौडती हुई जाकर मा को किताब की तसवीरें दिखाने लगी और इसके बाद दादी के पास पहुच गया। दादी थोडी चिढकर बोली—हा,हा, जा। तो रेवती उसे दुतकारने लगी।

आज दिन अच्छा है—श्री पचमी, रेवती सुबह नहा धोकर, नये कपडे पहनकर घर के अदर से बाहर और बाहर से अदर-आ-जा रही है। वासु भाई आयेंगे तो किताब पढायेंगे। बूढी के डर से विद्यारभ के लिए कोई व्यवस्था नहीं हुई है। सुबह लगभग छ घडी के समय वासु आकर पढा गया-अ आ, ह्रस्व ई, दीघ ई, ह्रस्व उ, दीघ ऊ आदि। प्रतिदिन पढ़ाई होने लगी। रोज सुबह शाम वासु आकर पढ़ा जाता। दो साल के अदर रेवती ने काफी कुछ पढ लिया है। मधुराव की छदमाला वह बेझिझक पढ लेती है।

एक दिन रात के समय श्यामबधु खाने बैठे थे कि मा-बेटे म बात हुई। उससे पहले भी शायद बात हुई थी। आज उसी बात का उपसहार हो रहा था।

श्यामबधु ने कहा—मा यह ठीक नही होगा क्या ?

बूढी बोली—हा, अच्छा ही होगा, लेकिन जात पात का पता लगाया ?

श्यामबधु ने कहा—और अब तक क्या कह रहा था ? अच्छे कायस्थ कुल में जन्मा गरीब है तो क्या हुआ, जात तो अच्छी है।

रेवती पास बैठी खा रही थी। इस बात का मम पता नही क्या समझा रेवती ने, वहीं जाने पर उस दिन से उसके रग-ढग बदल गये। तब से पिताजी के सामने वासु भाई पढाने बैठते हैं तो उसे शरम आती है। अकारण सकारण हसी

आती है, सर नआए दोना होठ को जबरदस्ती बद कर वह हसी छिपाती है। वासु पढाने लगता है, तो वह चुपचाप पढती है, कभी कभार हा, हू, बस। पढाई खतम होने पर मुह बद किये मुसकराती हुई अदर भाग जाती है। रोज शाम को बाहर किवाड पकडे किसी की बाट जोहती है। वासु के आने पर अदर चली जाती है। बार-बार बुलाने पर भी बाहर नही निकलती। अब रेवती के बाहर निकलने पर बूढी चिढती है।

देखते ही देखते श्री पचमी से पचमी, दो साल बीत गये। विधि का विधान, किसी के दिन समान नही जाते। फागुन के दिन, कही कुछ नही, अचानक हैजा फैल गया। सुबह गाव मे लोगो ने सुना कि गुमाश्ता श्यामबधु महाति को हैजा हो गया है। देहातो मे हैजे के नाम से ही किवाड दरवाजे बद हो जाते हैं। सब सोचते हैं विशूचिका-बूढी मानो टोकरी लेकर रास्ते पर से आदमी चुग रही है। दरवाजे तक कोई नही आता, घर मे दो औरतें क्या कर पायेंगी ? एक बच्ची है, जो चीखती-पुकारती बाहर भीतर हो रही है। वासुदेव ने सुना, तो स्कूल छोड कर दौडा हुआ आया, न डर है, न भय, न अपने शरीर के लिए चिंता। श्यामबधु के पास बैठकर पैर सहलाता रहा, मुह मे पानी देता रहा। दिन के तीसरे पहर श्यामबधु ने वासु की ओर देख कर ऊघे हकलाते स्वर मे कहा—वा सु ए व ल गा ! वासु चीख पडा। घर मे हलचल मच गयी। रेवती धरती पर लोट, बिलख रही थी। देखते देखत शाम तक समाप्त ! क्या करें, वासु कल का छाकरा और दो स्त्रिया। गाव मे बस उन्ही का ही एक घर कायस्थ का। सास, बहू और वासु, तीनो ने जस-तैसे काम चलाया। श्मशान से लौट आने तक सुबह का तारा उग चुका था। घर मे पैर धरते न धरते रेवती की मा को दस्त हुआ। देखते-देखते दोपहर तक गाव भर मे खबर फल गयी कि रेवती की मा भी नही रही।

दिन गुजर जाता है, किसी के लिए रुका नही रहता। किसी की पालकी पर पाट छतरी तो किसी के लिए बडिया पर कोडा। दिन सभी के बीतते हैं, बीतेंगे भी। देखते-देखते तीन महीने बीत गये। श्यामबधु के घर मे दो गायें थी। तहसील की बकाया रकम के लिए जमीदार के आदमी आकर उन्हे ले गये। हमे पता है जमीदार के रुपया को श्यामबधु शिवनिर्माल्य की तरह मानते थे। एक रुपया भी वसूल हो जाता तो जब तक जाकर कचहरी के खाते मे जमा न कर आते, तब तक उन्हें चैन नही। परतु उन पर रकम बाकी हो या न हो, दोनो गायें दुधारू थी, वह बात पहले ही से जमीदार को मालूम थी। इसके अलावा जमीदार से खेती के लिए जा तीन बीघा जमीन मिली थी, वह भी छीन ली गयी है। हलवाह का अब और क्या काम ? वह भी दाता पूनम के दिन काम छोड कर चला गया। दोना बैल साढे सत्रह रुपये मे बिके। उसम से दोना के

क्रिया कम के बाद जो बचा था, उसी से जैसे-तैसे एक महीना गुजर गया। आज लोटा तो कल पतीला बेच-बाच कर एक महीना और बीत गया।

वासु दोना वक्त आता है। रात एक पहर तक घर पर रहता है। दादी-पोता सोने को जायें, तब लौटता है। वासु पैसे-वैसे देना चाहे, तो दादी पोती काई भी नही लेती। जोर-जबरदस्ती दे भी दे, तो पसे आले मे पडे रहते हैं। यह देख कर वासु अब और नही देता। बूढी जो एक-दो पैसे देती है, उसी से वह समान खरीद लाता है। उसी दो पैसे के सौदे से आठ दिन का गुजारा हो जाता है।

घर पर की छान उड चुकी, नया छाजन चाहिए। वासु ने दो रुपये का पुआल खरीद कर वाडी मे लाकर रख दिया है। नयी छान बनी है। बूढी अब रात दिन नही रोती है। सिफ शाम को बैठी रोती है। रोते रोते वही लुढक जाती है और रात वही बीत जाती है। रेवती उसी के पास सुबक्ते-सुबकते सो जाती है। बूढी को अब अच्छी तरह दिखाई नही पडता। वह पगली-सी हो गयी है। अब रोना छोड रेवती को गाली देने लगी है। इस सारे दुख, सारी दुदशा की जड है रेवती, यह उसने मन ही मन मे तय कर लिया है, रेवती पढने लगी, इसलिए बेटा मरा, बहू मर गयी, नौकर छोडकर चला गया। बैल बेचने पडे, जमींदार के लोग आकर गायें ले गये। रेवती कुलच्छनी है, मुडगी है। बूढी को आखों से दिखाई नही दता, इसका कारण भी रेवती की पढाई है। बूढी गाली बकती होती, तो रेवती की आखो से आसुओ की धारा बहती रहती। डर के मारे वह बूढी के सामने नही आती। बाहर बरामदे म या घर के अदर मुह छिपाये, काठ मारे पडी रहती है। वासु भी दोषी है, क्योंकि रेवती तो पहले पढी हुई नही थी, उसने आकर पढाया, पर बूढी वासु से कुछ नही कहती। वासु नही हो, तो घर पल भर के लिए भी नहो चले। तिस पर जमीदार का आदमी झमेला कर रहा है।

रेवती अब लीलामयी प्रतिभा नही रही। उसका स्वर अब कोई नही सुनता। बाप-मा के मर जाने के बाद से उसे बाहर किसी ने भी नहीं देखा। कुछ दिना तक वह खूब बिलखती रही, पर अब जोर जोर से नही रोती, परतु रात दिन उसकी बडी-बडी आखें छोटी छोटी नील कुइयो की तरह पानी से छलछलाती रहती। उसके छोटे से प्राण, उसी मे छोटा-सा मन एकबारगी टूट गया है। उसके लिए अब दिन रात एक समान हैं। मा-बाप पर गये हैं, वे अब लौट कर नही आयेंगे। इस बात का जसे उसे विश्वास नही। न पेट म भूख है, न आखों म नीद। रात दिन मा-बाप के ध्यान मे डूबी रहती है। दादी के डर से खाने बैठती है। फर्श पर से उठती ही नही। देह मे बस हाड-चाम धकिया रहे हैं। सिफ वासुदेव के आने पर उठ खडी होती है। बडी-बडी आखें उठा उसे एकटक देखती है। वासु के देखने पर धीमी-सी आह भर सर नवा लेती है।

हाथ की गिनती म आज श्यामबधु को मरे पाच महीने हो गये। जेठ के दिन,

ा दोपहर के समय वासु ने दस्तक दी। इस समय वह कभी भी नही आता। ड़ी मा ने कूधते हुए जा कर किवाड खोला। वासु बोला—दादी मा, डेपुटी स्पेक्टर हरिपुर थान मे बैठकर बच्चो से पाठ पूछगे। सब लडके जायेंगे मुझे ट्टी मिली है। मै लडका का लेकर कल सुवह जाऊगा। पाच दिन लग जायेंगे।

रेवती किवाड की आड मे खडी सब सुन रही थी। लथ से वही जमीन पर ढाल बैठ गयी। अच्छा ही हुआ कि किवाड पकडे खडी थी नही तो गिर ड़ती। वासु ने पाच दिन के लिए चावल, नमक, तेल, बैंगन वगैरह लाकर आगन रख दिये। और बूढी को प्रणाम कर शनिवार के दिन शाम के समय निकल ा। बूढी बोली—देख वेटा, धूप मे घूमना नही। सेहत का खयाल रखना। मय से खा-पी लेना। इतना कहकर उसने आह भरी। रेवती एकटक वासु को ा रही थी। आज का देखना एक और किस्म का था। उसके पहले वासु आयें वह सर झुका लेती थी। आज वह भाव नही है। आज चार आखें मिली—आखें र लेना किसी के बस की बात नही।

वासु चला गया है। दिन ढल गया है। घर और वाहर चारो ओर अधेरा र गया है। रेवती जिस तरह ताक रही थी वैसे ही ताकती रह गयी है। बूढी पुकारने पर उसकी चेतना लौट आयी। घर और वाहर सब अधकारमय था।

ती बैठी-बैठी दिन गिन रही है। आज छह दिन हुए। मा-बाप के गुजर ने के बाद उसन बाहर के दालान का देखा नही था। किंतु आज वह दो बार हर हो आयी है। समय अदाजन छह घडी, हरिपुर मे स्कूल के लडको के लौटते लोगो मे कानाफानी होने लगी—हरिपुर से लौटते समय गोपालपुर के बरगद नीचे पडित जी को हैजा हुआ। चार बार दस्त हुए और वह आधी रात चल । गाव वालो ने हाय हाय मचायी। लडके, बच्चे, माए, लडकिया, औरतें सब -फूट कर रो पडे। कोई बोली—अहा, कैसा सुदर रूप! किसी ने कहा—कसा र! कोई कहने लगी—गली मे से जाते तो, कसे शात, कैसे भला।

रेवती ने सारी बातें सुनी, बूढी ने भी। रो-रो कर बूढी का गला रुध गया र वह रो नही सकी। अत मे उठकर उसने कहा—अहा वेटे, तूने अपनी ही द्व से प्राण गवाये। यानी वह रेवती को पढाने की दुर्बुद्धि के कारण ही मर ा, नही तो मरा नही होता। सुनते ही रेवती घर के अदर जा कर निढाल हो र पडी है। शोर शब्द कुछ भी नही।

वह दिन बीता, दूसरे दिन सुबह रेवती को पास नही देखकर बूढी ने चीख : पुकार लगायी—अरी ओ रेवती ओ रेवी अरी ओ मुहजली आग ी! बूढी पगली की तरह हो गयी है। रोना चीखना कुछ भी नही, सिफ गुस्से रवती को गालिया दे रही है। अरी ओ मुहजली आग लगी बूढी को

आखो मे दिखाई नही पड रहा है। टटोलते-टटोलते जाकर उसने रेवती को पाया। पुकारने पर कोई जवाब नही मिला, तो उसकी देह सहला कर देखा। काफी बुखार है, देह से आग फूट रही है, चेत नही, बूढी देर तक उसके पास बैठी रही। सोचती रही, क्या करें, किसे बुलायें। कुछ तय नहीं कर सकी, तो झल्लाकर बोली—जो तेरा अपना किया हुआ है, उसका क्या इलाज ? यानी तूने पढा, इसलिए बुखार हुआ, इसका मैं क्या कर सकती !

रेवती धरती से चिपक गयी है। आखें नही खोलती। बुलाने पर जवाब नही देती। ऊन्‌-तू तक नही। आज छह दिन हो गये। रेवती इस बीच दो चार बार चीख चुकी। उसकी चीख सुन कर बूढी उसके पास गयी। शरीर सहला कर देखा, हाथ-पैर ठडे लग रहे थे। पुकारने पर हा-हू किया। आखें फाडे एकटक देख रही है। कुछ न पूछने पर भी बक रही है। कोई वैद्यराज देखते, तो 'तृष्णा दाह पुलापश्च आदि श्लोक पढ कर कहते—सनिपातस्य लक्षण। पर बूढी को खुशी हुई। देह तपती नही है। बात नहीं कर रही है अब बालने लगी है। देख नहीं रही थी, अब आखें खोलने लगी है। पानी माग रही है। दो-चार पथ्य हो जायें, तो लडकी उठ बैठेगी।

तू सोती रह, मैं तेरे लिए पथ्य बना लाती हू। कह कर बूढी उठ गयी। पथ्य क्या बनाती ? घर भर मे टोकरी, छाज, हडी, हडिया सब कुछ टटोलने पर भी अनाज का एक दाना तक नही मिला। गहरी सास लेकर पल भर के लिए बूढी वहीं लथ से बैठ गयी। वासु पाच दिनो के लिए चावल दाल लाकर दे गया था। उसी मे किसी तरह दस दिन गुजर गये। बूढी की दृष्टि ठीक होती, तो समझ गयी होती। घर मे लोटा-बरतन कुछ भी नही। एक फूटा लोटा हाथ लगा। उसी को लेकर वह हरि साहू की दुकान चल पडी।

हरि साहू हाथो मे लोटा देख मतलब ठीक ठीक समझ गया। बूढी ने अपना अभिप्राय बताया, तो उसने लोटे को लेकर इधर उधर देखा—नही, नहीं, घर म चावल नही है, तिस पर इस फूटे लोटे को रखकर कौन चावल देगा ? यह बात नही कि हरि के घर मे चावल नही था, देने की इच्छा भी थी, पर सस्ते मे लेना है।

चावल नही है, सुन कर बूढी के सर पर मानो आसमान टूट पडा क्या करू लडकी बुखार से उठी है क्या लेकर दूगी उसके मुह मे ! वहीं घडी भर के लिए बैठ गयी। उसने दो बार हरि को देखा। फिर बोली—जाऊ, क्या कर रही है देख आऊ।

वह लोटा लेकर लौट रही थी कि हरि ने कहा—दे दो, देखता हू, घर मे क्या है।

हरि ने लोटा रख लिया और उसके बदले चार मान चावल, आधा मान दाल,

कुछ नमक दे दिया।

अब तक बूढ़ी ने दातून तक नही की थी। देह और मन की बात क्या कहूं! घर पहुच कर रेवती को पुकारने लगी। उसका विश्वास था कि रेवती अच्छी हो गयी है। पानी ला देगी और वह भात बना देगी। रेवती का कोई जवाब नही मिला, तो वह झल्ला कर पुकारने लगी—अरी ओ रेवती ओ रेवी अरी ओ मुहजली आग लगी ! फिर भी कोई जवाब नही।

उधर रेवती का सन्निपात रोग क्रमश बढ रहा था। भयानक यत्रणा से देह धीरे-धीरे शीतल होती जा रही थी। जीभ सूखती जा रही थी। वह किसी तरह बाहर आ गयी। अच्छा नही लगा। बाडी की ओर जाकर बरामदे मे बैठ गयी। दिन ढलने का हुआ। हवा तेज बह रही थी। वह दीवार के सहारे बैठ गयी। पूरी बाडी को देख गयी। बापू ने पिछले साल यह केले का पेड लगाया था। फूल खिला है। दो साल पहले मा ने अमरूद का पड लगाया था, कितना बडा हो गया है! *उस पर भी फूल खिले ह। उस पेड को देखकर मा की याद* आयी। शाम हो आयी है, उसने आकाश की ओर देखा, पहले पहर का तारा चमक रहा था। उसम से किरणें फूट रही थी। ध्यान लगाये रेवती उस तारे को एकटक देख रही थी अपलक। तारे का विस्तार धीरे धीरे बढ रहा था चक्र का आकार हो गया है, वह और बढ रहा है और उज्ज्वल हो रहा है। अहा, यह किसकी मूर्ति है तारे मे। शातिदायिनी, प्रेममयी, आनदमयी माता की अभयमूर्ति बैठी हुई मानो स्नेह से गोद म उठा लेने को बुला रही है। मा ने दो किरण हाथ पसार दिये। किरणो ने आकर चक्षु का स्पर्श किया और वे हृदय के अदर प्रविष्ट हुई। उस अधेरे के अदर और कोई शब्द नही था—केवल श्वास के स्वर। अत मे मा मा दो बार अस्पष्ट रूप से सुनाई पडा। बाडी निस्तब्ध, मौन थी।

उधर बढी ने सरकते-सरकते जाकर रेवती के सोने की जगह टटोला, कोई नही था। सारा घर, बाहर आगन, ढेंकीशाल कही नही। सोचा, बुखार ठीक हो गया है, बाडी की ओर घूम रही होगी। वही पुकार—अरी ओ रेवती ओ रेवी अरी ओ मुहजली आग लगी फिर गूजी। वह बाडी की तरफ, आगन की ओर गयी। बरामदा जमीन से दो हाथ की ऊचाई पर था, एक हाथ चौडा—अरे, तू यहा बैठी है। देह सहला कर बूढ़ी पहले चौंक पडी—उसने एक बार और सर से पर तक उसे सहला दिया, फिर नाक के सामने हाथ रखकर चीख पडी। इसी के साथ-साथ धडाम की आवाज आयी, बरामदे के नीचे से।

श्यामबधु महति के घर के किसी भी व्यक्ति को दुनिया म फिर कोई नही देख सका। पडोसिया न रात पहर गय, आखिरी बार सुना—अरी ओ रेवती ओ रेवी अरी ओ मुहजली आग लगी!

ा विवेचन

नेवास उद्‌गाता

फकीरमोहन सेनापति (1843 1918) आधुनिक उडिया साहित्य के प्राण
ष्ठाता थे। जन्म से दरिद्रता, अभाव व दुख पीडित, उच्च शिक्षा से वचित
रमोहन का प्रारभिक काल अत्यत दयनीय था। पितहीन फकीरमोहन
श्वर बदरगाह मे नावो के पालो की सिलाई की निगरानी से लेकर कचहरी
ोहिरिरी, रजवाडा म दीवानगीरी, बालेश्वर मिशन स्कूल म अध्यापन आदि
वलबन से जीवन और जीविका के बीच नित्य सघर्षशील रहे। इसलिए
द उनके लिए जीवन की परिभाषा अलग थी, और उस परिभाषा ने शायद
परपरा से हट कर कुछ कर दिखाने का बल दिया। वह जन्म से विद्राही थे।
ा सेनापति नाम को सार्थक बनाते हुए वे अन्याय के विरुद्ध असीम साहस से
रहने का बल रखते थे। इसी कारण शायद उस समय उडिया भाषा के
द्ध हुए षडयत्र का मुकाबला इस अकेले आदमी ने किया और उडिया भाषा
गयी, नही तो उसका साहित्य तो दूर की बात रही, शायद आज उडिया
ा अपनी प्राचीनता और परपरा, तथा हर दिशा मे समथ सौंदय के बावजूद
ऐतिहासिक भाषा बन कर रह गयी होती।

प्रारभिक काल मे लघु कथा (शाट स्टोरी) को साहित्य क्षेत्र मे सम्माना-
स्थान प्राप्त नही था। उन्नीसवी सदी के अतिम पर्याय (दौर) मे ही इसे
महत्वपूर्ण स्थान मिला। उस समय फकीरमोहन सेनापति ने लछमनिया
68) शीर्षक कहानी लिखी थी। यह कहानी 'बोधदायिनी' नामक पत्रिका
काशित हुई थी। यह आधुनिक उडिया साहित्य की पहली कहानी है, जिसकी
ा उनके 'आत्मचरित' से मिलती है। यह कहानी उपलब्ध नही है। कहा जाता
' यह कहानी भारतीय स्वाधीनता सग्राम को लेकर तत्कालीन ब्रिटिश सरकार
रुद्ध लिखी गयी थी। देहात म रहने बसने वाले सामान्यजन पर 1857 के

आदोलन की कैसी प्रतिक्रिया हुई थी, उसका सेनापति ने इस कहानी के माध्यम से चित्रण किया था।

फकीरमोहन तक कहानी झूठ बोलती आयी और फिर मानो एकाएक उसका रूप बदल गया। तब तक राजा-रानी, राजपूत राजकन्याओ को प्रेम करने का हक था। उनकी समथता और क्षमता, उनका प्रणय विरह कहने के लिए कहानी थी, जो सिफ अदभुत अलौकिकता, ऐंद्रजालिक कल्पना का वणन मात्र करती आयी थी, या उससे हटकर देवी-देवताओ के सबध मे कहकर उनकी चमत्कारिता का वणन करते हुए नीति उपदशो का व्याख्यान करती रही, वह भी पद्य मे और एक बोझिल अलकारिक, पाडित्यपूण भाषा मे परतु फकीरमोहन ने साधारण मानव के, अति-साधारण समाज के भाव-अभाव, हय विषाद को अपने साहित्य म आधार के रूप मे अपनाया। उनके साहित्य ने साधारण मनुष्य के सुख-दुख की बात कही है, अतिवास्तव सत्य को प्रकाशित किया है। फकीरमोहन को उनकी रचना शैली न नही, बल्कि उनके साहित्य की आत्मा न प्रतिष्ठित किया है। उसी से उन्हें आदर प्राप्त हुआ है और लोकप्रियता मिली है। आज शैली मे आदचयजनक परिवतन हो जाने पर भी एकात सत्य को प्रकाशित करने के सदभ म उनका साहित्य चेतन और अवचेतन हृदय को आदोलित और आमोदित करता है। ब्रिटिश शासन काल—भारत की पराधीनता, आर्थिक शोषण एव नागरिक अधिकारो के हनन का इतिहास है। उस समय बने स्वार्थी कानूनो के द्वारा देश-भर म अभाव, उत्पीडन, विशृखलता, असतोष, विद्रोह, आदि का ही विकास हुआ। शोषण और अत्याचार बढकर एक भयानक स्थिति की सृष्टि हुई। उससे फकीरमोहन का सचेतन व्यक्तित्व, उनकी अम्लान प्रतिभा, उनका क्रातिदर्शी हृदय कहानी से बढकर पात्रा पर केंद्रित हुआ और तात्कालिक समाज की असख्य अनीतियो, कुसस्कारो, अत्याचार और शोषण की कटु आलोचना। उसका परिहासपूण विद्रूप और उसके प्रतिकार मे विद्रोह करने को आग्रही हुआ, यही उनकी कहानियो की विशेषता है। फकीरमोहन न अपन कत्तव्य बोध को ही अपनी साहित्य सृष्टि का आधार बनाया था। वही उनकी साहित्य सृष्टि का उद्देश्य, लक्ष्य या आदश, जो भी कह, था, और इसमे उन्ह साथकता मिली थी। फकीरमोहन से लेकर यही साहित्यिक अभिव्यक्ति उडिया कथा साहित्य के परवर्ती पर्याय (काल) तक थी।

फकीरमोहन के साहित्य की भाषा के सबध मे कुछ कहना उचित होगा। उडिया भाषा मे साहित्यिक सजन का आरभ 'बौद्धगान ओ दोहा' या 'चर्यागीतिका' से हुआ था। इस ग्रथ के गीतो को उडिया, बगला, असमिया आदि भिन्न-भिन्न भाषाओ के विद्वान् अपनी भाषा की आद्य काव्य-सृष्टि मानत है। और इन गीतिकाओ म इन्ही भाषाओ की काव्य सृष्टि के लक्षण कम बेशी मौजूद

भी हैं। इसकी रचना लगभग आठवी सदी से ग्यारहवी सदी की अवधि मे हुई थी। इसके पश्चात सारलादास की 'महाभारत' की रचना की अवधि म जिस काल का अतर है वह उडिया साहित्य के इतिहास म अधकार युग है। अध्यापक कवि श्री चिंतामणि बेहेरा के शब्दो मे उडिया साहित्य के आदिजनक माने जान वाले महाकवि सारलादास (पद्रहवी सदी) ने सस्कृत महाभारत का अनुसरण किया है, फिर भी जसे महाकवि व्यास ने अपने महाभारत को समग्र भारतवष के जीवन-वेद के रूप मे परिणत किया ह, उमी तरह सारलादास ने भी उडिया महाभारत को उडिया जाति का जीवन-वेद बनाया है। उडिया जाति के स्वप्न, साधना, आदश, और सस्कृति के प्रतिबिंब के साथ उसका सामाजिक चित्रण और चारित्रिक यथायता इस महाभारत मे लक्षणीय है। उडिया महाभारत की भाषा आम आदमी की भाषा है जिसमे न आडबर है, न कृत्रिमता, पर इसके पश्चात साहित्य-सष्टि म धीरे-धीरे कृत्रिमता बढती गयी। भाषा सजी सवरी, आलकारिक, सस्कृतनिष्ठ, पाडित्यपूण होती गयी। चार सौ वष के पश्चात फिर से फकीर मोहन ने उसी भाषा को अपनाया, उन्ही शब्दो के प्रयोग से उनका साहित्य लालित्यपूण बना और अभिव्यक्ति आम आदमी की अभिव्यक्ति बनी। समाज ने उन्हें अपनी बातें समझ निकटता से देखा, क्योकि उसमे आम आदमी, साधारण-से-साधारण आदमी के मन की गहराई का छूनेवाली शक्ति थी और उसी शक्ति ने गद्य शैली की प्रतिष्ठा की। इसी कारण उडिया के विद्वान आलोचक उन्हे 'व्यास कवि' कहकर सम्मान देते हैं।

फकीरमोहन ने अपने 'आत्मचरित' मे लिखा है उस कहानी (लछमनिया) को लोगो न आग्रह से पढा। पर कितनो ने? मैं बालेश्वर से आ गया और रजवाडा मे काम करते समय दीघ समय तक साहित्य रचनाए बद रही।' फकीरमोहन की अनुपलब्ध कहानी 'लछमनिया' के बाद उनकी दूसरी रचना है 'रेवती (रचनाकाल 1898, प्रकाशन काल 1900), 'रेवती' की शिल्पगत साथकता और अश्रुल आवेदन ने इस कहानी के लिए उडिया लघुकथा के क्षेत्र म एक उल्लेखनीय तथा सायक स्थान बनाया है। उडिया लघुकथा के क्षेत्र म 'रेवती' एक अम्लान सृष्टि है। यह कहानी ही फकीरमोहन की एकमात्र प्रेम कहानी है। फकीरमोहन ने शायद तत्कालीन सामाजिक रुचि से प्रभावित होकर अपने साहित्य मे कामज या रूपज प्रेम को स्थान नही दिया था। फिर भी रेवती' एक प्रेम कहानी है जिसमे वासुदवऔर रेवती का प्रणय देहज नही—आत्मज है। इम कहानी म भी उनकी अय कहानियो की तरह दा वग हैं—एक शोषक, दूसरा शोषित। श्यामवधु शोषित वग के थे। उनकी मत्यु के पश्चात उनकी सारी ईमानदारी और निष्ठा के बावजूद उनके घर से तहसील की बकाया रकम के बहाने दो दुधारू गायें ले लेना या खेती की जमीन छीन लेना, शोषण का एक

मार्मिक नमूना है। इस कहानी के जरिये फकीरमोहन ने तात्कालिक समाज के कुसस्कार और अशिक्षा का मार्मिक चित्रण किया है। उस समय समाज आत्मकेंद्री था। एक-दूसरे की सहायता तो दूर की बात रही, अपने को सभाले रखने की प्रवृत्ति इतनी सशक्त थी कि एक परिवार के सपूण विलीन होने तक का निर्लिप्त भाव से देखने वाले लाग थे। बुजुर्गो मे स्त्री शिक्षा के प्रति घोर विराध था, जो दादी मा जैसी पात्र के जरिय चित्रित हुआ है। दादी मा मे यह धारणा जमकर थी कि रेवती की पढाई के कारण ही सवनाश हुआ। वह कुलच्छनी है। कुढगी है। उसने पढा, इसलिए सब विनाश हुआ। अत मे रेवती के प्रति गालिया वकने के अलावा, हर तरह से वेसहारा दुखी बुढिया के मन का शाति देन के लिए और कोई चारा नही था।

कहानी की गति म यथाथता है, अस्वाभाविकता कही भी नजर नही आती। बूढी की सबसे प्यारी थी रेवती जिसे वह कोसती थी और उसी रेवती के लिए वह जीती रही। इस कहानी की कथावस्तु, कथन शैली, भाषा और चरित्र-चित्रण मे कोई आडवर नही है। यह एक अतिवास्तववादी मार्मिक कहानी है। इसकी आडवरहीन सरल सुदरता यथाथ मे अतुलनीय है।

□ बंगला

आद्य कथाकार रवीन्द्रनाथ टैगोर

रवीन्द्रनाथ टैगोर (1861-1941) ने न केवल साहित्य को अद्वितीय योगदान दिया, बल्कि संगीत और चित्रकला को भी नये आयाम दिये। टैगोर पहले भारतीय साहित्यकार थे, जिन्हें साहित्य का नोबेल पुरस्कार मिला। सन् 1901 में उन्होंने शान्तिनिकेतन में 'विश्वभारती' नामक संस्था की स्थापना की, जो अब एक विश्वविद्यालय है।

टैगोर मूलतः कवि थे और आठ वर्ष की अवस्था में ही उन्होंने कविता लिखना आरम्भ कर दिया था, लेकिन उन्होंने नाटक, उपन्यास और कहानियां भी लिखीं। उनकी कविताएं बंगाल के दैनिक जीवन का अंग बन चुकी हैं और कहानियां विश्वविख्यात हो चुकी हैं।

उनकी पहली कहानी 'भिखारिन', बंगला की भी प्रथम मौलिक कहानी सिद्ध होती है—और यह कहानी उन्होंने केवल 16 वर्ष की उम्र में लिखी थी।

टैगोर केवल बंगाल के ही नहीं, तमाम भारत, बल्कि तमाम पूर्व के थे। उनकी रचनाओं में धर्म, भावुकता, कविता, संगीत, गान, ज्ञान, रहस्यवाद, उपदेश, सभी का सम्मिश्रण है।

टैगोर की प्रमुख रचनाएं हैं—'गीतांजलि', 'माली', 'कबीर के सौ पद', 'चित्रा', 'डाकखाना', 'घर-बार', 'गोरा', 'द रेड ओलिएंडर्स', 'द रेक', 'नौका डूबी' आदि।

प्रथम मौलिक कहानी सन् 1877 मे प्रकाशित

□ भिखारिन

प्रथम परिच्छेद

कश्मीर की दिगतव्यापी, जलदस्पर्शी शैलमालाओ में एक [illegible] है। छोटे छोटे झोपडे झाड झखाडो के झुटपुटे मे प्रच्छन्न हैं। वहीं [illegible] वृक्षो की छाया म से दो-एक क्षीणकाय, चचल, क्रीडाशील [illegible] चरण भिगोते हुए, छोटे-छोटे कँकडो पर द्रुत पग धरते हुए [illegible] और पत्तो को अपनी लहरो मे उलटते-पुलटते निकट के [illegible] पोट हो गिर रहे हैं। दूरव्यापी निस्तरग सरोवर, [illegible] की स्वर्णिम किरणो मे, सध्या की स्तर-विन्यस्त मेघ[illegible] की पिघलती जुन्हाई मे, आभासित हो शैल-लक्ष्मी के [illegible] रात हस रहा है। घने वृक्षो से घिरा अधेरा गाव [illegible] अधकार का घूघट काढे धरती के कोलाहल से [illegible] हरे भरे खेतो मे गायें चर रही है। देहाती लडकिया [illegible]। गाव के अधेरे कुज मे बठा अरण्य का मादुन [illegible] (सदृश पछी) अपने अन्तर का विषण्ण गीत गा रहा है [illegible] का स्वप्न हो।

रामायण का पाठ करता था, दुमद रावण द्वारा सीता-हरण पढ कर क्रोध से ति मिला उठता था, दस वष की कमल देवी उसके मुख की ओर स्थिर हरिण-उठाकर चुपचाप सुनती थी, अशोक वन म सीता का विलाप-वणन सुनकर अप बरोनिया को आसुआ से भिगो लेती थी। क्रमश गगन के विशाल आगन मे ला का दीया जलने पर शाम के अधेरे जवार मे जुगनू दिदिप्यान लगत, ता वे दो एक-दूसरे का हाथ पकडे कुटिया मे लौट आते थ। कमल बडी अभिमानिनी थ किसी के कुछ कह-कहा देने पर वह रूठ कर अमरसिंह के सीने म मुह छिपा रोती रहती और अमर उसका ढाढस वधा, उसके आमू पाछ देता। दुलार क उसके आसुओ से भीगे गाल पर चुबन करता तो वालिका के मार दद दूर हो जा थे। दुनिया मे उसका कोई नही था, केवल एक वेवा मा थी और स्नेह भरा अमर सिंह था। वे लोग ही वालिका के रूठ-मनौवल, ढाढम दिलासे और खेल-कूद आश्रय थे।

वालिका के पिता गाव के सम्भ्रान्त व्यक्ति थे। राज्य के ऊचे आहद के कम चारी होने के कारण गाव के सभी लोग उनका सम्मान करते थे। सम्पदा की गा मे पली, सम्भ्रान्त होने के कारण सुदूर चद्रलोक म रहकर कमन कभी गाव के लडकियो से मिली-जुली नही, बचपन म ही अपने मनपसन्द साथी अमरसिंह के साथ खेलती फिरती रही। अमरसिंह सेनापति अजितसिंह के पुत्र हैं धन नही किन्तु उच्च वशजात हैं। इस कारण कमल और अमर म विवाह का सम्बध तय हो चुका है। एक बार मोहनलाल नामक एक धनिक के पुत्र के साथ कमल के विवाह का प्रस्ताव आया था लेकिन कमल के पिता उसका चरित्र अच्छा नही जानकर इस प्रस्ताव से सहमत नहीं हुए थे।

कमल के पिता की मृत्यु हुई। धीरे-धीरे उनकी मारी सम्पत्ति नष्ट हा गयी, उनकी पत्थर से बनी हवेली धीरे धीरे टूट गयी, क्रमश उनका पारिवारिक सम्मान भी शनै-शनै ह्रास हुआ और धीरे धीरे उनके अनगिनत मित्र भी एक-एक कर खिसक गये। अनाथ विधवा ढही हुई इमारत छोडकर एक छोटी-सी कुटिया मे रहने लगी। सम्पदा के सुखमय स्वग स भयानक गरीबी म गिरकर विधवा बहुत कष्ट झेल रही है। सम्भ्रम बचाना तो दरकिनार, जीवन-रक्षा का भी कोई सबल नही, दुलारी बेटी किस प्रकार गरीबी का दुख सहेगी ? स्नेहमयी माता भीख माग कर भी कमल को गरीबी की धूप से बचाती रही।

अमर के साथ कमल का विवाह शीघ्र ही होगा, विवाह म अब दा-एक हफ्ते ही बाकी हैं। अमर गाव के पथ पर घूमते हुए कमल म अपने भविष्य-जीवन की कितनी ही सुख भरी कहानिया सुनाता, बडे होने पर वे दोनों उस पहाड की चोटी पर कितने ही खेल खेलेंगे, उस सरोवर के जल म कितना ही तैरेंगे उस मौलश्री के कुज तले कितने ही फूल बीनेंगे। इन्ही बातो पर चुपके चुपके गम्भीर भाव से

वे परामर्श करते थे। बालिका अमर के मुख से अपनी भविष्य-क्रीडाओ के बारे मे सुनकर आनन्द से उत्फुल्ल हो विह्वल नयनो से अमर की ओर देखती रहती। इस प्रकार जब ये दोनो बालक बालिका कल्पना के धुधली जुन्हाई भरे स्वर्ग मे खेल रहे थे, राजधानी से खबर आयी कि राज्य की सीमा पर युद्ध छिड गया है। सेनानायक अजितसिंह युद्ध मे जायेंगे और युद्ध शिक्षा देने के लिए पुत्र अमरसिंह को भी साथ ले जायेंगे।

सध्या हो गयी है। शैल शिखर पर वृक्ष की छाया मे अमर और कमल खडे हैं। अमरसिंह कह रहे है—कमल, मैं तो चला, अब तू किससे रामायण सुना करेगी? बालिका डबडबायी आखो से उसके मुख की ओर देखती रही।—सुन कमल, यह अस्ताचलगामी सूर्य कल फिर उगेगा, लेकिन तेरी कुटिया के दरवाजे पर मैं दस्तक देने नही आऊगा। बता फिर किसके साथ तू खेला करेगी? कमल ने कुछ नही कहा, केवल चुपचाप देखती रही। अमर ने कहा —गुइया, अगर तेरा अमर लडाई के मैदान मे मर गया तो कमल अपनी छोटी-छोटी बाहो से अमर के सीने मे लिपटकर रो पडी। बोली—मैं तुमसे प्रेम जो करती हू अमर, तुम मरोगे क्या भला? आसुओ से बालक के नयन भर आये, झटपट पोछकर बोल पडा—कमल, आ, अधेरा घिरता आ रहा है। आज आखिरी बार तुझे कुटिया तक पहुचा दू। दोनो एक-दूसरे का हाथ पकडे कुटिया की ओर चल पडे।

अमर पिता के साथ उसी रात गाव छोडकर चला। गाव के अन्तिम छोर पर पहाड की चोटी तक उठकर एक बार उसने पीछे पलटकर देखा, पहाडी गाव चादनी मे सो रहा है, चचल झरना नाच रहा है, निद्रित गाव मे सारा कोलाहल स्तब्ध हो गया है, बीच बीच मे गडरिया के एकाध गीत का अस्पष्ट स्वर ग्राम-शैल के शिखर तक पहुचकर विला जा रहा है। अमर ने देखा, कमलदेवी की लतरो से लिपटी छोटी सी कुटिया धुधली चादनी मे सो रही है। सोचा, शायद उस कुटिया मे इस समय सूना दिल लिये मर्म पीडा से दुखी बालिका तकिये मे अपना नन्हा सा मुख छिपाये उनीदी आखो से मेरे लिए रो रही है। अमर की आखें डबडबा आयी। अजितसिंह ने कहा—राजपूत बालक! युद्ध यात्रा के समय रो रहा है? अमर ने आसू पोछ डाले।

जाडे के दिन। दिन का अन्त हो रहा है, गाढे अधेरे बादलो ने घाटी, गिरि-शिखर कुटिया, वन, झरना, झील, खेत सब कुछ लील लिया है, लगातार बर्फ गिर रही है, तरल तुषार से सारा शैल ढका है। सारे पत्रशून्य, क्षीण वृक्ष शुभ्र मस्तक लिये स्तम्भित से खडे हैं, भयानक तीव्र सर्दी मे हिमालय भी मानो सुन्न पड गया है। जाडे की इस साझ को विषाद-भरे अधेरे मे से गाढी, वाष्पपूर्ण स्तम्भित मेघराशि को भेद कर एक मलिन मुख फटे कपडो मे, गरीब लडकी आसू भरे नैन लिये पहाड के पथो पर घूम रही है तुषार से पदतल पत्थर-सा सुन्न पड

गया है, सर्दी से सारा शरीर काप रहा है, चेहरा नीला पड गया है, बगल मे दो एक नीरव बटोही चले आ रहे है, अभागिन कमल करुण नेत्रो से एक एक बार उनके मुह की ओर निहार रही है, कुछ कहने को होकर वह नही पा रही है, फिर आसुओ से आचल भिगोती तुषार स्तर पर अपने पगचिह्न अंकित कर रही है। कुटिया मे बीमार मा बिस्तर से लग गयी है, दिन भर इस बालिका को मुट्ठी भर भी खाने को नही मिला, सुबह से शाम तक वह रास्तो पर भटक रही है, साहस कर यह भीरु बाला किसी से भीख नही माग सकी है, बालिका ने कभी भीख नही मागी है, कैसे भीख मागी जाती है, नही जानती। क्या कहा जाता है, यह भी नही जानती। बिखरे हुए बालो मे उस नन्हे-से करुण मुख को देख कडाके की सर्दी मे ठिठुरते हुए उसके क्षुद्र शरीर का देख, पत्थर भी पिघल जाये। धीरे धीरे अधेरा गाढ़ा हो गया, निराश बालिका टूटा दिल और सूना आचल लिये कुटिया मे लौटी आ रही है, लेकिन उसके सुन्न पैर अब चलते नही। पथ के किनारे तुषार शैया पर लेट गयी, शरीर और भी सुन्न पडने लगा, बालिका समझ गयी कि धीरे धीरे निर्जीव होकर तुषार से दबकर मर जायेगी। मा की याद कर वह रो पडी और हाथ जोडकर बोली—हे मा भगवती ! मुझको मार मत डालो, मेरी रक्षा करो, मेरे मर जाने पर मेरी मा रोयेगी। मेरा अमर रोयेगा। धीरे धीरे बालिका अचेतन हो गयी। मेह बरसने लगा, रात बढ़ने लगी, बर्फ जमती रही, बालिका अकेली पहाडी पथ पर पडी रही।

द्वितीय परिच्छेद

कमल की मा टूटी कुटिया मे बीमार बिस्तर पर पडी है, टूटी झोपडी मे ठडी हवा सरसराती प्रवेश कर रही है। विधवा फूस के बिस्तर पर थर-थर काप रही है। घर अधेरा है कोई भी दीया जलाने वाला नही है, कमल सवेरे से भीख मागने गयी है, अब तक लौटकर आयी नही, हर पदचाप सुन विधवा चौंक चौंक पडती कि कमल आ रही है। कमल को ढूढ लाने के लिए विधवा कितनी ही बार उठने की कोशिश करती रही, किन्तु उठ न सकी। कितनी ही प्रकार की शकाओ से व्याकुल हो मा कातर क्रन्दन करती हुई देवता से प्रार्थना कर चुकी है। आसुओ से भीगे शब्दो मे कहा है—मैं अभागिन हू, मेरी क्यों न मौत हुई ? जो बच्ची भीख मागना नही जानती, उसको भी आज अनाथिन-सी द्वार के बाहर खडा होना पडा। नन्ही बच्ची ज्यादा दूर भी नही चल सकती, वह इस अधेरे मे, बर्फ मे, बारिश मे, किस तरह जिन्दा रह सकती है ? दो-एक पडोसी विधवा को देखने आये थे। विधवा ने उनके पैर पकड कर आसू भरे नैनो से कातर विनती की—मेरी कमल राह से भटककर कहा मारी मारी फिर रही है, एक बार उसको ढूढ़ लाओ। उन लोगो ने कहा—इस बर्फ म, अधेरे मे, हम लोग घर के बाहर नही जा

सकेंगे। विधवा ने रोकर कहा—एक बार जाओ, मैं अनाथिन गरीब हू, धन नहीं, तुम लोगो को क्या दू ! बताओ नन्ही-सी बच्ची, वह रास्ता नही जानती, दिन-भर आज उसने कुछ खाया नही। उसको उसकी मा की गोद मे ला दो, ईश्वर तुम्हारा कल्याण करेंगे ! किसी ने भी सुना नही, इस वृष्टि-वज्रपात मे कौन बाहर निकलेगा ! सभी अपने-अपने घर लौट गये। धीरे धीरे रात बढने लगी। रो रोकर दुबल विधवा लस्त पस्त हो गयी है, निर्जीव-सी अपने बिछावन पर पडी है, ऐसे ही समय बाहर पैरो की आहट सुनायी पडी। दरवाजे की ओर देखती हुई विधवा धीमे स्वर मे बोली—बेटी कमल, आ गयी ? किसी ने बाहर से रूखी आवाज मे पूछा—घर मे कौन है ? कुटिया से कमल की मा ने जवाब दिया। वह शाखादीप हाथ म लिये कमरे मे चला आया और कमल की मां से कुछ बोला। सुनते ही विधवा चीखकर बेहोश हो गयी।

तृतीय परिच्छेद

इधर तुषार-क्लिष्ट कमल ने धीरे धीरे चैतन्य प्राप्त कर आखें खोलकर देखा—एक बडी-सी गुफा, इधर-उधर बडे-बडे चटटान खड फैले पडे हैं, गाढे धुए के बादल से गुफा भरी हुई। उसी बादल के धुधलके को भेदकर शाखादीप के आलोक से प्रकाशित कई कठोर दाढी वाले चेहरे कमल के मुख की ओर देख रह हैं। प्राचीर से कुल्हाडी, कृपाण आदि अस्त्र झूल रहे हैं, कुछ मामूली गहृ-सामग्री भी इधर-उधर बिखरी पडी है। बालिका ने भय से आखें मूद ली। फिर उसने आखें खोली ता एक ने पूछा—कौन हो तुम ? बालिका जवाब न दे सकी। बालिका की बाह पकडकर जार से हिलाते हुए उसने फिर पूछा—कौन है तू ? कमल ने भयभीत, धीमे स्वर मे कहा—मैं कमल हू। उसने सोचा था कि इसी जवाब मे उसका सारा परिचय उनको मालूम हो गया होगा। एक ने पूछा—आज शाम का ऐसे बफ पानी के वक्त तुम रास्ते पर क्या घूम रही थी ? बालिका से अब रहा न गया। वह रो पडी, रुधे स्वर मे बोली—आज मेरी मा को दिन-भर खाना नही मिला। सब लोग हस पडे। उनके निदय ठहाके से गुफा गूज उठी। बालिका के मुह की बात मुह मे ही रह गयी। कमल ने भय से आखें बन्द कर ली। डर से रोकर बोल पडी—मुझको मेरी मा के पास ले चलो। फिर सभी लोग हस पडे। धीरे-धीरे उन लोगा ने कमल से उसका घर, पिता-माता का नाम आदि जान लिया। अन्त मे एक ने कहा—हम लोग डाकू हैं, तू हमारी कैद मे है, तेरी मा स यह कहला भेज रहा हू कि वह अगर निर्धारित धनराशि निर्दिष्ट समय मे नही देगी तो तुझको मार डालूगा। कमल न रोकर कहा—मेरी मा को धन कहा स मिलेगा ? कमल की मा के पास एक दूत भेजा गया उसने आकर कहा—तुम्हारी बेटी कैद है, आज से तीसरे दिन मैं आऊगा, अगर पाच सौ सिक्के दे सकती हा तो

छोड दूगा। वरना तुम्हारी बेटी जरूर मारी जायेगी। यह सुनते ही कमल की मा मूर्च्छित हो गयी थी।

दरिद्र विधवा का धन कहा से मिले ? एक-एक कर सारा सामान उसने बेच डाले। विवाह होने पर कमल को देंगे, सोचकर उसने कुछ आभूषण रख छोडा था, उनको भी बेच डाला। फिर भी निश्चित धनराशि की चौथाई भी नही आ सकी। अन्त मे विधवा दर-दर की भीख मागने निकली। एक दिन बीत गया। दो दिन भी, तीसरा दिन भी बीतने वाला है, लेकिन निर्दिष्ट धनराशि का आधा इकट्ठा नही हो सका है।

भय से व्याकुल कमल गुफा के कारागार मे रोते रोते बेहाल हो गयी। वह सोच रही है कि उसका अमरसिंह होता, तो ऐसी दुघटना हो ही नही सकती थी। यद्यपि अमरसिंह बालक है, फिर भी वह जानती थी कि अमरसिंह सब कुछ कर सकता है। डाकू उसको बीच-बीच मे डरा धमका जाते। डाकुओ को देखते ही वह डर के मारे आचल मे मुह छिपा लेती। इस अधेरे कारागह मे इन निदय डाकुओ मे एक युवक था। वह कमल से वैसा रूखा बरताव नही करता था, और घबरायी हुई बालिका से स्नेह से न जाने क्या क्या पूछा करता था। कमल भय के मारे उसकी किसी भी बात का जवाब नही देती थी। उसने एक बार पूछा था कि क्या उसको डाकू से विवाह करने मे कोई आपत्ति है ? और बीच-बीच मे वह प्रलोभन भी दिखाता कि कमल अगर उससे विवाह कर ले तो वह उसको मौत के मुह से बचा सकता है। लेकिन कमल कोई जवाब नही देती थी। एक दिन बीता, दो दिन बीते, बालिका ने सभय देखा कि डाकू मदिरा पीकर छुरो पर सान चढा रहे हैं।

इधर विधवा के घर पर डाकुओ का दूत आया और पूछने लगा, रुपया कहा है ? विधवा ने भीख मागकर जो धन इकट्ठा किया था, सभी डाकू के पैरो पर रखकर कहा—मेरे पास अब और कुछ नही, जो कुछ था, सभी कुछ दे दिया, अब तुम लोगो से भीख माग रही हू कि मेरी कमल को ला दो। डाकू ने उन सिक्को को गुस्से से चारो ओर बिखेर कर कहा—झूठमूठ धोखा देकर तू बच नही सकती ! तय की हुई रकम के न देने पर अवश्य ही आज तेरी बेटी मारी जायेगी। तो मैं चला दलपति को जाकर बताऊ कि वह निर्धारित धन नही पायेगा। अब नर-रक्त से महाकाली की पूजा करो। विधवा कितनी ही चिरौरी-विनती करती रही, कितना ही रोती कलपती रही, लेकिन किसी प्रकार भी डाकू का दिल द्रवित न कर सकी।

चतुर्थ परिच्छेद

मोहनलाल के साथ कमल के विवाह का प्रस्ताव आया था, किंतु उसके सम्पादित न होने के कारण मोहन मन-ही मन कुछ क्रुद्ध था। कमल का सारा ब्यौरा मोहनलाल ने सवेरे ही सुना था और तत्क्षण कुल पुरोहित को बुलवाकर उन्होंने विवाह की साइत जल्द ही काई है या नहीं, पूछा था।

गांव में मोहन से अधिक धनी कोई नहीं था। व्याकुल विधवा अन्त मे उसी के घर आ पहुंची। मोहन ने उपहास के स्वर मे हंसते हुए कहा—कैसी अनोखी बात है। इतने दिनों के बाद गरीब की कुटिया मे कैसे पधारी?

विधवा—उपहास मत करो, तुमसे भीख मांगने आयी हूं।

मोहन—बात क्या है?

विधवा ने आद्योपान्त सारा मामला बताया। मोहन ने पूछा—तो फिर मुझको क्या करना होगा?

विधवा—कमल के प्राणों की रक्षा करनी होगी।

मोहन—क्यों, क्या। अमरसिंह यहां नहीं है? विधवा यह उपहास समझ गयी, बोली—मोहन, यदि मुझको घर के बिना वन वन मे भटकना पड़ता भूख की तड़प से अगर पागल बनकर मर जाती, फिर भी तुमसे मैं एक तिनका भी नहीं मांगती। लेकिन आज अगर विधवा की एकमात्र मांग न पूरी की तो तुम्हारी निर्दयता सदा याद रहेगी।

मोहन—अच्छा, तब तुम्हें एक बात बताऊं। कमल देखने मे कोई बुरी नहीं, और वह मुझको पसन्द न आयी हो, ऐसी भी बात नहीं। तो फिर उसके साथ मेरे विवाह मे कोई आपत्ति तो नहीं होनी चाहिए।

विधवा—लेकिन उसका विवाह तो पहले ही से अमर के साथ तय हो चुका है। मोहन कुछ जवाब न देकर रोकड़ का बही-खाता खोलकर लिखने लगा, मानो कमरे मे कोई न हो। विधवा ने रोकर कहा—मोहन, अब मुझको और न सताओ, वक्त बीता जा रहा है।

मोहन—ठहरो, जरा काम खत्म कर लें। अन्त मे अगर विधवा विवाह के प्रस्ताव पर सहमत न होती तो शायद दिन भर म काम खत्म होता या नहीं इसमे सन्देह था। विधवा ने मोहनलाल से रुपया लेकर डाकू को दिया। वह चला गया। उसी दिन डर व आतंक से त्रस्त हिरनी-सी घबराई हुई बालिका मां की गोद मे लौट आयी और उसकी बांहों मे मुंह छिपाकर बहुत देर तक रो-कर अपने मन को शान्त करती रही। लेकिन अभागिन बालिका एक डाकू के चुंगल से दूसरे डाकू के हाथ जा पड़ी।

कितने ही वर्ष व्यतीत हो गये, युद्ध की आग बुझ चुकी है। सैनिक अपने

घर लौट आये हैं और हथियार छोडकर अब हल चलाने लग गये हैं। विधवा को समाचार मिला कि अजितसिंह खेत रहे और अमरसिंह बन्दी हो गये हैं। लेकिन उसने यह समाचार अपनी कन्या को नही दिया।

मोहन के साथ बालिका का विवाह हो गया। मोहन का क्रोध तनिक भी शान्त नही हुआ। उसकी बदले की भावना विवाह करके भी समाप्त नही हुई। वह निर्दोष अबला बाला को नाहक पीडा देता। कमल मा की स्निग्ध स्नेह-छाया से इस निष्ठुर कारागृह म आकर अशेष यातना पा रही है।

पचम परिच्छेद

शैल शिखर के झिलमिल तुषार-दपण पर उषा की रक्तिम मेघमाला स्तरा मे सज्जित हो गयी। सोती हुई विधवा दरवाजे पर आघात सुनकर जाग गयी। द्वार खोलकर देखा, सैनिक के वेश मे अमरसिंह खडे हैं। विधवा कुछ भी न बोल सकी। अमर ने जल्द ही पूछा—कमल कमल कहा है? सुना, पति के घर। क्षण भर के लिए वह हक्का-बक्का रह गये।

मोहन कमल को उसकी मा के घर रखकर परदेश चला गया। पचदश वर्ष की अवस्था म कमल पुष्प-कलिका-सी खिल आयी। इसी मे एक दिन कमल मौलश्री-वन म माला गूथने गयी थी, लेकिन गूथ न सकी, दूर से ही सूने मन से लौट आयी और एक दिन उसने बचपन के खिलौने निकाले, पर खेल न सकी, निराशा की उसास लेकर उनको उठाकर रख दिया। अबला ने सोचा था कि अगर अमर लौट आये तो फिर दोनो माला गूथने और फिर दोनो मिलकर खेलेंगे। कितने ही दिनो से अपने बाल्य सखा अमर को नही देखा है सोच कर मर्मपीडिता कमल कभी-कभी यातना से अधीर हो उठती थी। कभी कभी रात को कमल घर म दिखायी नही पडती थी। कमल कहा खो गयी है। ढूढ-ढूढकर अत मे दिखायी पडता कि बचपन क क्रीडा-स्थल उस शैल शिखर पर मलिन मुख बालिका असख्य तारो से भरे आकाश की ओर देखती, खुले बाल लिय लेटी है।

कमल अपनी मा के लिए और अमर के लिए रोया करती थी, इस कारण मोहन उससे बहुत रुष्ट हो गया था और उसको नैहर भेज कर सोचा था कि चद दिन गरीबी का कष्ट भुगत ले, फिर देखा जायेगा कि कौन किसके लिए रो सकता है।

मा के घर मे कमल छिप कर रोती है। रात की हवा मे उसकी कितनी ही विषाद भरी उसासें विला गयी हैं, एकात शय्या पर उसके कितने ही आसू ढरक चुके हैं, यह उसकी मा को कभी न मालूम हो सका। एक दिन कमल ने अचानक ही सुना कि उसका अमर घर लौट आया है। उसके कितने दिनों के कितने आवेश उद्वेलित हो उठे। अमरसिंह के बालपन का चेहरा याद आया। असह पीर से

कमल कितनी ही देर रोती रही। अत मे अमर से मिलने निकल पडी।

उस शैल शिखर पर, उस मौलश्री की छाया मे, भग्न-हृदय अमर बैठे हैं। एक-एक कर बचपन की सारी बातें याद आ रही हैं। कितनी ही चादनी रातें, कितनी ही अधेरी सार्ये, कितने ही विमल प्रभात, अस्फुट सपनो की भाति उसके मन मे एक-एक कर जागने लगे।

क्रमश दूर गाव के कोलाहल की ध्वनि रुक गयी। रात्रि की बयार अधकार, मौलश्री-कुज के पत्तो को ममरित कर विषाद भरा गभीर गीत गा उठी। अमर गाढे अधेरे मे, शैल के समुच्च शिखर पर अकेले बैठे दूर झरने की विपण्ण ध्वनि, निराश हृदय की उसास-सी समीर का हाय-हाय शब्द और रात्रि की ममभेदी एकरस गभीर ध्वनि को सुन रहे थे। वह देख रहे थे अधकार के समुद्र के नीचे सारा ससार डूब गया है, दूर श्मशान म दो एक चिताओ की अग्नि प्रज्जवलित है, दिगत तक निपट स्तभित मघो से आकाश अधकारमय है। सहसा उन्होंने सुना किसी ने उच्छवसित स्वर मे कहा—भाई, अमर ! यह अमृतमय, स्नेहमय, स्वप्नमय स्वर सुन कर उनकी स्मृति के समुद्र मे उथल पुथल मच गयी। पलट कर देखा, कमल है। क्षण भर मे निकट आकर उसके गले मे बाहें डाल कर, कधे पर सिर रखकर कहा—भाई अमर ! अचल हृदय अमर ने भी अधेरे मे आसू गिराये, फिर सहसा ही चौंक कर दूर हट गये। कमल ने अमर को कितनी ही बातें बतायी, अमर ने ही कमल का दो एक का जवाब दिया। आते समय कमल जिस प्रकार उत्फुल्ल होकर हसते हसते आयी थी, जाते समय उसी प्रकार मायूस हो रोते-रोते चली गयी। कमल ने सोचा था कि वही बचपन वाला अमर लौट आया है, और मैं भी वह बचपन वाली कमल हू। कल से हम लोग फिर खेलने लगेंगे। हालाकि अमर के दिल पर बहुत बडी चोट लगी थी, फिर भी वह कमल पर न क्रुद्ध हुए और न उससे रूठे। विवाहित बालिका के कतव्य कम म कोई बाधा न पडे, इस कारण वह उसके अगले दिन कही चले गये, जो कोई भी बता न सका।

बालिका के सुकुमार हृदय पर भयानक गाज आ गिरी। रूठ कर कितने ही दिन वह सोचती रही कि इतने दिन बाद बालक सखा अमर के पास भागती हुई गयी, अमर ने उसकी उपेक्षा क्या की ? सोच कर कुछ भी समझ मे नही आया। एक दिन अपनी मा से उसने यह बात पूछी तो मा ने उसको समझा दिया था कि कुछ दिन राजसभा के आडबर मे रहकर सेनापति अमरसिंह फूस की कुटिया मे रहने वाली भिखारिन नन्ही बालिका को भूल गये, इसमे असभव क्या है। इस बात से गरीब बालिका के अतरतम प्रदेश मे शूल चुभ गया था। अमरसिंह ने उसके प्रति निदय आचरण किया, यह सोच कर कमल का दिल नही दुखा। अभागिन सोचती थी। मैं गरीब हू मेरा कुछ भी नही है, मेरा कोई नही मैं मूरख,

छोटी बच्ची, उनके चरण रेणु के योग्य भी नही, तो फिर किस दावे पर उनको भाई कह कर पुकारूगी, उनसे किस अधिकार पर प्यार करूगी ? सारी रात रोते बीत गयी। सुबह होते ही उस शैल शिखर पर पहुच कर मुरझायी सी बालिका क्या कुछ सोचती रही। उसके मन के गोपन तल मे जो बाण बिंध गया था, उसके हृदय का लहू गिराने लगा। बालिका फिर किसी से बातें नही करती, मौन रहकर सारा दिन, सारी रात सोचा करती। किसी से मिलती जुलती नही, न हसती, न रोती। बालिका धीरे धीरे दुबल और क्षीण होन लगी। अब उससे उठा नही जाता, खिडकी पर अकेली बैठी रहती, देखती, दूर शैल शिखर पर *मौलश्री के पत्ते हवा मे काप रहे हैं।* देखती चरवाहे *शाम का मद्धिम आवाज* मे गाना गाते हुए घर लौट रहे हैं।

काफी प्रचेष्टा के बावजूद विधवा बालिका के दुख का कारण नही समझ सकी थी। कमल खुद ही समझ रा रही थी कि वह मत्यु के पथ पर आगे बढ रही है, उसमे अब कोई वासना नही रह गयी थी। दवता से वह प्राथना करती, काश मरते वक्त अमर का दश सकू !

कमल की पीडा सगीन हो गयी। उसका मूर्च्छा पर मूर्च्छा आने लगी, सिरहान विधवा नीरव और कमल की गाव वाली सहेलिया चारो ओर घेरे खडी हैं। दरिद्र विधवा के पास धन नही कि चिकित्सा का खच उठा सके। मोहन गाव मे नही है और गाव म रहता भी, तो उससे कुछ भी आशा नही कर सकती थी। वह दिन रात मेहनत कर, सब कुछ बेच बाच कर कमल के पथ्य आदि की व्यवस्था करती थी। चिकित्सको के घर-घर जाकर भीख मागती थी कि वे आ कर कमल को एकबार देख जायें। काफी चिरौरी विनती के बाद आज चिकित्सक रात का कमल को देखने आने के लिए तैयार हुआ है।

अधेरी रात के तारे घार घने मेघा मे डूब गय हैं, वज्र का घोर गजन पवत की गुफाआ म गूज रहा है और अविरत विद्युत की तीखी चकित छटा शल के शिखर शिखर पर चोट कर रही है, मूसलधार वषा हो रही है। विधवा इस आधी मे चिकित्सक के आने की आशा त्याग चुकी है। अभागिन टूटे दिल से निराश टक-टकी लगाये कमल के मुख की ओर दख रही है और हर आहट पर चिकित्सक की आशा मे चौंक कर दरवाजे की ओर देख रही है। एक बार कमल की मूर्च्छा टूटी। मूर्च्छा टूटन पर अपनी मा के मुख की ओर देखा, बहुत दिना के बाद कमल की आखो म आसू दिखायी पडे। विधवा रोने लगी। सहेलिया रो पडी। सहसा घोडे की टाप सुन पडी विधवा हडबडा कर उठी, बाली—चिकित्सक आ गये हैं ! द्वार खोलने पर चिकित्सक अदर आये। जड विषादपूण आखें खोल कर कमल ने दखा कि वह चिकित्सक नही हैं, वह सौम्य-गभीर-मूर्ति अमरसिंह है। विह्वल बालिका प्रेमपूण टकटकी लगाये उनके मुख की ओर देखती रही, उसके विशाल

नयनो से आसू निकल आये और प्रशात हास्य से कमल का विवण मुखडा उज्ज्वल हो उठा। लेकिन ऐसा दुबल शरीर इतना आह्लाद न सह सका। धीरे धीरे आसू से भीगे नैन वद हो गये। धीरे धीरे वक्ष की धडकन रुक गयी, धीरे धीरे दीया बुझ गया। अशोक विह्वल सहेलियो ने वस्त्र पर फूल बिखेर दिये। आसुओ से शून्य आखें लिये, उसास शून्य वक्ष लिये, अधेरे से पूण हृदय लिए, अमरसिंह भाग कर बाहर निकल गये। शोकाकुल विधवा तब से पगली-सी भीख मागती फिरती थी और साझ उतर आने पर उस टूटी-सी झोपडी मे अकेली बैठी रोती थी।

एक विवेचन

प्रबोधकुमार मजुमदार

'विदेशी छात्रों के दातौन की जरूरत पूरी करने के लिए सरकारी दफ्तर से [illegible] जमीन के टुकड़े पर जो चंद पौधे लगाये गये थे, जल्दी ही यह जाहिर हो [illegible] कि वे शिशु महीरूह हैं। नौवारिद विदेशी सिविलियनो के लिए पाठ्य-[illegible] तैयार करवाने का मूल उद्देश्य पीछे रह गया, लार्ड वेलज़ली न बंगला गद्य [illegible] सहायता कर ब्रिटिश साम्राज्य की नींव खोखली कर दी।' यह है [illegible] के लेखक प्रमथनाथ विशी की टिप्पणी। फोर्ट विलियम [illegible] और मौलवी नियुक्त किये गये, उन्होंने गद्य रचना में बेशक [illegible] 'सिंहासन-बत्तीसी', 'हितोपदेश', 'लिपिमाला', 'कथोपकथन [illegible] कर उन्होंने अपना कर्तव्य पूरा कर डाला।

जिनको कहानी की मर्यादा दी जा सकती है, विशेष रूप से उल्लेखनीय है—24 फरवरी सन 1811 के अक मे प्रकाशित 'बाबुर उपाख्यान' 10 नवबर, 1821 ई० मे प्रकाशित 'आश्चय विवाह' और 25 माच, 1825 ई० के अक मे शीषक-शूय क यापण सबधी कहानी और 14 जून, 1828 ई० म प्रकाशित 'एक नव्याभव्यविवेकिर वियरण'। ये पत्र आधुनिक कहानियो के पुरखे है। फिर भी हम इनको कदाचित कहानी कहना नही चाहेंगे।

बगला में कहानी को 'छोटो गल्प' कहते हैं, जो कि अग्रेजी 'शॉट स्टारी' का अनुवाद-सा लगता है, किन्तु सारे गुणा से सम्पन्न 'छोटो गल्प का जन्म अग्रेजी की 'शॉट स्टोरी' से पूव ही हुआ—यह बगला साहित्य के इतिहासकार डॉ० सुकुमार सेन का कहना है।

बगला गद्य साहित्य के आविर्भाव के उपरात ही आधुनिक कहानी के बीज दिखायी पडे। बकिमचद्र के पूव बगला म मुख्यत दो प्रकार के कथा साहित्य थे। अदभुत रसवाली देशी उपकथाओ के आधार पर विलायती रामास की शैली में एक प्रकार की कहानी रची गयी थी—आख्य—उपन्यास। 'अलिफ लैला', (का अनुवाद), 'हातिमताई', 'गुलबकावली', 'कामिनी कुमार' इसी वग मे आती हैं। एक दूसरे प्रकार की रचना थी—समाज की आलोचना करन वाली व्यग्यात्मक दास्तान—जसे भवानीचरण का, 'नवबाबू विलास' प्यारीचाद मित्र का 'आलालेर घरेर दुलाल' और काली प्रसन्न सिंह का 'हुतोम पॅचार नक्शा' इन तीनो रचनाओ को खडचित्र या स्केच कहा जा सकता है—किसी को भी पूणरूपेण कहानी नही कहा जा सकता।

सन् 1862 मे भुदेव मुखोपाध्याय का 'ऐतिहासिक उपन्यास' प्रकाशित हुआ। इस ग्रथ मे दो कहानिया है—'सफल स्वप्न' और 'अगुरीय विनिमय'। भुदेव की इन दो रूमानी ऐतिहासिक कहानियो को भी सही मायने मे कहानी नही कहा जा सकता—वे कुछ-कुछ पाश्चात्य नॉवेला के सदश थी। इनमे नाटकीयता नही, चरित्र-चित्रण नही, कुछ है तो एक विवरण मात्र, बकिमचद्र ने कोई कहानी नही लिखी। उनकी 'राधारानी' और 'मृगनागुरीय' दरअसल छोटे उपन्यास है। बकिम के अग्रज सजीवचद्र (1834 89) की लिखी हुई दो कहानिया 'रामेश्वरेर अदृष्ट' और 'दामिनी' भी नॉवेला किस्म की रचनाए हैं। आधुनिक कहानी की एकाग्रता और घटना की अनिवायता इनमे नही है।

रवीन्द्रनाथ की अग्रजा, 'भारती' की सपादिका स्वणकुमारी देवी (1855-1932) ने बहुत सी कहानिया लिखी है, जिनमे से कुछ उनके 'नवकाहिनी' नामक कहानी सकलन मे प्रकाशित हुई है। इनमे तीन ऐतिहासिक कहानिया टॉड के 'राजस्थान' ग्रथ की कहानिया के आधार पर लिखी गयी हैं। कुछ कहानियो मे हत्याकाड, खून खराबे के दृश्य लाये गये है ('प्रतिशोध', 'रक्तपिपासु')

लेकिन वे प्लॉट और चरित्र के लिहाज से काफी कमजोर पड़ती हैं। उनकी 'लज्जावती' 'चाविचुरी', 'अमर गुच्छ', 'पेनें प्रीति' आदि सार्थक कहानियां हैं। स्वर्णकुमारी देवी की 'भारती' पत्रिका में ही संभवतः कहानी प्रकाशित करने की परिपाटी सर्वप्रथम चल पड़ी। इस पत्रिका के प्रथम युग के कहानीकारों में नगेंद्रनाथ गुप्त (1861-1940) उल्लेख योग्य हैं। कहानी के सारे गुणों से संपन्न ये कहानियां प्रकाशन तिथि के लिहाज से 1884 ई० के बाद की हैं, जब स्वर्णकुमारी देवी ने अपने अग्रज द्विजेंद्रनाथ ठाकुर के हाथों से इसका संपादन काम लिया था। श्री सागरमय घोष ने उनके द्वारा संपादित 'शत वर्षेर शत-गल्प' में भवानीचरण बंद्योपाध्याय के 'नवबाबू विलास' का एक अंश 'फूलबाबू' शीर्षक से सर्वप्रथम कहानी के रूप में छापा है। किंतु यह एक बड़े-से स्केच का छोटा-सा टुकड़ा है—कहानी नहीं।

'रवींद्र रचनावली' (शतवार्षिकी संस्करण) के सप्तम खंड में कहानियां संकलित हैं, जिनमें प्रथम कहानी के रूप में 'घाटेर कथा' को छापा गया है। यह कार्तिक, 1291 बंगाब्द, तदनुसार अक्तूबर 1884 ई० में प्रकाशित कहानी है। इसी रचनावली के खंड में दो कहानियां—कहानियों के मसौदे के रूप में प्रकाशित हुई है, जिनमें 'भिखारिनि' की प्रकाशन तिथि है श्रावण भाद्र 1284 बंगाब्द, तदनुसार जुलाई-अगस्त 1877। यह कहानी 'भारती' पत्रिका के प्रथम और द्वितीय अंक में छपी थी।

यद्यपि यह कहानी 16 वर्ष के रवींद्रनाथ के अनमजे हाथों की रचना थी, और इसको उन्होंने अपने 'गल्पगुच्छ' संकलन में स्थान नहीं दिया, तथापि हमें लगता है, ऐतिहासिकता के नजरिये से इसी को आदि-कहानी मान लेना सम्यक होगा।

□ असमिया

आद्य कथाकार लक्ष्मीनाथ वेजवरुवा

लक्ष्मीनाथ वेजवरुवा का ज म पुष्प प्रसू लोहित की रम्य भूमि असम के एक कुलीन परिवार मे हुआ।

असम मे जब अंग्रेजी राज्य कायम हुआ, तब अंग्रेज सरकार ने उनके पिता दीनानाथ वेजवरुवा को मुसिफ के पद पर नियुक्त किया। नैसर्गिक सौदय से पूण असम के विभि न स्थानो म दीनानाथ वेजवरुवा का तबादला होता रहता था। उ ही यात्राओ मे वालक लक्ष्मीनाथ का साक्षात्कार जहा असम भूमि की अतुलनीय नसर्गिक सुषमा से हुआ, वही विभि न जन समुदायो से मिलने जुलने ा, उनके चरित्र का अवलोकन करने का अवसर भी प्राप्त हुआ। इंट्रेंस पास करने के बाद उ हे उच्च शिक्षा हेतु कलकत्ता भेजा गया। विद्यार्थी जीवन मे ही असमिया भाषा के विकास की उत्कृष्ट अभिलाषा उनके मन मे जाग उठी थी और कलकत्ते मे ही उन्होने कुछ साथियो के साथ 'असमिया भाषा उन्नति साधिनी सभा की स्थापना की थी, जिसने आगे चलकर भाषा-साहित्य के क्षेत्र मे महत्त्वपूण काय किये थे। कलकत्ते मे उनकी भेंट चद्रकुमार अगरवाला से हुई जि होने सन 1890 ई० मे वही से असमिया मासिक 'जोनाकी' निकाला। लक्ष्मीनाथ प्रारभ से ही इस पत्र के साथ घनिष्ठ रूप से सबधित रहे। तीसरे साल 'जोनाकी' का सपादन भार भी उ ही के कधो पर आ पडा था।

बाद को लक्ष्मीनाथ उडीसा के सबलपुर मे जाकर स्वतत्र रूप से व्यापार करने लग गये थे। व्यापार के साथ-साथ उनकी साहित्य-साधना भी निर्बाध रूप से चलती रही।

सन 1891 ई० मे रवी द्रनाथ ठाकुर की भतीजी प्रज्ञासुदरी देवी से उनका विवाह हुआ।

उ होंने 'कृपावर बरबरुवा' नाम के एक ऐसे चरित्र की सप्टि की जो हास्य-व्यग्य के क्षेत्र मे बेजोड है। लक्ष्मीनाथ की रचनाए मूलत हास्य व्यग्य प्रधान हैं। परतु उनकी प्रतिभा ने कविता, उप यास, नाटक, निबध आदि साहित्य की हर

विधा मे अपना चमत्कार दिखाया था। उनकी इस साहित्य साधना के फलस्वरूप सन् 1924 ई० मे उन्हें 'असम साहित्य सभा' के अध्यक्ष के रूप मे सम्मानित किया गया। सन 1938 ई० के माच महीने मे डिब्रूगढ म आपका देहान्त हुआ।

असमिया सस्कृति के महान उन्नायक महापुरुष शकरदेव तथा माधवदव के सबध म आपकी कृति 'श्री शकरदेव आरु श्री माधवदेव' विशिष्ट शोधपूर्ण जीवनी मानी जाती है। असम इतिहास की पृष्ठभूमि पर आधारित 'चक्रध्वज सिंह' 'बेलिमार' और 'जयमती कुवरी' उनके विशिष्ट नाटक हैं। उन्होंने असम के जातीय सगीत 'ओ मोर आपोनार देश' के अलावा अनेक उदबोधक राष्ट्रीय कविताओ की रचना की। उन्होंने असम की लोककथाओ का नवीन ढग से पुनर्लेखन कर प्रकाशित किया था। 'जुनुका साधुकथार कुकि', 'बुढ़ी आइर साधु' आदि आपके लोक-कथा सग्रह हैं। 'पद्म कुवरी' प्रसिद्ध उपन्यास है।

प्रथम मौलिक कहानी सन् 1891 मे रचित

☐ कन्या

कुछ खास काम से कुछ दिनो के लिए मुझे प्रवास म रहना पडा। प्रवास न कहकर उसे बनवास कहना ही उचित होगा। हमारे उस निवास स्थान के चारो ओर विशाल विशाल वृक्ष, पवत और कोयले से काले वण के कोल लोगो के छोटे छोटे घर थे। हा, घर कहने से यह नही समझ लेना चाहिए कि वे हमारे-तुम्हारे जैसे घर थे—झोपडिया या कुटिया। वे भी असम के गरीब लोगो या भिखारियो की झोपडियो जैसी होगी एसा समझना गलत होगा। पड की चार-पाच डालिया खडी कर लगभग चार-चार हाथ लबे दोछत—जैसे बना उस पर कुछ फूस बिखेर दो विना दीवार दोना ओर की छता को ही जमीन से लगा कर दीवारो का काम लो, फिर मुडेर पर से आने जाने की राह बना लो, तो देखेंगे कि पति पत्नी, बेटे बहू और बाल बच्चा वाले एक परिवार के रहने लायक कोल लोगा की एक झोपडी तुमने बना डाली है।

हमारे मकान के नजदीक से ही एक छोटी सी पहाडी नदी हहराती हुई चट्टाना से होकर बहती चली जा रही थी। नदी का नाम था, कन्या। बडा मीठा-सा नाम। यह नाम या तो किसी कवि का दिया हुआ था या नदी ने ही अपने गुणो से आम अकवि लागो के हृदयो मे कविता की लहर जगाकर बलपूवक यह प्राप्य नाम रखवा लिया था। कन्या के गभ मे छोटे-बडे अनेक पत्थर थे। इन पत्थरो पर पानी की धारा स दिन रात लगातार हर हर की आवाज गूजती रहती। लगभग आधे मील की दूरी से ही, रुलाई की भाति वह विपाद सूचक हर-हर की आवाज काना म आने लगती, जिसे सुन कर मेरा मन वन बैरागी बन कर कहो चला जाना चाहता। दोना ओर की न जाने किस आदिम युग के विशाल पेडा की दो कतारें—लगता था, नदी को आलिगन किये हुए रुलाई सुन-सुन कर संवेदना सूचक जल बिंदुओ से उस शोक मे सहानुभूति प्रकट कर रही हैं। विश्व

नियता के राज्य म इस ममभेदी शोक का और हृदयस्पर्शी सहानुभूति का क्या तात्पय है भला हम क्या समझगे ? परतु जहा एसी विशुद्ध महानुभूति मिले, वहा तो रा कर भी सुग्र ह । सुबह-शाम अवकाश क समय मैं नदी क तट पर ही गुजार देता । बडा अच्छा लगता, वहा मरे खामकर दो काम रहत । पहला लाल, काले सफेद नीले आदि विभिन्न रगो के पत्थर इकट्ठे करना । दूमरा तट पर क एक पड की जड पर अकल उठे क बठे की वह कनाई सुनना । इतने दिन बाद आज भी उन दाना कामो और नदी के उस तट की याद आन पर छाती हुलहुला उठती है ।

मर उल्लिखित दोनो कार्यो म किमी किमी दिन एक मित्र आकर माथ जुट जाते । मित्रवर कुछ दुनियादार और खुशमिजाज आदमी थे यानि इस दुनिया म खा पहनकर मानवाभिमुख होन म जसा होना चाहिए, बिलकुल उसी प्रकार के । कविता का फेन खाकर जिदगी भर उफ उफ आह आह करते बितानेवाले न थे । किसी को कभी कविता करत देखते तो उसस दो एक मजाकिया शब्द का प्रयोग कर हास्यरस की अवतारणा किय बगर वे रहते न थे । अगर किसी पड का सौन्दय दिखा कर उनसे कोई बात कही जाये, तो वे जवाब म वह पड लबाई मे कितन हाथ है, और उसका घेरा कितन हाथ का है, और काटकर चीरन पर उनमे कितने खभे और कितने तख्ते निकलेंगे तथा उनका मूल्य कितना होगा, आदि हिसाब किताब काव्य रस का दशाह श्राद्ध कर बठते । अगर कभी कोई काला पत्थर चुनकर उन्ह दिखा कर कहता 'अ देखिए न, कितना सुदर है' तो व उसे तोड कर पिघलाने पर उसमे कितना लोहा या अन्य धातु निकलेगी, इसका हिसाब लगा कर बात खत्म कर देते । एक दिन एक बढिया सा काला पत्थर उन्ह दिखाते हुए मैंन पूछा—भला यह देखने म इतना चिकना मा काला पत्थर बन कैसे जाता है ? उनका जवाब था—इन काले-काले लोगो को देख रहे हो न ? मरने पर इनकी हड्डिया और मास टुकडे टुकडे होकर ही ये पत्थर बन जाते है । मैं पत्थर ढूढता, चुनता रहता, वे भी मेरे साथ साथ उठा करते, मगर कहत कि उनका उद्देश्य अलग है । वे तो पत्थर नही ढूढत, वे तो ढूढा इसलिए करते हैं कि कही कोई हीरा या अन्य बहुमूल्य पत्थर ही मिल जाये ।

जिस पड की जड पर बैठ मैं अपना दूसरा काम करता रहता हू, उससे लगभग चालीस हाथ दूर नदी का मोड था । वही लगभग बीस साल का एक नौजवान आकर हर रोज दिन ढलने से लेकर शाम होने तक बसी से मछली पकडा करता । वह रोज बसी डाले रहता जरूर मगर मैंने किसी भी दिन उसे एक भी मछली पकडते नही देखा । नदी म मछलिया न हो ऐसी बात नही, या बसी म मुह मारने की उनकी आदत न हो, ऐसी बात भी नहीं । दूसरे लोगो के लडके तो उसी नदी म बसी से झुड की झुड मछलिया पकड कर मौज से खाया करते थे ।

असल बात है, हमारा वह लडका बसी लगाता था पानी मे, मगर आखें लगाये रहता नदी के उस पार। मछलिया अपने अवसर के मुताबिक आकर बसी को मुह मारती चारा खीचने का व्यायाम या खीचातानी भी करती, आखिर तब बसी का चारा भरपट खाकर भूख मिटा अपने घर लौट जाती। पर बसी लगाने वाले को पता नही चलता, बसी का मालिक तो सिर्फ नदी के उस पार नजर लगाये किसी स्वप्नपुरी म चक्कर लगाया करता।

उस पार आमने सामने ही पानी भरने का घाट था। एक किशोरी कृष्णवर्णी कोल बाला नित्य उसी समय बगल म घडा लिये पानी भरने आया करती। यही काला चक्र हमारे काले काले नौजवान की आखो को उस पार ले जाकर खीचे रखता। काल सुदरी पानी लेने आती दिन ढले ही पर शाम हो जाने पर भी उसके घडे की धुलाई पूरी नही हो पाती। उसके उस मिट्टी के घडे के साथ मल का इतना गहरा प्रणय क्या था, पता नही। उसे घिस माज, धो धाकर किसी प्रकार से घडे से मैल की काट मिटा नही पाती।

खैर, इस मछली पकडने वाले और उस पानी भरने वाली म कभी भी बात की अदला बदली हुई हो, ऐसा तो दिखाई नही पडा था। देखने म सिर्फ इतना ही आया था—इस ओर यह बसी की डडी लिये आसमान से टपके आदमी जैसा एकटक आखें खोले रहता। उधर वह रेत से घिस घिस कर बार बार घडा धो तिरछी नजरो से इसकी तरफ देखती समय बिताया करती थी।

इसी प्रकार कुछ दिन बीते। यही लीला नित्य चला करती। कन्या नदी के किनारे जाने के मेरे कामो की तालिका म यह लीला दर्शन नाम भी तीसरा स्थान युक्त हो गया।

एक दिन हम तीनो अपने-अपने नित्यकर्म म जुटे हुए थे, तभी देखा कि वह कोल नौजवान भयकर रूप से चौंक कर हाथो से बसी की डडी फेंक झम्म से उस नदी म गिर पडा। इसका कोई मतलब समझ न पाकर मैं क्षण भर देखता रहा। देखा, वह ढका ढक पानी पीता हुआ डूबा जा रहा था। उन्ही कपडो मे दौडा जाकर मैंने भी तुरत पानी म छलाग लगा दी। परतु जब तक मैं पानी म जा पडा, तब तक तो वह नीचे चला गया था। लगभग दो मिनट खोजने के बाद उसे पाकर लस्त-पस्त बडी तकलीफ से उसे किनारे ले आया। मुड कर देखा, चार-पाच आदमी मुझे उस काम म मदद देने हेतु दौडे आ रहे है। कुछ ही समय मे वहा कितने ही लोग आ कर इकट्ठे हो गए। दौडते-दौडते, रोते-चीखते उसके मा-बाप भी पहुच गये। चीख पुकार रोने-पीटने का कोलाहल छा गया।

कितने शोक की बात हो गयी थी! सब लोगो ने नाना प्रकार के प्रयत्न करने के बावजूद उसे होश म नही ला पाये। उसके शरीर रूपी पिंजडे से प्राण पक्षी उड़कर भाग गया।

पर वह इस तरह अचानक चौंककर पानी मे गिर क्यो पडा, इस बात का पता लगाने गया तो दिखाई पडा कि वह तट पर जहा बैठा नित्य बसी डाला करता था, वही एक भयानक अजगर जमीन मे दबा पडा है। उस साप के शरीर पर मिट्टी जम कर घास उग आयी थी। वह लडका नित्य उसी साप पर बैठा बसी डाला करता था। वह साप है, इसका पता ही उसे न था, शायद उस दिन वह साप जरा-सा हिला-डुला होगा, उसी से वह 'अरे, यह क्या है' सोच, बेहद डरकर पानी मे गिर पडा था।

गाव के कई लोगो ने आकर जमीन खोद, खूटी गाड कुल्हाडी से काट उस साप को मार डाला। मरने के बाद देखा गया, साप लबाई मे बारह हाथ और घेरे म ढाई हाथ का था। उस दिन से कन्या के तट पर की वह लीला समाप्त हो गयी। डर के मारे हो या दुख से, मैं भी अब उस ओर मुह नहीं करता था।

इस घटना के तीन दिन पश्चात नदी से पानी लाने वाला मेरा नौकर, लडका सुबह-सुबह बेतहाशा दौडा आकर पुकार उठा—बाबूजी, बाबूजी!

किसी जमाने मे 'पान का जायका सुपारी मे, नींद का जायका सुबह मे' की कहावत को कहने वाले उस बूढे को बहुत-बहुत धन्यवाद देता हुआ मैं मजे मे खर्राटे भरता सोया हुआ था। 'बाबूजी, बाबूजी' चीखता हुआ सुबह-सुबह मेरी नींद तोडने के कारण गुस्से के मारे उस कटहल-बीज जसे सिर वाले नौकर लडके को मुह बिचकाते हुए मैंने कहा—क्या बाबूजी, बाबूजी कर रहा है। इस सवेरे-सवेरे दिन को बरबाद करने के लिए। जा, जाकर भाग जा यहा से, नहीं तो अभी पकडकर मुह तोड दूगा।

उसने कहा—बाबूजी, आइए न, देखिए उस मोड मे कौन-सी चीज तिर रही है। मैं जल्दी से उठकर देखने गया। आदमी के शव जसा दिखाई पडा। मैंने उसे बाहर निकलवाया। देखा, अरे, यह तो नदी के उस पार नित्य पानी भरने आने वाली वही कोल लडकी है!

एक विवेचन

नवारुण वर्मा

लक्ष्मीनाथ बेजवरुवा आधुनिक असमिया कहानी के जनक हैं। उन्नीसवी सदी के अतिम दशक से उन्होने कहानी लिखना आरभ किया था तथा उसे पूर्ण पल्लवित व विकसित करने मे अपना महान मार्गदर्शन दिया।

प्रसिद्ध कथाकार योगेशदास ने बेजवरुवा की कहानी-कला के सबध मे लिखा है—"यह देखा जाता है कि पश्चिमी कहानी-साहित्य ने सबसे पहले स्पष्ट रूप धारण किया था। उन्नीसवी सदी के अतिम भाग मे जबकि बेजवरुवा का पहला कहानी सग्रह 'सुरभि' बीसवी सदी के प्रथम दशक मे सन 1909 म प्रकाशित हुआ वास्तव मे पश्चिमी कहानी के रूप मे ग्रहण और असमिया कहानी के आविर्भाव के मध्य व्यवधान बहुत ही कम समय का है। अग्रेजी और बगला मे कहानी का आभास मात्र पाकर बेजवरुवा ने असमिया मे भी उसका प्रयोग कर डाला बेजवरुवा की प्रतिभा किसी भी विषय मे अधानुकरण की नही थी। कुछ प्रभावित होने की बात अलग है।"

कुछ आलोचको के विचार से लोक-कथाओ के सग्रह और पुनर्लेखन के जरिये ही उन्हे कहानी लेखन की प्रेरणा प्राप्त हुई थी। कुछ लोगो का यह भी कहना है कि बेजवरुवा ने लोक-कला और कहानी के लेखन म घालमेल कर दिया है। परतु यह ध्यान रखना चाहिए कि उस समय तक कहानी लेखन की कोई विशिष्ट शैली ही नही बन पायी थी। अत बेजवरुवा के समक्ष केवल कथा लेखन की समस्या ही नही, अपितु कला शैली के निर्माण का प्रश्न भी था। उनकी कहानियो म लोक कथाओ की शैली का कुछ प्रभाव अवश्य है पर उनकी कहानियो ने ही आगे चलकर असमिया कहानी कला का मार्ग प्रशस्त किया, इसम सदेह नही। इससे यह भी सिद्ध होता है कि असमिया कहानी का उन्मेष मूलत लोकजीवन से ही हुआ है।

प्रमुख रूप से हास्य व्यंग्यात्मक होने पर भी बजबरुवा की कहानियों में समकालीन समाज चित्र बड़े ही मार्मिक ढंग से उभरा है। सामाजिक पारिवारिक त्रुटियों पर उन्होंने इन कहानियों में मीठी चुटकियाँ ली हैं। असमिया उच्च वर्ग, असमिया शिक्षित समाज, कलकत्ते के बंगाली मध्यवर्ग तथा उड़ीसा की जनजातियों के समाज का विश्वसनीय चित्रण उनकी कहानियों में प्राप्त होता है। उनकी 'नाम करेला', 'आमार नवाहरिर' आदि कहानियों में सामाजिक प्रवंचना का आवर्तन भरपूर रूप में है। 'धमध्वज फयसतानवीस' जैसी कहानियों में जाति भेद की कट्टरता पर प्रहार है, वहाँ 'भदुरी' में पारिवारिक प्रेम-संबंध का चित्रण 'मुक्ति' कहानी में व्यावहारिक मनोविज्ञान की करुणापूर्ण झलक है तो 'रतन मुण्डा' उड़ीसा के जन जाति समाज की सरलता का करुण चित्र।

प्रसिद्ध आलोचक श्री त्रैलोक्य नाथ गोस्वामी ने अपनी 'आधुनिक गल्प साहित्य' पुस्तक में लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा की कहानी कला संबंधी विशद चर्चा करते हुए लिखा है— असमिया समाज के एक वर्ग के लोगों में जो खामियाँ हैं पाखंड आडंबर है, उनके प्रति अधिक आकर्षित होने के कारण ही बजबरुवा की कहानियों में जटिल और आर्थिक समस्याओं के चित्रण का प्रयास नहीं है। अपने वाक्य बाणों से एक वर्ग के लोगों को घायल करने की बजाय उनकी खामियों को रस घन स्थिति में प्रस्फुटित कर और कभी कभी अतिरंजित कर के हम हँसाया करते हैं और पाखंड आडंबर के स्वरूप का मुखौटा भी खोलते हैं। जीवन की जटिलताओं, अनुभूति की गहराई, मानव की क्षुद्रता और महत्व की कहानियों के जरिये अभिव्यक्त करना ही यद्यपि उनका सर्वोपरि आदर्श नहीं है तथापि उनकी कहानियाँ रसीली हैं, मनोग्राही हैं।'

साहित्यरथी लक्ष्मीनाथ बजबरुवा ने अपनी महान प्रतिभा द्वारा प्रथम आधुनिक असमिया कहानी को जन्म दे, न केवल असमिया कहानी साहित्य की नींव डाली बल्कि उसे पल्लवित भी किया। जिसके आधार पर आज की असमिया कहानी अपनी विशिष्ट सत्ता बनाये हुए समृद्धि की ओर अग्रसर है।

'कन्या' लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा की सर्वप्रथम प्रकाशित आधुनिक कहानी ही नहीं, असमिया साहित्य की भी सर्वप्रथम आधुनिक कहानी है। असम के प्रसिद्ध साहित्यकार अध्यापक नंद तालुकदार से प्राप्त सूचना के अनुसार बजबरुवा ने इस कहानी की रचना सन 1891 में की थी और यह सर्वप्रथम 'जोनाकी' मासिक पत्र में प्रकाशित हुई। (संवाद पत्र रद्द का चलीत असमीया साहित्य—नंद तालुकदार) सर्वप्रथम कहानी होने पर भी इसमें प्रकृति का रमणीय वातावरण जैसा मनोरम बन कर उभरा है तथा प्रेम के अनजाने रहस्य का जो मार्मिक चित्रण है वह वास्तव में बेजोड़ है।

□ गुजराती

आद्य कथाकार कन्हैयालाल मुंशी

कन्हैयालाल मानेकलाल मुंशी अपने बहुमुखी व्यक्तित्व के लिए सब परिचित हैं। मुंशी महागुजराती थे, गुजरात की अस्मिता के पुरस्कर्ता थे, आजीवन विप्लावक थे। कानून राजनीति, इतिहास, आर्य संस्कृति, धर्म उपन्यास समीक्षा प्रवचन नाटक फिल्म, पत्रकारिता—मुंशी का कार्यक्षेत्र बहुत विशाल था।

1912 के आसपास मुंशी अपनी कहानियां लेकर पाठकों के समक्ष आये। 1918 तक वह अपने ऐतिहासिक उपन्यासों के कारण प्रसिद्धि की सीमा तक पहुंच चुके थे। 1970 तक मुंशी ने बेशुमार लिखा और गुजराती साहित्य में अपना स्थान अमर कर लिया। उनकी बहुमुखी प्रतिभा अनेक दशकों तक अनेक क्षेत्रों में सक्रिय रही और कहानी के क्षेत्र में उनका योगदान कुछ अंधेरे में रह गया। उनके कहानी संग्रह 'मारी कमला' की कुछ कहानियां शताब्दी के प्रथम दशक में लिखी गयी हैं। यहां दी जा रही उनकी कहानी 'गोमति दादा का गौरव' उसी समय की कृति है।

कहानी के क्षेत्र में मुंशी का योगदान गुप्तदान सा ही है। गुजराती आलोचक उनकी प्रतिभा के तेज से चकाचौंध होकर कई बार भूल जाते हैं कि उन्होंने कहानियां भी लिखी हैं और 1912 तक उनकी प्रथम कहानियां आ चुकी थीं।

1912 से लेकर 1970 तक 58 वर्षों में कन्हैयालाल मुंशी ने 127 पुस्तकें लिखीं और इस साहित्य यज्ञ का आरंभ 1912 में प्रकाशित 'मारी कमला' (मेरी कमला) नामक कहानी संग्रह से ही हुआ था।

प्रथम मौलिक कहानी सन् 1912 मे प्रकाशित

□ गौमति दादा का गौरव

समानता की बातें तो सभी कर लेते हैं, लेकिन लोकशासन की बातो म हमारे कुलाभिमान तथा जाति अभियान का क्या त्याग ? नही। अगर यह दोष भी है, तो प्रशसनीय है। "महान नर का अतिम कलक है"। राजमान सुमतिशकर का कुटुब भी इस दोष से भूषित हो, तो उसम अनराज क्या ? आजकल क्या है ? लोग दो चार पीढी की बातें करते हैं और सुमति तो शुद्ध ऋग्वेदी, आश्वलाय शाखा का और अत्रेयस गोत्र का उच्च अस्पश्य ब्राह्मण ! 'अत्रेयस गोत्रोत्पन्नोह' दिन मे तीन बार स्मरण किया जाता था। बाप दादे अनुसूया के पेट से ही पैदा हुए थे, उसका प्रमाण चाहिए। जैसे कोई नदी धरती पर होती हुई वृक्ष-पर्णों से ढकी हुई बहती है, किंतु उसका मूल पवत मे ही है, ऐसा हम मानत हैं—जसे पीढी-नामा खो जाने पर भी मूलपुरुष अत्रि तक हम जा सकते हैं, जब वह अत्रि ब्रह्मा विष्णु महेश को गोद मे खिलाने वाली के स्वामी हो और अगर ब्रह्मा तक का दृष्टात सिद्ध हो जाये तो हिम्मत भी है किसी को कि सुमतिशकर के कुलाभिमान के विषय मे शका करे ? इस पीढी नामे के सामने चीन के पद भ्रष्ट राजा के वशगौरव का भी कोई मुकाबला नही है और आप अगर सुमति के काका तथा फूफी का अत्रि सबधी बातें करते हुए सुनें, तो आपको विश्वास हो जायेगा कि ब्रह्मा विष्णु तथा रुद्र को गोदी म झुलाते समय सुमति के काका तथा फूफी द्वार के पीछे छिपकर अनुसूया दादी का पराक्रम देख रहे थे। और किसी शुभाशुभ प्रसग पर सात सुपारी रख कर सप्तर्षि का आह्वान होता, तब सुमति के काका विभूतिशकर की छाती मारे गव के फूल आती, वे अत्रि बनी हुई सुपारी को चदन के चार अधिक छीटे तथा फूल की दो बडी पखुडिया चढाये बिना रह नहा सकते। धीरमति फूफी की ओर देख कर 'अत्रि-सुपारी' की तरफ निर्देश करत

हुए जसे कह रहे हो—यह हमारे दादा !

लेकिन सुमतिशकर के गव का एक और भी कारण था, जो वह और उनके कुटुम्ब के सदस्य दबी आवाज मे कहते या बिना कहे नजरो से समझ लेते। प्रथम तो जैसे उनमे 'मति' ही न हो, वैसे प्रत्येक सतान के नाम के पीछे 'मति' लगाया गया था सुमति के काका विमति, फूफी धीरमति, पिता शकरमनि इत्यादि। कारण यह था कि उनका कोई पूवज 'गौमति' बडा प्रतापी था और उसके वशज औरो से उच्चतर है, यह अहसास बना रहता था। उनके काका जाति के प्रसगा मे, श्मशान मे, बाराता मे सबसे आगे चलते थे, उनकी फूफिया राने-कूटने की क्रियाओ मे सबमे अलग राग मे रुदन करती, उनके लडको को औरा के साथ खेलने की सख्त मनाही थी।

स्कूल मे मास्टरजी को स्पष्ट आदेश था खबरदार ! हमारा लडका अगर किसी के साथ खेलता या बैठता दिखायी पडा तो ! क्यानि आखिरकार, 'गौमति के पेट के' वाली वात आते ही कुटुम्ब के प्रत्येक सदस्य की गरदन ऊची हो जाती थी

सुमति छोटा था, तब उसे बहुत गुस्सा आता था, क्योकि 'गौमति' कुलोत्पन्न होने के बावजद उसम वह हवा कुछ कम थी। समझ म नही आता था कि ऐसी क्या बात थी कि गली के लडको के साथ खेलने पर प्रतिबध था, स्कूल म साथ पर प्रतिबध था। साथ चने खाने और बरसात म दौडने पर भी प्रतिबध था। धीर-मति फूफी तथा हरमति फूफी उमे सख्त डाट फटकार देती और सुमति के कानो मे 'गौमति' कुलकलक की भयानक आगाही सुनायी पडती।

इन दोनो मे भी हरमति फूफी का कुलाभिमान कुछ विशेप सतज था, उनका पति जीवित था, पर सात वर्षो तक पति तथा साम के साथ कुल की उच्चता के विपय मे वाद विवाद करने के पश्चात भी उन दोना की मोभाग्र बुद्धि 'गौमति' कुल की महत्ता समय न पायी, तब कुलदीपिका हरमति फूफी ने ऐसे हलक लोगो के साथ रहने से बेहतर, जीवित पति होते हुए भी वैधव्य स्वीकार करके, शेप जीवन मायके मे बिताने का अडिग निश्चय कर लिया था।

कई दफा सुमति फूफी मे पूछ लेता ऐसा क्यो न करू ? और फूफिया बिगड जाती। बालक की कुबुद्धि के नाश की याचना स्वरूप उनकी आखें आकाश की ओर उठ जाती और कई दफा स्वर जरा तेज करके वे पूजा के कमरे की ओर निर्देश करती। यह सब करन का एक कारण था—बहुत बडा कारण।

पूजा के कमरे मे कुछ अदभुत रहस्य था। 'गौमति' का नाम लेत ही सबकी दृष्टि उस तरफ चली जाती जसे 'गौमति दादा स्वय सदेह वहा विराजमान हो, वैसा सन्नास फल जाता और वप मे एक दिन—वैशाख वदी 14 को—परिवार के सभी वयस्क सदस्य एकत्र हाते, लडके बच्चे अन्य कमरा म वद किय जाते, घी

का दीपक जला कर सभी पूजा के कमरे में जाकर किसी चीज को नवेद्य अर्पित करते थे।

सुमति को बड़ी इच्छा होती थी, यह सब जानने की, कि क्या था भीतर, पर ताऊ की जान पावनी थी। बड़ा होने पर उसे कहा गया कि पूजा के कमरे में गोमति के सोने के वस्त्र मुकुट तथा आभूषण हैं। और एक किवदन्ती कुटुम्ब में चलती थी कि जहाँ तक ये वस्त्रालंकार इस प्रकार गुप्त रहेंगे वहाँ तक कुटुम्ब की महत्ता में कोई आँच नहीं लगेगा। जाति के लोगों का भी यह दृढ़ विश्वास था और गोमति कुल के सम्मान के अधिकारी समझे जाते थे और यजमानों की दक्षिणा भी अच्छी खासी देते थे। एक बार पिता ने उसे समझाया कि बाईस वर्ष समाप्त होने पर ही हर लड़के तथा लड़की को 'गोमति' दादी के वस्त्रालंकार के दर्शन करने का सौभाग्य प्राप्त होगा।

जैसे जैसे सुमति बड़ा होता गया उसकी कुतूहल होने की संभावना बढ़ती गयी। सिर ऊंचा होता गया प्रकृति भी कुछ सशक्त होती गई। वह भी 'गोमति' के पेट की बात करने लगा। बाईस वर्ष तक पूजा के कमरे में जाने पर निषेध था पर वह कल्पना मस्तिष्क में मायावी-सा रहता था रेशमी लिबास, चमकते जवाहर, लचकता शिरपेच, वजयन्ती माला क्या-क्या होगा भीतर? सोचा भी कि गोमति दादी विक्रम से दो चार दर्जे ऊपर ही होंगे। अंग्रेजी पढ़ना शुरू किया तब से मंदिर में जलने वाले एक एक रुपये वाले इतिहास लेकर उसने प्रत्येक लाइन में गोमति शब्द खोजने का प्रयास किया। मंदिर में आने पर यह प्रयास शेष हुआ। तब उसे पता चला कि एक रुपये वाले इतिहास भी अपूर्ण होते हैं फिर श्रद्धा वापस आयी। स्कूल के पुस्तकालय में से वह 'मिल' का इतिहास ले आया और अनुसंधान फिर से शुरू हुआ।

एक यजमान की गलत सलाह से सुमति को कालेज में रखने का निर्णय किया गया। बोर्डिंग में भ्रष्टाचार होने के कारण सुमति को यजमानों के घर रखा गया। जाति तथा कुलशुद्धता के साथ साथ पेट भी था, इसलिए अधर्मी पाश्चात्य पढ़ाई उसने शुरू की।

अंग्रेजी पढ़ाई की अशुद्धता ने सुमति के पवित्र गोमति स्वभाव को कलुषित किया। धीरे धीरे 'स्वातंत्र्य' और 'व्यक्तित्व' जैसे तूफानी पाश्चात्य शब्दों के घोष प्रतिघोष वह सुनने लगा और गंगा की तरह वह नीचे ही गिरने लगा। एक बहुत ही प्राइवेट बात है एक बार तीन दिन तक लगातार उसने संध्या नहीं कही। एक बार कॉलेज की डिबेटिंग सोसायटी में सभी मनुष्य समान हैं जैसी चर्चा में खड़े होने का निलज्ज कदम उठाया और अधमता की सीमा तो तब आयी जब उसने कहा कि बाप दादा की महत्ता पर जीना अपनी क्षुद्रता स्वीकार करना है। यह अधःपतन की सीमा आ गयी। स्वर्ग में या जहाँ भी हो, गोमति की आत्मा

एक विवेचन

चद्रकात बक्षी

गुजराती की प्रथम मौलिक कहानी के विषय म काफी विवाद रहा है। कहानी गुजराती साहित्य मे एक नयी विधा ह। बीसवी शताब्दी के आरम्भ के पूव गुजराती कहानी के आसार नजर नही आते।

पिछली शताब्दी के अत की दिशा मे कुछ कहानीनुमा गद्यप्रवत्ति दिखाई पडती है। लेकिन 1904 मे रणजीत राम बावा भाई मेहता प्रथम कहानी लेकर आते है। एक उल्लेख के तौर पर ही इस नाम का महत्त्व है, विशेष नही।

1909 1910-1912 के आसपास गुजराती साहित्य मे कहानी का फॉम उभरता है। कन्हैयालाल मुशी तथा धनसुखलाल मेहता ने इसी समय कहानिया लिखी। धनसुखलाल मेहता अभी जीवित है। कुछ लोग उन्हे प्रथम कथा लेखक गिनने के पक्ष मे है। लेकिन उनकी कहानिया मे कथा का अनुशासन बहुत कम है, आज उनका स्थान भी नगण्य है। 1912 के आसपास कन्हैयालाल मुशी अपनी कहानिया लेकर गुजरात से समक्ष आते हैं। यहा दी जा रही उनकी कहानी 'गोमति दादा का गौरव' उसी समय की कृति है, और मेरी दृष्टि से आद्य कहानी तथा प्रथम मौलिक कहानी के स्तर के पार उतरती है।

गुजराती साहित्य मे प्रथम गिनी गयी कहानी 1917-1918 के आसपास जाती है। 'बीसवी सदी' नामक तत्कालीन मासिक पत्रिका के सपादक हाजी अल्लारखा शिवली ने उसे अपनी पत्रिका मे स्थान दिया था। इस कहानी के साथ भी एक कहानी जुडी हुई है। इस कहानी के लेखक कचनलाल वासुदेव मेहता का देहात बहुत ही छोटी आयु—28 वष मे—हुआ था। उन्हाने और कुछ भी लिखा था कि नही, पता नही। कहानी 'गोवालणी' (ग्वालिन) एक निर्दोष ग्वालिन तथा एक शहरी जवान का किस्सा है। मैं इसे गुजराती की प्रथम कहानी नही गिनता हू।

न जाय—बड़ी हिफाजत से उसने कोट को ऊपर किया। कोट पर चादी के अक्षर थे। उसने अक्षरा को प्रकाश मे रख कर पढा—और सुमति की आशा के सामने अधेरा छा गया 'सूरत की कोठी। मि० हायर्ड का हमाल।'

सुमति बहोश सा हो गया, उसके हाथ से पोशाक गिर पड़ी। पता चल गया, 'गौमति' दादा क्या करते थे। होश आया और वह ठहाका मार कर हस पड़ा। फूफिया बिगड़ गयी, भतीजे ने स्पष्ट किया। फूफिया और भतीजे ने मिल कर कुलाभिमान को मुश्किल से दुरुस्त किया

रात का दोनो फूफिया तथा भतीजा पिछले द्वार से बाहर निकले। एक गठरी के साथ बड़ा पत्थर बाध दिया और पड़ोस के कुए के पास जाकर उन्होने 'गौमति' दादा के गौरव का विसर्जन कर दिया।

□ मराठी

आद्य कथाकार
कैप्टन गो० ग० लिमये

जन्म 20 सितंबर 1891 में हुआ।
शिक्षा अहमदनगर पूना तथा बम्बई में हुई।
ग्रांट मेडिकल कालेज, बम्बई से 1916 तक एम० बी० बी० एस० की डिग्री मिली। इसके उपरान्त 1918 से 1919 तक पूर्व अफ्रीका में सेना में कैप्टन के पद पर कार्य किया।

सन 1922 में विवाहबद्ध हुए। सन 1927 में उन्हें एक कन्यारत्न की प्राप्ति हुई। 1927 में ही उनकी धर्मपत्नी का स्वर्गवास हो गया। इसके बाद जीवन भर उन्होंने विवाह नहीं किया।

इन्होंने लगभग 125 कथाएं लिखी हैं। इनकी साहित्यिक कृतियों में 5 कथा संग्रह, 6 विनोदी कथा संग्रह, 2 नाटक तथा इसके अतिरिक्त औषध व आरोग्य पर इन्होंने बारह ग्रंथ लिखे। सैनिक जीवन के संस्मरणों को मिला कर इनके 26 ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं। इन्हें चित्रकला, फोटोग्राफी, हस्तकला, व की सिनेमा से विशेष लगाव था।

21 नवम्बर 1972 को 82 वर्ष की उम्र में पूना में इनकी इहलीला समाप्त हो गयी।

आद्य कथाकार शंकर काशीनाथ गर्गे 'दिवाकर'

जन्म 18 जनवरी 1889, प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा नूतन मराठी विद्यालय, पूना। सन 1908 में, स्कूल से फाइनल परीक्षा उत्तीर्ण।

विवाह 24 जून 1910 व्यवसाय—नौकरी। कई वर्षों तक शिक्षक रहे।

अध्ययन का शौक बहुत पहले से रहा। सन 1910 में प्राध्यापक वासुदेवराव पटवर्धन जैसे रसिक व्यक्ति से स्नेह हुआ। उनके बाद केशवसुत, हरिभाऊ आपटे,

1921 के आसपास गुजराती कहानी की जड़ें मजबूत बनाने वाला नाम आता है—गौरीशंकर गोवर्धनराम जोशी 'धूमकेतु' का। 1921 में धूमकेतु ने 'पोस्टऑफिस' लिखी। एक साथ, एक से एक उच्च कोटि की कहानियाँ धूमकेतु की कलम से झरने लगीं और सही मायने में गुजराती 'नवलिका' का जन्म हुआ।

कन्हैयालाल मुंशी का कहानी-साहित्य का योगदान गुप्त-सा ही रहा है फिर भी चूंकि उनका पहला कथा संग्रह 'मारी कमला' 1912 में प्रकाशित हो चुका था इसलिए उन्हें ही गुजराती के आद्य कथाकार होने का श्रेय मिलता है।

□ मराठी

आद्य कथाकार
कैप्टन गो० ग० लिमये

जन्म 25 सितंबर 1891 में हुआ।

शिक्षा बेलगांव पूना तथा बंबई में हुई।

ग्रांट मेडिकल कालेज, बंबई से 1916 तक एम० बी० बी० एस० की डिग्री मिली। इसके उपरांत 1918 से 1919 तक पूर्व अफ्रीका में सेना में कैप्टन के पद पर कार्य किया।

सन 1922 में विवाहबद्ध हुए। सन 1927 में उन्हें एक कन्यारत्न की प्राप्ति हुई। 1927 में ही उनकी धर्मपत्नी का स्वर्गवास हो गया। इसके बाद जीवन भर उन्होंने विवाह नहीं किया।

इन्होंने लगभग 125 कथाएं लिखी हैं। इनकी साहित्यिक कृतियों में 5 कथा संग्रह 6 विनोदी कथा संग्रह, 2 नाटक तथा इसके अतिरिक्त औषध व आरोग्य पर इन्होंने बारह ग्रंथ लिखे। सैनिक जीवन के संस्मरणों को मिला कर इनके 26 ग्रंथ प्रकाशित हुए हैं। इन्हें चित्रकला, फोटोग्राफी, हस्तकला, व बीन सिनेमा से विशेष लगाव था।

21 नवम्बर 1972 को 82 वर्ष की उम्र में पूना में इनकी इहलीला समाप्त हो गयी।

आद्य कथाकार शंकर काशीनाथ गर्गे 'दिवाकर'

जन्म 18 जनवरी 1889, प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा नूतन मराठी विद्यालय, पूना। सन 1908 में स्कूल से फाइनल परीक्षा उत्तीर्ण।

विवाह 24 जून 1910 व्यवसाय—नौकरी। कई वर्षों तक शिक्षक रहे।

अध्ययन का शौक बहुत पहले से रहा। सन 1910 में प्राध्यापक वासुदेवराव पटवर्धन जैसे रसिक व्यक्ति से स्नेह हुआ। उसके बाद केशवसुत हरिभाऊ आपटे,

न० चि० केलकर, गिरीश, यशवंत माधवराव पटवर्धन इत्यादि अनेक महान मराठी साहित्यकारों से परिचय। साथ-साथ अंग्रेजी साहित्य के ग्रंथों का अध्ययन।

18 सितंबर, 1911 को प्रथम एकपात्री नाटक लिखा। इस शैली के नाटक का आरम्भ दिवाकरजी ने ही किया। अतएव इनके लिखे एकपात्री नाटक को मराठी साहित्य का भूषण माना जाता है। इसके अतिरिक्त इन्होंने कई नाटिकाएं एवं भावकथाएं लिखीं।

इनकी पत्नी का 1917 में स्वर्गवास हो गया। सन् 1931 के अक्तूबर महीने में 42 वर्ष की उम्र में इनका स्वर्गवास हो गया। दिवाकरजी का भावनात्मक सृजन विलक्षण था। इनके एकपात्री नाटकों में करुणा, आलोचना, विसंगति, एवं अन्तर्द्वंद्व का बड़ा संयमित और सहज प्रवाह है। इनके छोटे छोटे नाटकों में जीवन के विराट एवं हृदयस्पर्शी क्षणों का सशक्त सम्मिश्रण है।

प्रथम मौलिक कहानी (एक) सन् 1911 मे रचित

□ प्रवासी

शकर काशीनाथ गर्गे 'दिवाकर'

एक ऊबडखाबड रास्ता, बहुत से लोग रास्ते म बातचीत करते हुए खडे है। सूय का प्रकाश धूमिल हो जाने के कारण आसपास कुछ दिखाई नही दे रहा है। प्रवासिया म से तीन चार वद्ध है। शेष म से कोई मध्यम आयु का है तो कोई युवा है। दस बारह वष के दो-तीन बालक अपने पिता को ताकते हुए खडे है।

दादा अपने को अभी और कितनी दूर जाना है। हमारे पैर दद करने लगे हैं।

नजदीक ही आ गया है, बच्चो।

हा, एसा तो आप कितनी बार कहते आये हैं। नजदीक आ गये है, हमेशा यही कहत हो, लेकिन दूरी कभी खत्म नही होती। ये क्या है? एक बार बतला दीजिए, कितने नजदीक आ गये हैं? चलने से हम बहुत तग आ गये हैं।

य क्या पागलपन है! ऐसा कौन-सा धुधलका हो गया है। मैं ये कैसे बतलाऊ कि नजदीक आ गये हैं।

फिर आप यह कसे कहते है कि नजदीक आ गये हैं?

चुप बैठ! बदतमीज कही का। अभी तक बडा से कैसे बात की जाती है, इसकी अक्ल नही है।

चुपचाप चलन की बजाय चकबक लगा रखी है। ठीक है लेकिन हम कहा आ पहुचे हैं?

मुझे लगता है, हम रास्ता भटक गये हैं।

नही नही, यही वह रास्ता है।

कस कह सकते है कि यह वही रास्ता है।

कैसे कह सकता हू ? मुझे ऐसा लगता है इसलिए !

सब कुछ गडबड है । रास्ता भटक गये है या ठीक रास्ते पर हैं । कुछ समय मे नही आता है ।

और उस पर कहा आ पहुचे है, यह भी समझ नही आता ! हम दो-एक मील तो पहुच ही गये होगे ?

इतना थोडे ही चले होगे ! कम से कम ढाई-तीन मील तो चले ही होगे।

तीन मील ? इतनी ही दूरी कैसे हो सकती है ? मुझे तो लगता है कि हम चार पाच मील तय कर चुके हैं ।

हा ! चार पाच मील कहा तय किया है ? अभी तो एक मील भी तय नही किया है ।

क्या हुआ होगा तो आधा या पाव घटा ।

हा हा, इतना ही समय हुआ होगा ।

नही नही ! अच्छा खासा समय हो चुका है ।

हम जिस गाव से आये हैं उस गाव का नाम मजेदार है कि नही ? मुझे तो अभी भी रह रहकर हसी आ रही है । क्या है ? किसी को याद है क्या ?

नही भई, मुझे तो बिल्कुल याद नही आ रहा है ।

क्या था ? टरगुन गुडगुड गुड ऐसा ही कुछ था !

नही-नही ! यह नही । कोई और ही नाम है !

जाने दो ! उससे करना क्या है ! ऐसे कितने ही, गाव हमारे प्रवास म आयेंगे । कौन याद रखता है ! हमारे ठहरने का स्थान शायद धमशाला हो, नही तो शायद किसी मदिर मे ठहरकर कुछ अपने हाथो से बनाकर, कुछ देर सोकर, हसी खुशी आगे चल देंगे । गाव मे क्या रखा है ! ठीक है या नही ? और फिर इतना सब देखने सुनने की फुसत किसे है !

हा और क्या ! और अब हम किस गाव म जा पहुचेंगे और किस म नहीं, इसका भी क्या भरोसा ।

हा ! हा ! हम चल ही तो रहे है ।

तो फिर अब चलो न आगे । यहा पर कितनी देर खडे रहेगे ?

आगे क्या चलें ? धुधलका कितना छा गया है ! उस पर कहते हैं, चलो !

रास्ता हमे ठीक से पता नही है और अगर किसी जगल म या किसी घाटी म जा गिरे, तब क्या करेंगे ?

नहो भई, अब तो नही जायेंगे । आगे ! हम जहा हैं वही रहेंगे ।

ऐसा क्या करते हैं ! हम लोग जिस माग पर खडे है वह माग आगे भी कही जाता है या नही । हमारे आने से पहले बहुत म मनुष्य इसी माग स तो गये होगे ।

हा, बैलगाडी के पहियो के निशान स्पष्ट तो दिख रहे हैं। और क्या चाहिए ?

और कुछ नही चाहिए। बेशक आगे चले चलो धुधलका है तो क्या हुआ देर करने से क्या फायदा ?

जाओ, आगे जाओ। हसी खुशी चलते चलो। हम यहा से रत्ती भर भी हटेंग नही। बेसिर पैर के रास्ते पर जाकर मरना है क्या ?

हा ! आज तक इस मार्ग पर जानेवाले मनुष्य जैसे मर ही गये है न !

कैसे नही मरे हैं ? सभी लोग एक बार गढे मे या घाटी म गिर कर, सिर फूट जाने पर मरे कसे नही होगे ?

मैं कह रहा हू, दूसरे मरे, इसलिए हमे भी मरना ही चाहिए क्या ?

भई, मुझे तो ऐसा लगता है कि अपने अब लौट कर पीछे जायें और उस धर्मशाला मे जाकर ठहरें।

हा ! हा ! बहुत अच्छी बात है ! चलो फिर से चले।

दुबारा जायें ? नही भई, हम फिर से नही आयेंगे।

और अब फिर से लौट कर जाना कहा है ? और कैसे ? किस तरह स का क्या मतलब ? उसी मार्ग से धर्मशाला आसानी से पहुच जायेंगे।

अपन भी उसी तरह जायेंगे, तो रास्ता भटक जायेंगे। ऐसा लगता है क्या ?

ऐसा कसे नही हो सकता है ? रास्ता भटक कर या फिर किसी घाटी मे गिर कर सिर फूटने पर मर कसे नही जायेंगे ? बतलाना तो ?

ओफ, हा ! लेकिन अभी इसी रास्ते मे आये हैं या नही ? यह ठीक है।

लेकिन जिस रास्ते से हम आये है, उसे भी कैसे भूल सकते हैं ?

क्या धुधलका साफ हो जाने तक हम यही खडे रहे ?

हा हा हा, ऐसे ही करना पडेगा।

क्या ऐसा ही करना पडेगा ? मान लो, धुधलका साफ होने तक हम यही खडे रह और भूकप आ जाये ?

इसलिए तो कह रहा हू कि आगे ही चलें, तब मौत भी आ जाय तो कोई बात नही !

नही, भई इससे अच्छा तो पीछे लौटते वक्त मरे !

और जीते जी मर जाना ही क्या बुरा है ?

हा ! हा ! हा !

ठीक है ! मैं तो आगे चलता हू। जिसे मेरे साथ आना हो आ जाना।

लो ! हम भी चल रहे है आपके साथ !

अरे रे ! जो कहा रह है, मुडो और हमारे साथ पीछे चलो ! नही ! हम लौटकर नही जायेंगे। तुम्हे जाना है तो जाओ ! कोई तुम्हारा रास्ता नही

रोक रहा है।

तुम नही आ रहे हो हमारे रास्ते मे! लेकिन हम तुम्हें जाने देंगे तब न!

यह बात है क्या? तो हम भी देखते हैं कि दुबारा कैसे लौटते हैं? अरे ए मूर्खो। हमारे साथ चुपचाप यही खडे रहो!

नही! हम तुमसे आगे जायेंगे!

हम तुम्हें पीछे खींच लेंगे।

खबरदार। जरा भी हिले तो! अपने स्थान पर ही खडे रहो, मूर्खो!

कौन मूख है?

तुम मूख हो!

नही तुम्ही मूख हो!

सब लाग हाथापाइ पर उतर जाते है। एक दूसरे को घसीटने लगते हैं। कोइ किसी को लकडी से मार रहा है तो काइ पत्थरो की वर्षा कर रहा है। बचारे बच्चे घबराकर रोने लगते हैं। मेरा सिर फूटा! मा, सीने पर पत्थर लग गया! अरे वो आगे भाग रहा है। पकडो-पकडो! और ऐसे शोरगुल के साथ लोगा का दौडना शुरू हो जाता है।

प्रथम मौलिक कहानी (दो) सन् 1922 मे प्रकाशित

□ किस्मत

गो ग लिमये

टिक टिक ठाक और उसके बाद गोलाबारी का धूम धड़ाका।

वह जानी पहचानी आवाज सुनते ही रामदयाल का कलेजा धक् से हो गया। हाथ कापने लगे और उसके हाथो से डोली (स्ट्रैचर) गिरने को आयी। यह आवाज बदन् (बागी अरब) लोगो की बदूका की थी। इससे पहले यह विशिष्ट आवाज रामदयाल ने दो चार बार ही सुनी होगी। फिर भी उससे अच्छी तरह जान-पहचान हो गयी थी। मानो उनका जिंदगी भर का साथ हो। गुस्सल या मरकहे शिक्षक के खखारने की आवाज चाहे एकाध बार ही सुनी हो, फिर भी बच्चा के लिए वह पूरी परिचित हो जाती है। वसे ही वह ठाक-ठिक् रामदयाल के कानो मे पूरी तरह समा गयी थी। कही से कोई आवाज आती तो रामदयाल का दिल धड़कने लगता था, वह कान उठाकर देखने लगता था और इस बार तो सचमुच लड़ाई शुरू हो गयी थी। फिर उसकी घबराहट न पूछिए। ठीक से बोल भी न पा रहा था वह।

रामदयाल एक फील्ड एबुलेंस मे डोलीवाला था, और वह एक कालम के साथ जा रहा था। सामने लड़ाई शुरू होते ही अगाडी की पलटन ने गोलाबारी शुरू की। ढप-ढप हमारे फौजियो की गोलाबारी शुरू हो गयी। लुईस गनो की स र र र' सुनाई देने लगी मशीनगनो ने भी 'चट्चट चटचट गालियों की बौछार आरभ की। अपनी तरफ की यह भयकर गडगडाहट सुनकर रामदयाल की जान मे जान आ गयी और इतने मे बाकी कालम को अपनी जगह पर रुकने का हुक्म आया। तब उसे अच्छा लगा, लेकिन यह खुशी ज्यादा देर तक न रही। सू सू

करती हुई एक गोली उसके सिर के ऊपर से चली गयी। फौरन दूसरी आयी। फिर अगल-बगल से 'सूऽऽ' करती हुई गोलिया गुजरने लगी। रामदयाल को लगा कि जीवन का अत आ गया। अब वह कभी घर नहीं लौट सकेगा। उसकी हड्डिया तक सियार-कुत्ते ले जायेंगे।

टोलिया नीचे रख कर रास्ते के किनारे बैठ जाने का हुक्म दिया गया। झट से रामदयाल एक छोटे-से कनाल मे हाथ-पैर सिकोड कर और सर छुपा कर लेट गया। बाकी लोगो मे से कुछ हसी-मजाक करने लगे। कुछ बद्दुओ को गालिया देने लगे और जो समझदार थे वे अपना झोला (किट्‌बेग) खोल कर 'रोटी और सब्जी' खाने लगे। एक ने तो जल्दी से जमीन खोद कर चूल्हा बनाया और पास से घास लाकर चाय के लिए पानी भी चढा दिया। जो डरपोक थे, वे छिपने के लिए तरह-तरह की जगह ढूढन लगे और वहा बैठ कर किसी ने हुक्का पीना भी शुरू कर दिया। कुछ बीच म उठकर 'परिस्थिति' का अदाजा लगा रह थे। गोलियो का धडाका जारी था। कभी पचम मे तो कभी सप्तम मे गाना गाती हुई गोलिया जा रही थीं। एक गोली तो रामदयाल जहा लेटा हुआ था, उस कनाल के बाध को लगी। लेकिन सौभाग्य से उसने घुटना मे सर छुपा लिया था इसलिए गोली से उडी धूल उसने नहीं देखी और उसी वक्त एक खच्चर के उछलने की वजह से उस गोली की ठप आवाज उसकी समझ मे नहीं आयी। वरना उसे लगता कि उसी को गोली लग गयी है और वह मर जाता।

अब 'फॉल इन' का हुक्म आया। अगाडी पर बहुत से लोग घायल हो गए थे इसलिए डोलीवालो की एक टोली आगे भेजनी थी। घुटनो से सर निकाल कर रामदयाल अपनी जगह पर थरथराता खडा हो गया। उसने डोली उठाई और वह डोली आगे बढने लगी। अब तो रामदयाल के होश उड गये थे। मन को लगातार डर लग रहा था। अब तो यह गोली नहीं लगेगी—बाप रे बाप! कितनी करीब से चली गयी यह—ओह! यह तो बिलकुल सट कर चली गयी। हा,उसके साथ चलने वाले डोलीवाले को ही लगी। लेकिन खुशकिस्मती से वह गबच या। वह गोली उसकी बाह के आर-पार चली गयी। 'ड्रेसी बाबू (ड्रेसर)ने पट्टी बाध कर उसे वापस भेज दिया। रामदयाल को लगा, हाय! वह गोली मेरी बाह मे क्यो नहीं लगी? फिर मैं एबुलेंस मे बैठकर वापस चला जाता फिर अस्पताल, फिर बगदाद और आखिर 'इडिया जाने का मौका मिलता। कम से कम कुछ दिनो के लिए इस घमासान लडाई से छुटकारा तो मिलता। लेकिन नहीं, वे आगे बढते रहे, गोलिया की बौछार जारी थी। 'सट'—और एक गोली आयी। आयी नहीं, उसके नाइक के सीने से घुस गयी। धडाम से वह नीचे गिर पडा। ड्रेसी बाबू ने देखा। देखने की कोई जरूरत ही नहीं थी। दस कदमों पर एक गडढा था। रास्ते से हटा कर वहा उसे छोड दिया गया। भगवान का नाम

लेने की भी फुरसत नही मिली उसे। गोलिया कहकर थोडे ही आती हैं? बदूक की आवाज सुनायी देने से पहले ही उसमे से निकली गोली सीधी हमारे पीछे चली गयी होती है। गोली आ गयी, कहना गलत है। गोली चली गयी, कहना चाहिए। आने से पहले गोलिया 'नोटिस' नही देती।

नाइक की मौत देखकर रामदयाल के रागटे खडे हो गये। आगे बढने की उसमे बिलकुल हिम्मत नही रही। उसे चक्कर आ गया और चलते-चलते वह एकदम नीचे बैठ गया। दूसरे लोगा ने उसे बहुत समझाया कि तुम यही रह जाओगे बीच मे ही। हम तो आगे बढ जायेंगे। एबुलेंस भी पीछे रह गयी है। लेकिन नही, 'मेरे पेट म दद हो रहा है,' कह कर वह सडक के किनारे बदन सिकोड कर पडा रहा। ड्रेसर ने भी उसे बहुत समझाया-बुझाया, धमकाया, बूट मे कोचने की भी कोशिश की लेकिन सब बेकार। 'डरने से क्या फायदा? जो होना है, सो होगा। तुम्हारी किस्मत मे मरना हा तो यहा पड कर भी मरोगे। चल उठ, पागल कही का!' ड्रेसर ने कहा। रामदयाल कहता है, 'बाबू जी, मैं डर नही रहा हू। लेकिन पेट मे भयानक दद उठ रहा है। चक्कर आ रहा है और बिलकुल चला नही जाता। मैं भी क्या करू? ड्रेसर ने उसे थोडी-सी 'दवा' पिलाई और 'मरो साले यहीं पर!' कह कर वह टोली के साथ आगे चला गया।

वह टोली आखा से ओझल हो जाते ही रामदयाल के पट का दद अचानक गायब हो गया और धीरे से उठ कर झुके झुके उसने 'रिटायर' करना शुरू किया। अगल बगल मे गोलिया आ रही थीं। गोली की 'सूऽऽ' आवाज आते ही वह और नीचे झुक जाता। जरा मुड जाने पर उसन इद गिद देखा तो कोई भी नजर नही आ रहा था। अगाडी के लोग आगे और पिछाडी का कालम पीछे। वह बीच मे ही अकेला रह गया था। अब शाम हो गयी थी। उसकी समझ मे नही आ रहा था कि क्या किया जाये। एक बार उसे लगा कि कुछ भी हो, आगे जाकर अपनी टोली म शामिल हो लिया जाये, फिर मरना हो तो दोस्तो के बीच मर जाऊगा। घायल हो गया तो लौटन को डाली मिल जायेगी। एक घूट पानी की जरूरत हो तो कोई भी दे देगा। लेकिन अगर पैर को गोली लग गयी तो? तो क्या करूगा? मर गया ता किसी को पता तक नही चलेगा। मरा नही और इधर से बदद आयें और पकड कर ले जायें तो? इस तरह सोचते हुए वह पीछे की ओर मुडा। लेकिन फिर उसे लगा, जितना आग बढता जाऊगा, उतना डर भी ज्यादा, और वह टोली अब नही मिली तो? इस तरह दो-तीन बार वह आगे पीछे चला गया। इतन मे उसकी बायी ओर तीन कदमो पर एक गोली आ कर टकराई। वह डर क मारे कापने लगा। वॉटर-बॉटल मे से थाडा-सा पानी पीने की भी ताब न रही।

इधर रात हो गयी। गोलाबारी धीरे-धीरे कम होती गयी। तोपों की गडगडाहट भी थम गयी। उस रात वहीं 'कप' करने का हुक्म आया।

ड्रेसर बाबू अपनी टोली को ले कर लौटने लगा। चलते चलते रास्ते में उसे ठोकर-सी लगी। दियासलाई जला कर देखा तो रामदयाल की लाश! गोली ठीक सीने में लगी थी और सीने के पार हो गयी थी।

प्रथम मौलिक कहानी (तीन) सन् 1922 23 मे रचित

□ मैकॅनो

गो ग लिमये

उस बात को बीते आज एक अरसा हो चुका है। पर आज बरबस उसकी याद आ ही गयी लगता है जैसे कल ही की बात है। उस दिन 'वो' मुझे देखने आये थे पर मुझे शादी ब्याह म कोई दिलचस्पी नही थी। रह रह कर कुछ अजीब सा लग रहा था। ऐसी हालत मेरी शायद ही कभी हुई हो हा, एक बार जब मेरी भाभी के पहले मगलागौर के अवसर पर जब मैंने टोकरी भर भर के फूल लूटे थे और एक बार और ऐसा हुआ था जब मैं मारे लाज के अपने म समा नही पा रही थी। मुझे अपनी सुध ही नही रही, बेमेल कप बसी की जाडियो मे चाय उडेल डाली। दूध पर से मलाई हटाने लगी तो टोप म चम्मच ही गिरा दिया। नीचे देख कर चलते हुए दरी से पाव उलझा लिया। इतना ही नही, मैंने खब जोर-जोर से बोलने की ठानी थी। परतु मैं धीरे धीरे बोलती रही। जो जो सोचा था ठीक सब उसके विपरीत हुआ। उस 'प्रस्ताव' के बारे मे पूरी आश्वस्त हो चुकी थी। मुझे विश्वास हो चुका था कि 'वह' मुझे जरूर पसद आयेंगे। मन के किसी कोने मे यही गाठ बध गयी थी और ऐसा लगने लगा कि 'विवाह हो ही गया'।

लोग मुझे देखकर चले गये। मेरे आनद और उत्सुकता की सीमा नही थी (लेकिन अब मुझे ऐसा लग रहा था कि प्रेम रूपी प्रसाद जो मरे अतमन को प्राप्त हुआ, वह जाते समय वह अपने साथ ही लेते गये—वरना आज 'वह' और कही और उनके प्रति, प्रेम भावना ही केवल मेरी थाती रह गयी—ऐसा क्यो कर हुआ) उस दिन मैं गव से फूली नही समा रही थी जिस दिन वे' मुझे देख कर गये। उस दिन मेरा मन बल्लियो उछल रहा था। भाई का रूमाल

साबुन से सब धो डाला। आगन में झाड़ू लगायी। और वो-वो काम किये जो कभी नहीं किये थे।

लेकिन अचानक फिर क्या हुआ, किसे मालूम! उस दिन के बाद उनके बारे में घर में फिर कभी चर्चा तक नहीं हुई। मेरा धीरज छूट रहा था। मैं बेचैन थी। जभी तभी चाय पी लेती थी—मीठी या फीकी चाय में मुझे कोई फर्क नहीं मालूम पड़ता था। बुनाई का काम हाथ में लेती पर वह भी धरा का धरा रह जाता

आज घर में सवेरे से ही हलचल थी पर मैं स्तब्ध पड़ी थी। इतने में ही किसी ने घर में आ कर कहा—जल्दी करो लोग उस स्टेशन आ रहे हैं। मैं आपे में न रह सकी। बहुत क्रोध आया दांत पीस कर रह गयी। मारे गुस्से के रोना आ गया मेरे मन में शादी के लिए कोई ललक नहीं थी।

मैंने गुस्से में खूब पटक पटक की। दूध से भरे टोप में चम्मच फेंक दिया और आज जानबूझ कर बेमेल कप बसी में चाय उडेली और जबरन दरी से पाव उलझाया। आना जाना मैंने सोचा ठीक वैसे ही किया। आज मैं खूब जोर-जोर से बोल रही थी। धृष्टता पूर्वक गर्दन ऊंची कर के सबको आंकती जा रही थी। मुझे यह प्रस्ताव जो अस्वीकार करवाना था।

लेकिन विधि का विधान कौन कहे? मैंने जो सोचा था, ठीक उसके विपरीत हुआ और—बात यही पक्की हो गयी! मैं मानो मर-सी गयी न जाने क्या हो गया। मैं अनमनी हो चली। हाथ में लिया अनाज जहां का तहां फेंक देती छाछ लेने के पहले ही मेरा भात खत्म हो जाता और न जाने ऐसे ही क्या-क्या होने लगा था। एक दिन सवेरे ही उठ कर सबसे तैयार करनी थी लेकिन मैं जान-बूझकर बैठी रही। बैठे-बैठे जी ऊब गया और उठ पडी। मन में विचार हुआ बाहर खुली हवा में सांस लूं। बाहर जाने की तबीयत हुई। मैं ठकू के पास गयी लेकिन ठकू तो मेरे ही यहां सेवैंया तैयार कराने आयी थी। मैं वापस लौटी। मुझे लगा जैसे मैं पागल हो जाऊंगी!

मैं मैकॅनो (एक विशेष प्रकार का खेल जिसमें भिन्न प्रकार के प्लास्टिक अथवा स्टील के टुकड़ों को जोड़ कर मनचाहा आकार बनाया जाता है) जोड़ने लगी। उसमें भी जी ऊब गया। अपना ट्रंक सहेजने लगी। उसमें भी मन नहीं लगा। कुछ बुनने का विचार हुआ लेकिन सारी औरतें दरवाजा रोक कर बैठी थी और सेवैया बनवा रही थी। किसी ने आवाज दी। मैं अंदर गयी। मुझसे चाय बनाने के लिए कहा गया। मैं चाय बना रही थी उधर मुझ पर ताने कसे जा रहे थे। आज पहली बार मेरे मन में मुझे ऐसे तानों के प्रति तिरस्कार की भावना जाग्रत हुई। मैं मन ही मन कुढ़ कर रह गयी। मैं क्रोधित हो उठी थी। पर धीरे-धीरे मेरा क्रोध शांत हुआ और मैं उस आनंद और उल्लासमय वाता-

वरण मे समरस हो चली। मुझे स्वय भी कुछ अजीब सा लगा। इतने म मेरा कोई गाव से आया और वह भी मुझे चिढाने लगा। मेर मन मे पडी विषाद की गाठ खुलती गयी और मन ही मन मैंने गुदगुदी महसूस की जिसकी शुरआत मुसकान से हुई पर परिणति हसी मे बदल गयी। धीरे धीरे घर मे जमघट बढने लगा और मैं भी लोगा की हा मे हा मिलाती उनमे घुल मिल गयी। चम्मच, कप-बसी तथा दरी मे उलझने की बात तो मैं भूल ही गयी।

आज मैं उनके साथ एक सभा मे गयी हुई थी। सामने की कुर्सियो की पीछे की पक्ति म 'उन्ह' बैठना था और मैं औरता मे जाकर बैठ गयी। इतने म मेरी दाहिनी तरफ कुछ चमका। मैंने देखा वह एक अष्टकोण की घडी थी। उसे देखते ही चट कोई बात मरे मन म कौध गयी। मेर मन म उथल पुथल सी हाने लगी। मैं भूली बिसरी कडिया जोड रही थी। इतने म मुझे छूनी हुई एक छतरी नीचे गिरी। मैंन छतरी उठायी और झटक कर साफ कर के उसकी मालकिन को दे दिया। उस चमकती घडी और छतरी दोना की मालकिन एक ही थी।

पर मुझे ऐसा लग रहा था जैसे यह छतरी कही देखी अवश्य है। मैं मन-ही-मन ताल मेल बैठान लगी। सामने की कुर्सी पर बठा एक व्यक्ति उठ कर चला गया था और पीछे की पक्ति मे मेरे 'उनके' पास बैठा हुआ एक व्यक्ति मुझे दिखायी दिया। परतु उसी बीच एक व्यक्ति आया और उस पहली पक्ति की खाली कुर्सी पर बैठ गया जिससे वह व्यक्ति आड मे पड गया। मैं उसकी सिफ एक ही झलक देख पायी थी। लेकिन अगर वह व्यक्ति आ कर न भी बैठना तो मैं 'उस' व्यक्ति को अधिक देर तक नही देख सकती थी। मुझे चक्कर आ रहा था। मेरी आखो के समक्ष सब कुछ जैसे एकाएक स्पष्ट हो चुका था। उस घडी और छतरी की जा मालकिन थी उसी का वह पति था और वह काई और नही 'वही' थे जो मुझे पहली बार देखन आये थ।

मुझे कुछ विचित्र सी अनुभूति होन लगी। लगता था जैसे मेरा रक्ताशय ही जम गया हो। मुझे कोई अदश्य चीज छूती हुई गुजर गयी। मुझे खटकने जैसी तो काई बात नही थी पर कुछ था जा मुझे रह रह-कर सालता था। मैं अच्छे भले सुखी परिवार मे थी। उनको भी मुझसे प्रगाढ प्रेम है और मैं भी उनकी सेवा म काई कमी नहा होने देती। मैंने कभी उनकी इच्छा के विपरीत आचरण नही किया। उनके इशारे पर डोलनी रही। तिलमात्र भी इधर से उधर नही। कभी भूले से भी उनको जवाव नही दिया। कभी मिथ्याचरण नही किया। कभी जिद नही की। अगर कभी उन्हें सिर दद हुआ तो उनका सर दबाती और तब तक दवाती जब तक मेरे हाथ जवाब न दे देते। और ऐसे मे कभी-कभी मुझे सर दद हो जाता। अगर उनके हाथ म चाकू लग जाता ता मैं पट्टी बाधती। कभी सिनेमा जाने का उनका विचार होता तो झट उनके कपडे निकाल कर लाती और

अचानक कहीं उनका विचार बदल भी गया तो मैं चुप रह जाती। कभी किसी बात पर जिद नहीं की। अगर उन्हें कभी लौटने में देरी की आशंका होती तो मुझसे खा-पी लेने के लिए कह जाते। मेरा मन इस बात को नहीं मानता पर उनका आदेश जो ठहरा कैसे अवज्ञा करती। कभी प्यार से मेरे जूड़े में गुलाब के फूल खोंस देते तो मैं वह गुलाब उनके कॉलर में लगा देती। कभी थककर घर जाते तो मैं उनके पांव दबाती।

और अगर उनके पास बैठे हुए व्यक्ति से मेरी शादी हुई होती तो? मैं वही रिस्टवाच और छतरी लेकर अपनी बगल की कुर्सी पर बैठती। हम दोनों साथ-साथ बैठती और 'वे दोनों भी साथ बैठे होते। लेकिन भाग्य की विडंबना। मेरी हालत उसी बेमेल कप-बसी की-सी हो गयी है। यही मेरी ससुराल 'उस' घर में होती तो मैं उस प्यार की आड़ में सब-कुछ सह लेती। उनको मैं खूब चिढ़ाती, खूब तंग करती। अगर वे मुझसे रेशमी ब्लाउज पहनने को कहते तो मैं खादी का ब्लाउज पहनती। टेढ़ी मांग निकालने को कहते तो मैं जानबूझ कर सीधी मांग निकालती। ज्यादा जगने से अगर हम दोनों को सिरदर्द हो जाता तो मैं उनकी तीमारदारी में अपना सिरदर्द भूल ही जाती। उन्हें कहीं जो सिर पर चोट लग जाती तो मैं बर्फ की ठंडी पट्टी रखने के बजाय बदहवास ही हो जाती। उनके कहने पर चलो कहीं घूम आयें तो मैं नहीं-नहीं की जिद करती। परंतु उनका मन जो बाहर के कहने, ' इस बरसात में कैसे घूमने चलें ?" मैं कहती, "कुछ नहीं आप जरूर चलेंगे। बरसात में घूमने का आनंद ही कुछ और है।' उनसे मेरी कभी नहीं पटती। अमुक बात अच्छी है, अगर उनको ये मशा होती तो मैं जी-तोड़ उसका विरोध करती और अपनी बात मनवाने की जिद करती। इतना ही नहीं अगर उनकी कोई निंदा कर बैठता तो मैं उसी की हां में हां मिलाती। उनको कभी घर लौटने में देरी होती और अगर मुझ से खा-पी लेने को कह जाते तो मैं सिर्फ हूं कह कर गर्दन हिलाती। लेकिन करती अपने मन की ही। वे देरी से आते और खा कर उठ जाते।

मैं उनकी जूठन का आस्वादन करती। अगर वे कभी अपने कोट में लगाने के लिए गुलाब का फूल लाते तो मैं झट फूल खींच कर अपने जूड़े में लगा लेती। पांव दाबते-दाबते अगर वो कहते 'बस रहने दो' तो मैं भी दबाती ही रहती। और अगर यह कहते कि 'जरा और दबाओ' तो मैं मुंहफट-सी फट बोल बैठती, ' "जरूर! पर मेरे थके हाथ भी दाबने पड़ेंगे।"

मुझे उस बेमेल कप-बसी दूध में फेंके गये चम्मच और देरी में पांव उलझने की बात आज फिर याद आ गयी। इसमें आश्चर्य की कौन सी बात है? आज फिर वही भूल मुझसे हुई—सभा खत्म होने पर तालियों की गड़गड़ाहट से मैं

कल्पना लोक से जागी। हम घर आये, मेरी हालत कुछ विचित्र ही थी। मुझे कुछ होश नही था। आज फिर चाय बनायी। आज फिर दरी मे पाव उलझे—लेकिन आज आखो के सामने वाकई अधेरा छाया था जो बेमेल जोडी मैंने बनायी, आज उसी का वास्तविक रूप मेरे सामने जो था।

'प्रवासी' तथा 'मैकॅनो' एक विवेचन

गगाधर गाडगिल

[मराठी के दो विद्वानों श्री गगाधर गाडगिल और श्री माधव मोहोलकर ने अपने-अपने कारण दे कर मराठी की तीन कहानियों को 'प्रथम मौलिक कहानी' होने के (ऐतिहासिक, साहित्यिक और कलात्मक) तक दिये हैं। उनके सारगर्भित विवेचन और तर्क यहा प्रस्तुत हैं। —सम्पादक]

मराठी की प्रथम कथा कौन सी है? यह प्रश्न वास्तव म क्लिष्ट ह यह मुझे पहले से ही ज्ञात था, परतु जब 'सारिका' सपादक कमलेश्वर जी ने यही प्रश्न और आग्रह किया ता मुझे मजबूरन इसकी छानबीन करनी पडी। पर अतत यही निष्कप निकला कि इस प्रश्न का समुचित आर सतापपूण उत्तर देना असभव है।

वैसे इस निष्कप पर पहुचने मे मुझे काफी समय लगा और इस दौरान मस्तिष्क पर काफी बोझ पडा। पर अब मैं निश्चित हू कि चिताआ का पहाड मेरे सिर से उतर गया लेकिन अब यह नैतिक जिम्मेदारी मेरे सिर पर आ पडी है कि अगर समाधानकारक उत्तर देना सभव नही हा ता कम से कम असमाधानकारक उत्तर तो अवश्य देना है। और यह भी कोई आसान काम नही है।

इस प्रश्न का उतर देने मे दो अडचनें मेरे समक्ष खडी हैं। प्रथम, इतिहास वेत्ताओ के बारे म। उन्नीसवी शताब्दी म कभी मराठी म कथाआ का श्रीगणेश हुआ और ये कथाए तत्कालीन प्राचीन पत्रो म प्रकाशित हुइ—बिखरी पडी हैं। अब उन सारी कथाओ का मथन करना और उसम से कथा का चयन करना और वह भी प्रथम कथा का चयन, यह वास्तव म एक बडा ही दुष्कर काय है। इस काम का जिसे शौक है, वही यह काम कर सकता है। 'सारिका सपादक श्री कमलेश्वर के कहने मात्र से ही कोई लेख लिखने पर राजी नही हा सकता। इससे कोई इनकार नही कर सकता कि सारिका एक प्रसिद्ध और उत्कृष्ट पत्रिका है

और दूसरे इसके सपादक कमलेश्वर जी मेरे मित्र हैं जो उससे भी महान लेखक हैं। लेखकीय मित्रता निभाने के लिए मनुष्य ज्यादा से ज्यादा जान दे सकता है पर इतिहास सशोधन के लिए वह क्यो उद्यत होगा ?

लेकिन सौभाग्य से यह दुष्कर काय अभी हाल ही म एक सज्जन न किया है और वह है स्वनामधन्य श्री राम कोलारकर। इन्होने सग्रहालयो मे धूल जमी हुई सैकडा पत्र पत्रिकाओ की छानबीन की और मराठी कथा को जड से लेकर पल्लव तक सब छान मारा। इतना ही नही, इन्होने अपना यह प्रयास सन 1968 मे पुस्तक के रूप म प्रकाशित कर पाठक वग के समक्ष रखा। गहस्थ का मतलब पागल ! और हम पागल है। यह तथ्य उन्होने पुस्तक की प्रस्तावना म ही स्पष्ट कर दिया है। वैसे यह सब लिखने की आवश्यकता नही थी, क्योकि पुस्तक देखने पर सभी ने इसका मूल्याकन किया। लेकिन इस 'पागल' मनुष्य ने जो कागज का अपव्यय किया, उससे मुझे बडी सहूलियत हो गयी। पागलपन भरा प्रयास किया कोलारकर ने, और अब मैं उस पर शेखी बघारने चला हू !

लेकिन इसम भी तो अडचन है। कथा, कथा कब बन गयी इसका स्पष्टीकरण भी तो मुश्किल है। कथा, कथा आखिर यह है क्या बला ? उसका स्वप्न किस म है ? उसके विषय मे रचना म, प्रस्तुतिकरण म, भाषा शैली मे, आत्म नेखन मे, आखिर किसमे है ? कदाचित इसका समुचित उत्तर प्राध्यापक द सकें क्योकि उन्हे इसका उत्तर देना ही पडता है। अगर नही ता विद्यार्थियो का क्या बतायेंगे ? परीक्षाओ मे कौनसा प्रश्न अपेक्षित है और उनका उत्तर कैसे सोचना है ? शिक्षण, यह एक बडा व्यापार है और इसे सुचारु रूप से चलाने के लिए बुद्धि होनी चाहिए परतु ऐसी कोई जिम्मेदारी मुझ पर नही है। यह सच है कि मैंने जन्म भर कथाए लिखी, अर्थात जो कुछ भी लिखा उसे कथा की सज्ञा दी। अब मुझे इस बात का पता होना चाहिए कि आखिर कथा है क्या ? यही मारे सिरदद की जड है, लेकिन किसे परवाह है ? यह कथा नही है, यह मैं स्पष्ट कह सकता हू, आगरकर के लेख मे एक बालकवि की कविताओ म भी कथाए नही हैं। इतना ही नही जाडिलकर की 'भाऊबदकी और काणेकर की 'पलव्याची कला' (भागने की कला) ये भी कथाए नही है। यह मैं सीना ठोक कर कह सकता हू। लेकिन कथा को व्याख्या के जाल मे डालकर पकडना चाहू तो वह जाल म सत्रह छेद करके निकल जायगी।

कोई कह सकता है कि मैं नया कथाकार हू। कथा के क्षेत्र विस्तार पर मैंने गप्प लगायी है, और अब परिणाम भुगतना है ! मुझे मान्य है। सवथा मान्य है। लेकिन नयी कथा के भूत के जन्म के पहले भी कथा की व्याख्या करने का साहस किसने किया है। लघुकथा छोटी होती है, ठीक है पर प्रश्न यह है कि कितनी छोटी ? आखिर यह 'कितना छोटी' नापने के लिए फीता है किसके पास ?

हम चार कोने बता सकते हैं अर्थात गाय के सींग होते हैं लेकिन बिना सींग की गाय होती ही नही, इसकी कोई हामी नहीं भर सकता। और तो और, हर गाय दूध देगी ही, ऐसा भी कोई निश्चयपूर्वक नहीं कह सकता।

कथा के लिए कथानक होना ही चाहिए। यह दुराग्रह करने का कोई साहस नही करेगा। लेकिन पहली कथा का शोध करते वक्त ऐसा मान कर ही चलना पडेगा कि कथा का कथानक होना ही चाहिए। लेकिन कहानी और कथा के कथानक म अतर क्या ? प्रश्न जटिल है। इतना कहा जा सकता है कि कहानी का *कथानक मजबूत बाधे हुए गट्ठर के समान है। प्रवाह म बहते जाते हुए एक लकडी* की सिल्ली की तरह। कहानी के कथानक मे एक स्वच्छन्दता होती है। उसका आरभ शुरू मे ही नही होता है और उसका अत एकदम बाद म हो, ऐसी लेखक की मनोवृत्ति होती है। कथा के पहले कुछ और ही घटित हो रहा था और इसे अगर कथा म समाविष्ट किया जाता, तो वही *कथा* कुछ दूसरी ही हो जाती और कथा जहा समाप्त हो रही थी उससे और आगे भी बढ सकती थी। इसी तरह कथाओ के कथानक के अलग-अलग भाग आपस मे नट-बोल्ट की तरह फिट ही बैठे रहते हैं।

कहानियो में भी विषय और प्रकृति की विविधता होती है। ईसप की कहानिया, बावेनिआ की कहानियां, ढक्सन राजपुत्र की कहानी, बीरबल *बादशाह की कहानी, कहानी की कहानी* और पुराणो की *कहानिया, ये सभी* कहानिया है। परतु सभी के विषय और स्वभाव मे अतर है। फिर भी कहीं कोई समानता है। उन सभी के नियमो एव स्वरूप का एक खास ढाचा होता है। अरबी *भाषा की मजेदार कहानिया मे वर्णित राक्षस और पुराणो के राक्षस, इन दोनों मे* फर्क है। इनके जाति-धर्म अलग हैं। उनकी दुनिया अलग है और इस अलगाव को बनाये रखना और उस उसी सीमित परिधि म बाधे रखना स्वाभाविक ही है। ठीक यही स्थिति हमारे हिंदू समाज की है, कुल-गाव अलग, आचार विचार *अलग अन्न अलग, परिधान अलग, और यहा तक कि भाषा म भी विभिन्नता है।* इन विभिन्न जातियो को मिलाकर एकाकार करना वास्तव मे बडा दुष्कर कार्य है। खैर।

कहानी की एक विशिष्टता यह भी सर्वविदित है कि वह हमारी रोजमर्रा की जिंदगी से कुछ हटकर ही होती है। अधिकतर भूतकाल की और ज्यादा आकर्षण, अदभुतपने की तीव्र उत्कठा, विलक्षणता लिये हुए हो, यही उससे अपेक्षित है। लेकिन आजकल के लेखको की जब कलम उठी तो उन्होने उसमे थोडा हेर-फेर कर डाला। विषय का अलगाव तो नही रहा, लेकिन उनकी प्रकृति मे, स्वभाव मे, अलगाव अवश्य दिखाई दिया। अगर हम सूक्ष्म दृष्टिपात करें तो आजकल हरिभाऊ की कहानियो मे इस अलगाव के कुछ अवशेष अवश्य हमे प्राप्त होते हैं।

कहानी की एक और विशेषता यह होती है कि लेखक उसमें कहीं न कहीं लेखक रूप में अवश्य उपस्थित रहता है और इसमें उसे किंचित मात्र भी संकोच नहीं होता। और नतीजा यह होता है कि कहानी और पाठकों के बीच एक व्यवधान पड जाता है। जिससे प्रस्तुतीकरण पर भी असर पडे बिना नहीं रहता।

प्रस्तुतीकरण और भाषाशैली में एक सूक्ष्म परंतु महत्त्वपूर्ण अंतर है। प्रस्तुतीकरण का स्वरूप कायम रखते हुए भी भाषाशैली में विभिन्नता हो जाती है। कहानी की भाषाशैली वास्तव में क्लिष्ट होती है। अपना अस्तित्व बनाये रखने का भरसक प्रयत्न करती है, अपनी प्रतिष्ठा की रक्षा करते हुए कायरत रहती है, और शिष्टाचार का उसे ध्यान रहता है।

कहानी के पात्र भी प्रभावशाली तथा मजे हुए होते हैं। उनके विभिन्न चरित्र एक चौहद्दी में ही सीमित रहते हैं और यह चौहद्दी भी चौकान ही होती है।

लेकिन कथा इन सब विवादों से अलग होती है। उसमें कोई जाति धर्म का भेद नहीं होता। अरबी भाषा की कहानियां और गोविंदराव की कहानियों में कोई अंतर नहीं है। दोनों एक दूसरे से मेल खाती हैं। इनमें समान अनुभव के दर्शन होते हैं जो भिन्न प्रकार के रूप ग्रहण करते हैं।

जीवन से अलग रहना कथा को मान्य नहीं है। उसे भूतकाल भी वर्जित नहीं है। रोमांचपूर्ण वर्णन में भी उसका संबंध अभी टूटा नहीं है। लेकिन इसके उपरांत भी जीवन से जो उसका अटूट संबंध रहा है, वह ज्यों का त्यों अक्षुण्ण है। इतना ही नहीं, उससे रस-तृप्ति भी होती रही है। जीवन के प्रति उसकी यह निकटता, उसके विषय एवं स्वभाव दोनों में दृष्टिगोचर होती है।

कथा में लेखक उपस्थित नहीं रहता। अर्थात वह कथा में लेखक के रूप में भी नहीं रहता। पात्र के रूप में भी वह उपस्थित ही रहता है, ऐसा भी नहीं है। प्रस्तुतीकरण के लिए पात्र हों, यह भी आवश्यक नहीं, ऐसी कथा-लेखकों की मान्यता है। कथा वस्तु स्वयं ही गतिशील रहती है। कथा की भाषा व्याकरण तथा बंधन स्वीकार नहीं करती। भाषा कथा से अलग अस्तित्व रखती है, यह उसे ज्ञात रहता ही है।

कथा का स्वरूप कैसा होता है यह समझाने की मूर्खता तो मैंने कर ही दी है और मैं भलीभांति जानता हूं कि इसके लिए मुझ पर प्रहार अवश्य होंगे। मैंने जो भी विधान दर्शाये हैं, उनके अपवाद निश्चित रूप से ही मौजूद हैं। इसलिए ये 'प्रहार' मुझे बिना किसी विरोध के सहने ही होंगे। इसके सिवा अब दूसरा चारा ही क्या रह गया है ! लेकिन इतना मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि ये प्रहार कथा के विषय रूप का वर्णन करने की अपेक्षा कम त्रास-दायक हैं। अच्छा ही हुआ जो मैं अधिक त्रासभार से बच गया।

लेकिन बड़ी मुश्किल है, इसके बाद भी एक बड़ा पहाड़ पार करना है और

वह है मराठी की पहली कथा का निणय लेना। आधुनिक काल की मराठी की पहली कहानी सन् 1854 मे छपी। उसके पश्चात 1924 तक छपी कहानियो की सूची राम कोलारकर ने अपनी 'सर्वोत्कृष्ट मराठी कथा' खड 1 म दी है। लेकिन कहानी कब कथा रूप म परिवर्तित हुई, यह मूल प्रश्न तो ज्यो का त्यो कायम है। *वास्तविकता तो यह है कि कहानी का रूप धीरे-धीरे बदलता गया और कथा का* प्रादुर्भाव हुआ। परिवतन मे कई पडाव आए और किस पडाव पर कहानी का रूप कथा रूप मे परिवर्तित हुआ, इस बार मे निश्चयपूरक कहना कठिन है। वजह यह है कि कथा की तथाकथित विशिष्टता उस परिवतन काल की कहानियो म भी कुछ हद तक विद्यमान है और यह विशिष्टता अमुक एक कहानी मे है, इसलिए *यही पहली कथा है, इसका निणय हमे ही करना है। पर इस निणय से हम सतोष* मिलेगा, यह सदहास्पद ही है और लोगो का भी इसे समथन मिलेगा, यह तो सवथा असभव है।

बस इतना ही सही है कि मराठी साहित्य मे कथा ने धीरे धीरे अपना आकार बनाया। उसके विकास की एक सीधी रखा निर्धारित करना हमारे बस की बात *नही, हरिभाऊ आपटे ने डिस्पेशिया जसी कथा लिखी और फिर उनके साथ और* लेखक भी पुराने ढर्रे पर चलते रहे तथा कहानिया लिखते रहे, यह कई बार दुहराया जा चुका है। आखिरकार 'डिस्पेशिया' की कथा लिखकर हरिभाऊ जसे अन्य लेखको को यह एहसास नही हुआ कि उन्होने क्या लिख डाला, पर इसके लिए हरिभाऊ को दोषी ठहराना उचित नही।

कहानी का लघुकथा मे जब परिवतन हुआ, इसका मगलाचरण हरिभाऊ न ही किया। सन् 1892 म 'डिस्पेशिया और दो चित्र और दो कथाए लिखकर कहानी के कथानक और उसके विषय मे जा पारपरिक कल्पनाए थी, उस उन्होने तोडा। हल्के फुल्के कथानक के साथ उन्होने आशय सपन्न विषयो का भी चुनाव किया, परतु ठास कथानक के बदले यत्र तत्र बिखरी घटनाओ का सकलन करके *उसे कलात्मक परिधान मे सजाया, उसी तरह उन्होने एकपात्री सांकेतिक पद्धति* का भी परित्याग कर दिया। डिस्पेशिया' की कथा म विनोद भी भिन्न प्रकार का है। इसके साथ-साथ वह अधिक व्यापक आशय का अविभाज्य अग बन गया। इन सब तथ्यो को हृदयगत रखते हुए हरिभाऊ की पहली कहानी मराठी की कथा की श्रेणी म सवप्रथम है और इसकी पुष्टि करन वाले से विवाद करना सवथा असभव है। 'मामी आगगाडी कसी चुकली' (मेरी आग गाडी किस तरह चूक गयी)—तात्यासाहब केलकर की यह कहानी भी उपरोक्त श्रेणी म आती है। उसमे आये हुए विनोद म स्वच्छद गति है, स्वाभाविक प्रवाह है। वह ठास कथानक के भार से मुक्त है। उसकी रचना मे एक प्रकार का प्रवाह है तथा साथ ही साथ कलात्मक गुफन भी है। इस कथा म तथा हरिभाऊ की कथा —दोना म

ही लेखक की उपस्थिति परिलक्षित होती है। उसका प्रस्तुतीकरण भी कठिन एवं दुर्बोधगम्य है। तो भी 'मासी आगगाडी कशी चुकली' को अगर कोई कथा की श्रेणी में मानता है तो उसे अमान्य करना कठिन है। और अगर इस वाद-विवाद के विषय को छोड़ भी दिया जाय, तो कथा के प्रयास में यह एक महत्त्वपूर्ण पड़ाव है, इसे तो स्वीकार करना ही होगा। मुझे तो ऐसा आभास होता है कि वारलासाहब यह मानकर लिखने बैठे कि उन्हें रुचिकर सत्य का प्रतिपादित करना है और उन्होंने कथा लिख डाली। और यही प्रयास लघुकथा के विकास में एक और उपलब्धि थी।

सच्चाई तो यह है लेखक की कहानी के पहले की 'हरिणी की मृत्यु' कथा भी कथाओं के विकास में एक महत्त्वपूर्ण सीमाचिह्न है। यह एक हरिण की कथा है। प्राणीजीवन की वास्तविकता का दर्शन कराने वाला चित्रण इस कथा का विषय हो सकता है। इस तथ्य से भलीभांति परिचित होने पर भी लघुकथा के विषय की एक विस्तृत परिधि का आकलन इसमें हुआ है। एक नयी दिशा मिली। परन्तु फिर भी कथावस्तु उसी पुरानी लीक पर चल रही थी। हां, उसमें कुछ विशिष्टता एवं सीमित चरित्र थे। इसके अलावा उसका जिस तरह से उपसंहार किया है, उससे लगता है कि कथा के बीज उसमें अवश्य विद्यमान हैं। लोकमित्र में इनकी 'सिवार सूचना' नाम की कथा भी रहस्यमय वातावरण में से होकर गुजरती है। लेकिन वह अपने दायरे में ही सीमित है। सीमोल्लंघन नहीं करती। कथा का यह प्राथमिक गुण उसमें विद्यमान है। इसी तरह हम गौर करें तो 'तोरण हास्य' जो श्री वा० रानाडे ने लिखी है वह अपने लक्ष्य में असफल रही है। शास्त्रोक्त चमत्कार। का कथा संसार में प्रवेश दिखाने का यह प्रथम प्रयास था—महत्त्वपूर्ण भी था परन्तु उसमें से कथा की कोई वस्तु नहीं मिली। रानाडे जैसे महान लेखक का इस प्रयास में यश नहीं मिला! वि० सा० गुजर, सरस्वती कुमार, ना० के० बेहर, ना० ह० आपटे इत्यादि साहित्यकारों ने इस काल में काफी कुछ लिखा। मराठी साहित्य में कथा-परिवर्तन करने तथा उसे लोकप्रिय करने में बहुत प्रयास किया, लेकिन कथा को स्वयं अपना रूप निर्धारित करने एवं पहचानने में किंचित भी सहकार्य मिला। इसमें संदेह है।

इसके विपरीत एकपात्री नाटककार दिवाकर की 'प्रवासी' नामक एक ही कथा का कोलारकर ने संग्रह किया और उनकी दी हुई सूची में भी दिवाकर के नाम पर किसी दूसरी कथा का उल्लेख नहीं मिलता। लेकिन इतना कहना पड़ेगा कि और लेखक ढेर सारी कथाएं लिखकर जो प्राप्त न कर सके, वह उन्होंने अपनी एक ही रचना 'प्रवासी' में प्राप्त कर लिया। प्रवास पर निकले एक मनुष्य के छोटे छोटे उद्गार पर ही यह कथा आधारित है। परन्तु यह प्रयास भी साधारण नहीं है। उसके वर्णन के लिए तथा उसके बड़प्पन की डींग मारने की उसमें

उत्कंठा नहीं। वे तत्त्वचिंतन भी नहीं करते तथा काव्यात्मक भाषा का भी उपयोग नहीं करते—आम लोगों की बातचीत की भाषा ही वर्णित है। भावनाओं की भी उद्दाम तरंगों का कोई वेग नहीं। केवल सीधे सादे शब्दों का ही प्रभावपूर्ण विलक्षण संकलन है। शब्द जितना बोलते हैं, उससे अधिक कहीं इंगित करते हैं। इतना ही नहीं, इन उद्गारों का जो परस्पर संबंध है, वह कथन जितना ही महत्त्वपूर्ण है।

इस कथा में पात्र हैं लेकिन चेहरे नहीं हैं। कौन-सा कथन किसका है, इसका लेखक ने कहीं उल्लेख नहीं किया है और उससे पाठकवर्ग को परिचित कराना लेखक ने उचित नहीं समझा। इसमें पात्रीयता है ही नहीं। कथा में पात्र हैं ही नहीं, मानो लेखक इस कथा में अप्रत्यक्ष रूप से भी प्रवेश नहीं करता। सारे अवांछित वार्तालाप उन्होंने बड़ी खूबी से दूर रखे हैं।

कथा, कथानक से वंचित है। पारंपरिक समाधानकारक जैसा उसका अंत भी नहीं है। फिर भी उसका अंत किसी और प्रकार का होना चाहिए ऐसा भी कोई नहीं कह सकता। इस कथा का आरंभ अकस्मात होता है और अचानक ही कहीं अंत होता है। इतना होने पर भी आरंभ से अंत तक उसका एक सार्थक रूप है। एक निश्चित वातावरण है। ऐसा आभास होता है कि श्री दिवाकर को ही मराठी का आदि कथाकार माना जाय। लेकिन कोलारकर इससे सहमत नहीं है। शायद 'प्रवासी' नाटक के अधिक समीप है ऐसी उनकी मान्यता है। यह सही है कि वह नाटक के अधिक समीप है परंतु नाटक नहीं है। वह क्या है? उनकी दूसरी नाट्यकथाएं इस नाटक जैसी नहीं है। उसी तरह यह नाट्य-कथा भी नाटक नहीं, कथा है। डोरोथी पार्कर ने भी इस प्रकार से एक कथा लिखी है जिसे एक उत्कृष्ट कलाकृति का दर्जा मिला है। इसीलिए मेरा आग्रह है कि 'प्रवासी' भी प्रकाशित की जाय।

एकपात्री नाटककार दिवाकर, मराठी साहित्य के एक मूर्धन्य लेखक ने हमसे कई साल पहले जन्म लिया, परंतु इसका यह अर्थ नहीं कि उनके लेखन कार्य पर अन्य साहित्यकारों एवं उनके समकालीन लेखकों की दृष्टि नहीं पड़ी। उस समय श्री दिवाकर के अल्प लेखन कार्य पर भी अन्य लेखक भी भरसक टीका टिप्पणी करने से बाज नहीं आए। लेकिन दिवाकर जैसे मूर्धन्य लेखक उस वक्त क्या कर रहे थे, कितना महान कार्य उन्होंने हाथ में लिया था इसका सही मूल्यांकन उनके समकालीन नहीं कर सके। उसका नतीजा यह हुआ कि उनकी लेखन-शैली का, पद्धति का उनके समकालीन विभूतियों पर कोई असर नहीं पड़ा।

दिवाकर की मराठी साहित्यिक कृतियों पर दूसरे लोगों ने भी प्रतिक्रिया व्यक्त की लेकिन कैप्टन गो० ग० लिमये नामक लेखक ने जो थोड़ी लेकिन अप्रतिम कथाएं लिखीं, उनमें से कई कथाएं प्राय विस्मृति के गर्त में खो चुकी

कुछ खोलकर रख देती है, साथ ही साथ 'मॅकॅनो' शब्द से जिस प्रतिमा का जो रूप हमारे समक्ष आता है उससे कथ्य को और भी बल मिला है। प्रस्तुतीकरण से जो कुछ भी व्यक्त हो सका है उसे एक अलग चौहद्दी प्राप्त हुई है। सारी कथा को एक अलग ही कलेवर मिला है। कहने की आवश्यकता नही कि य सारी विशेषताए कथा की ही हैं।

इस कथा के प्रस्तुतीकरण मे एक स्वाभाविक सहजता का उल्लेख विशेषकर इसीलिए किया है कि सहजता भी कृत्रिम हो सकती है। मराठी के अच्छे कथाकारो ने यह दु साहस किया है। इसका प्रस्तुतीकरण सहज ही आरभ हो जाता है। प्रस्तावना का अवाछित विस्तार नही है। बहते हुए प्रवाह मे जैसे पत्ता बहत-बहते आखो से ओझल हो जाता है लगभग कुछ हद तक इस कथा का भी यही रूप है। यह इसलिए कि इसका अन नाटकीय है, रूप-वसी कपबसी का दरी में उलझ जाना जब तीसरी बार कथा मे आता है तो हमे भी थोडा खटकता है, परतु थोडी-सी खटकन पर यह भी विचार उठता है कि कही यह कथा की कलात्मकता का ही भाग तो नही है! शेप प्रस्तुतीकरण मे सहजता है। कथा की पष्ठभूमि आत्म निवेदन पर है, इसीलिए लेखक को कथा मे अनायास प्रवेश का अवसर नही मिल पाया है, यह सही है लेकिन लेखक बडे कुशाग्र हुआ करते हैं। आत्मनिवेदन की स्थिति म भी कथा मे प्रवेश कर जाते हैं। पर ऐसा कोई अप्रत्याशित चमत्कार नही घटित होता है जैसे कथानायिका बीच मे ही काव्य प्रतिभा दिखाने लगे, वह तत्वचितन नही करती, भावनाओ के फूल खिलाने नही पडते, कथानक की कडिया सूत्रबद्ध करने की आवश्यकता नहीं पडती। वह अपनी स्वाभाविक एव स्वच्छद गति से चलती रहती है। अपनी भाषा बोलती है। अपने मन के उदगार प्रकट करती जाती है। जो कुछ उस कहना है, उसके लिए उसे कोई विशेष प्रयत्न नही करना पडता। वह स्वय ही उदघत हो जाता है और वह कहती जाती है। इसके अतिरिक्त उसे और कितना दुख है, क्लेश है, वह कहती ही नही। उसका यह दूसरा पहलू हमे कही-न-कही चुभने लगता है सालने लगता है, अवाछित विस्तार प्रस्तुतीकरण म स्वय ही दब जाता है। वह गृहस्थ, उसकी पत्नी, नायिका का पति, ये सभी पात्र बिना चेहरे के हैं। वह गृहस्थ, मतलब वह पैकेट जिसमे कुछ खान को रखा है, और उसकी पत्नी मतलब वह कलाई घडी, बस इतना ही!

और वे दा वणन, नायिका पति से कैसे व्यवहार करती है तथा दूसरा वह जिसम गहस्थ से किस तरह का व्यवहार करती है ये दोना कितने सहज और सरल हैं कितने प्रभावशाली है। प्रतिभाशाली कवि भी जिम बात को कहने म सक्षम नहीं वह सब इतनी सहजता और सरलता से कह दिया गया है। इसम कितनी बारीकी है खूबी है जिसमे नारी वग परिचित है और उन बारीकिया मे से छानकर निकाली गयी और बारीकिया

इतना ही नही, इन दो वणना मे आपस म कितना सहज तारतम्य है और यह तारतम्य कितना अथपूण है! पहला वणन पढत हुए हम कुछ गाफिल से रहत है, पर दूसरा वणन आरभ होते ही पहले वणन से कितना भिन अथ मिलता है। और अगर पहला न होता तो दूसरे को एसा उमाद कैसे मिलता? मतलब यह कि इस दूसर वणन को पढते ही थोडा सा अस्वाभाविक सा लगने लगता है। उलटी सुलटी मिलाई जैसी थोडी यात्रिक गडबडी और किंचित नाटकीयता खटकने लगती है। परतु मन म यह नका उठती है कि यह थोडी नाटकीयता उस कथा के कलात्मक परिणाम का आवश्यक भाग तो नही है?

उपमा, प्रतिमा इत्यादि तो हैं ही नही। खान का वह पकेट कलाई घडी और छाता, दरी मे उलझना, बेजोड कप-बसी, बस इतनी ही सारी सामग्री, लेकिन वह कलाई घडी कितनी जचती है वह खान का पैकेट कितना मीठा होता है—इसीलिए आग आय वणन म मिठास ही मिठास है।

दूसरा वणन पढत समय हसी नहीं आती। उसका प्रेम कितना मधुर है, मधुर हान के साथ कितना हठी है नाटकीय और चपल—और न मालूम क्या-क्या है। कितने रग हैं उसक व्यक्तित्व मे—यह सब देखने के बाद ऐसा आभास होता है कि इन सब मे कितना तारतम्य है। इस व्यक्तित्व मे आज्ञाकारी पत्नी का एक ही रग है और अब एक दूसरा रग। अगर यह सब कहन का पागलपन करते हुए कहा जा सकता है तो इस कथा को लिखने के लिए श्री लिमये की क्या आवश्यकता थी? 'मकॅनो' ही पर्याप्त था जिसमे से मनचाही कथाए गढी जा सकती थी। मराठी के आदि कथाकार म दिवाकर कृष्ण का भी नाम लिया जाता है। उनकी कथा, 'पिंजरे का तोता' बडी ही सुदर कथा है। अगर उसका भी यहा उल्लेख करना आरभ कर तो निश्चय ही कमलेश्वरजी मेरी पिटाई किये बिना नही रहगे। इसलिए उसका उल्लेख भर कर रहा हू! अतत कमलेश्वरजी के प्रश्न का उत्तर तो मैं नही दे पाया, पर मैं उत्तर देने के लिए बधा हुआ थोडे ही था—मैंने तो पहले ही अपने कान बद कर लिये थे!

किस्मत एक विवेचन

माधव मोहोलकर

यं तो सन 1854 से लेकर 1921 तक मराठी मे सैकडा मौलिक कहानिया लिखी गयी, लेकिन आधुनिक कहानी के आसार 1922 म नजर आए। पहली महत्त्वपूर्ण आधुनिक कहानी कैप्टन गो० ग० लिमये की 'किस्मत' थी, जो 1922 मे 'नवयुग' पत्रिका मे प्रकाशित हुई थी। उसके बाद उनकी 'मैकेना', 'विठूचें भविष्य' आदि अच्छी कहानिया एक के बाद एक प्रकाशित होती गयी। ऐतिहासिक दृष्टि से मील का पत्थर बनने का सौभाग्य 'किस्मत' को प्राप्त हुआ और बकौल प्रख्यात मराठी कथा समीक्षक राम कोलारकर के, सन 1922 से कैप्टन लिमये के कथा लेखन ने जो नया मोड लिया वह मराठी कहानी की किस्मत बदल देने वाला था।

किस्मत से पहले लिखी गयी मराठी कहानिया आधुनिक कहानी की कसौटियो पर खरी नही उतरतीं। बहुत-सी कहानिया उपन्यास के साराश जैसी लगती थी। शायद कहानी लेखकों के दिमाग मे उपन्यास और कहानी का अतर भी स्पष्ट नही था। लबे लबे ब्यौरेवार वणन, बीच बीच मे अनावश्यक स्पष्टीकरण व्याख्या आदि उस समय की कहानियो के प्रमुख दोष थे। उन कहानिया मे वस्तुपरक यथार्थता का सपूर्ण अभाव था। सन 1907 के बाद आश्चर्यकथा, प्राणिकथा जसी कल्पनानिष्ठ स्वच्छद कहानिया लिखी गयी। उनका भी अपना एक महत्त्व है ही। लेकिन 'किस्मत' और उसके बाद लिखी गयी कैप्टन लिमये की कहानिया, न केवल कहानी-कला की दृष्टि मे उच्च कोटि की थी, बल्कि उनमे पहली बार समकालीन जीवन का यथार्थ चित्रण किया गया था। वस्तुत कैप्टन लिमये ने अपनी किस्मत से आधुनिक कहानी की नीव डाली जिस पर बाद मे गगाधर गाडगिल, अरविंद गोखले, दि० बा० मोकाशी और पु० भा० भावे जसे सशक्त कहानीकारो ने नयी कहानी की पुख्ता इमारत खडी की। कथा-

समीक्षक राम कोलारकर के अनुसार 'इंद्रियगोचर यथाथ के माध्यम तथा भ्रम तोड दने की दु सह प्रक्रिया के द्वारा जीवन की अपरिहायता का निमम दशन करानेवाली यथाथवादी कहानी लिखने के लिए गो० ग० लिमये मामन आए कैप्टन लिमये को कामेडी से त्रासदी अधिक प्रिय थी।' 'किस्मत' भी एक दु खात कहानी है। मृत्यु का भय न केवल मनुष्य, बल्कि प्राणि मात्र की मूलभूत भावना है। हर कोई मौत से बचना चाहता है लेकिन वह नही जानता कि बहुत बार मत्यु से बचने की हर सभव कोशिश उसे मत्यु के और ज्यादा करीब ले जाती है। मौत से दूर भागने के लिए जो रास्ता वह अख्तियार कर लेता है वह दर असल मौत के पास पहुचने का पास का रास्ता होता है। नियति के इस क्रूर खेल का शिकार है रामदयाल—'किस्मत' का नायक।

'किस्मत' घटना प्रधान कहानी नही है। उसमे बल दिया गया है रामदयाल की मानसिक दशा के चित्रण पर। वह एक मामूली 'डालीवाला' है जिसे युद्ध-भूमि पर मत्यु का भय लगातार सताता रहता है। भय और आशका से ग्रसित रामदयाल सदा अनिश्चय के अधर म लटकता रहता है। उसमे न निश्चित निणय लेने की क्षमता है न अपने निणय पर दढता स अमल करने की। यही उसके दुख-मय अत का कारण है। 'किस्मत' म रामदयाल के अतद्वद्व पर बल देने के कारण वह जितना अपने आपसे बातचीत करता हुआ दिखाया गया है उतना दूसरा से नही। फिर भी रामदयाल और 'डेसी बाबू' के सभाषण मे स्वाभाविकता है और रामदयाल का स्वगत कथन उसके मानसिक सघष का उजागर करता है।

युद्धभूमि का जीवन वातावरण पैदा करने मे कैप्टन लिमये की सफलता ताज्जुब की बात नही है क्योकि युद्ध उनके लिए 'भोगा हुआ यथाथ' था। पहले विश्व युद्ध म वे मोर्चे पर गए थे और मौत के साय मे पलती जिंदगी देखी थी और अप्रत्याशित रूप से आन वाली सस्ती से-सस्ती मौत भी। और जो कुछ भी देखा था, तटस्थता से देखा था और अपनी कहानियो मे चित्रित किया था। युद्ध-भूमि का चित्रण करन के लिए कल्पना का सहारा लेन की उन्ह कतई जरूरत नही थी। कालम, रिट्रीट, फॉल इन, नोटिस, रिटायर इत्यादि फौजी जीवन मे सबधित अग्रेजी शब्द 'किस्मत' मे सहज रूप से आए हैं। यही नही, ध्वनि प्रभाव पैदा करने वाले शब्दो ने वातावरण के निर्माण मे सहायता की है। प्रवाहमयी शैली आखिर तक पाठक की औत्सुक्य भावना को बनाये रखती है। रामदयाल का अतद्वद्व जब पराकाष्ठा पर पहुच जाता है, तब कहानी ही समाप्त हो जाती है। ओ० हेनरी की कहानिया की तरह 'किस्मत' का अत सिर्फ झटका देन वाला ही नही बेचैन कर दन वाला भी है क्योकि 'किस्मत' रामदयाल ही क जीवन की त्रासदी नही समूचे मानव जीवन की त्रासदी है।

□ सिंधी

आद्य कथाकार लालचद अमर डिनोमल

सिंधी की प्रथम मौलिक कहानी 'हुर मखी जा' (मखी झील का डाकू) के लेखक का पूरा नाम है लालचद अमरचद डिनोमल जगत्याणी। उनका जन्म 25 जनवरी 1885 को हैदराबाद—सिंध (अब पाकिस्तान) मे हुआ।

उन्होंने अपनी पूरी जिंदगी साहित्य सृजन मे व्यतीत की। अपने उसूलो पर वह आजीवन अटल रहे। सिंधी साहित्य-क्षेत्र मे उनकी साहित्यिक टक्करें प्रसिद्ध है। अपने विचारो को लेकर 'सबके विरुद्ध एक' हो जाने का उनमे साहस था और यह साहस अपने विचारो के प्रति पूर्ण विश्वास की देन था। वह उन लोगो मे थे, जिन्होने सिंधी साहित्य मे आलोचना की बुनियाद डाली।

उनकी अपनी एक निजी शैली थी और सिंधी भाषा पर उनका गजब का अधिकार था। सिंधी साहित्य की लगभग सभी विधाओ म उन्होंने अपनी कलम आजमायी।

कर्वे विश्वविद्यालय म वह प्राफेसर थे, तथा सभी विषय सिंधी मे पढाते थे। उनकी मत्यु सन 1954 मे नबई में हुई।

उनकी प्रमुख कृतिया हैं 'चाथ जो चडु और किश्नीअ जो कष्ट (लघु उपन्यास), 'फूलन मुठि'(निबध सग्रह) ऊमर मारुई (नाटक)और 'सदा गुलाब' (मुक्त छद)।

प्रथम मौलिक कहानी   सन् 1914 मे रचित

□ मखी झील का डाकू

सिंधी म यह कहावत हो गयी है कि तुम तो मखी के डाकू हो !

उन डाकुओ न, मखी के हुरो ने, सन 1895 के आसपास पूरे सिंध प्रान्त मे, खासकर थरपारकर जिले मे ऐसा कुहराम मचाया, सरकार की नाक मे ऐसा दम किया और उसे ऐसा परेशान किया कि यदि कोई चतुर कथाकार होता, तो सारे तथ्य इकट्ठे करके कोई बहुत सुदर उपन्यास रच डालता। लेकिन मैं खुद मे इतना साहस नहीं पाता, गोकि सारे तथ्य और विवरण मेरे पास मौजूद हैं। मैं तो यहा ऐसे तथ्य सिफ पाठकों के मनोरजनाथ पेश करता हू।

मखी झील से सापड करीब आधे कोस की दूरी पर है। उसकी चौडाई सोलह कोस और लबाई बत्तीस कोस है, यानी उसका क्षेत्रफल पाच सौ बारह वग कोस है। झील के इद-गिद काटेदार झाडिया और बबूल आदि के घने पेड हमेशा छाये रहते हैं। वर्षा ऋतु मे पानी बढ जाने पर झील म कमल नाल, पवण बीह आदि इतने अधिक पैदा होते है कि इन्हे खाने वालो की कमी पड जाती है। पानी के रहते उसमे गेहू, सरसो चने और मूगफली और पानी के उतरने पर ज्वार की फसल भी होती है। वहा मच्छी भी खूब होती है। झील के पेट मे छोटे छोटे अनेक द्वीप हैं। डाकुओ ने इस झील का ही अपना प्रमुख अड्डा बना रखा था। लूट-पाट मे जो भी माल-खजाना हाथ लगता, वे उसे लाकर यहा इकट्ठा करते।

शुरू शुरू मे डाकुओ के दल मे सिफ पाच आदमी थे—बचू खासकेली, पीरू मान, तगियो चाग, ईमो दाहिडी और खमीसो वसान। पाचो किंगरी के पीर बाबा के चेले थे। पाचो अलग-अलग स्थानो से आकर यहा एकजुट हुए थे। बचू बेटा था वरियाम का। उनका पीर बाबा गश्त करता हुआ उनके यहा आ पहुचा। *वरियाम ने पीर को भोजन के लिए आमंत्रित किया। वहा किसी बात पर पीर*

के नौकर छुट्टल के साथ बचू का झगडा हो गया और बचू उसकी हत्या करके भाग गया। सरकारी कर्मचारियों ने वरियाम पर दबाव डाला कि वह अपने बेटे को कानून के हवाले कर दे। बेटा था फरार। वह उसे कहा से लाता। आखिर वरियाम को ही पकडकर जेल में डाल दिया गया, जहा जहर खा कर वह मर गया। इसके बाद बचू ने डाके डालने का धधा अख्तियार किया। वह किसी मनपसद साथी की खोज म था कि पीरू उससे आ मिला।

पीरू भिरे का रहने वाला था और उस पर माधड के तेजू वाले की डिग्री थी। उसके नाम वारट भी जारी किया गया था। पीरू वहा से चपत हो कर सीधा बचू से जा मिला। इन्हीं दिनो तगियो चाग मिठडाऊ मे डाका डाल कर और ईमो दाहिडी अपने गाव मे चोरी करके भाग खडे हुए और बचू की टोली मे शामिल हो गय। पाचवा था मारो बाखोरा वसान। खमीसो उन दिनो दादी नाम की एक ब्याहता स्त्री पर लटटू हो गया और उसने तलवार मे दादी के पति उम्मान के हाथ पैर काट डाले, भाग खडा हुआ और बचू के दल म शामिल हो गया।

गखी झील म जब पानी उतार पर होता, तब यह दल वहा आकर डेरा जमाता, वरना दल की बैठक होती वेरछन गाव के अलीबख्श के यहा, जो स्वय एक प्रसिद्ध डाकू और शरमद था।

इस दल ने पहला और बडा डाका रजा मुहम्मद नबरदार के उस्मान पर डाला। रजा मुहम्मद मिठडाऊ का रहने वाला था और इन डाकुओं का रक्षक था। मिठडाऊ से कुछ भसे चोरी हो गयी और रजा मुहम्मद के पास इनकी रिपोट हुई। पता लगाने के लिए उसने अपने सिपाही कारो को भेजा। कारो परो के निशान देखता-देखता मीर की सीमा म टरो के गाव पहुचा। उसने वहा चोरी के आरोप मे शर और चाडिया जाति के कुछ लोगो को पकडा। मीर के कारो बारी को जैसे ही यह समाचार मिला उसने फौरन वहा पहुच कर कारो को रस्सी से बधवा कर खूब पिटाई करवायी और खूब फटकार डलवायी। उसन जा कर इस माजरे की फरियाद अपने मालिक से की। सुनते ही रजा मुहम्मद के तनबदन मे आग लग गयी। उसने तत्काल बचू और पीरू को बुलवा कर कहा—हम हमेशा तुम्हारी रक्षा करते आय है अब तुम इस बेइज्जती का मीर स बदला लो।

उन दोनो ने कहा—मालिक, आप बेफिक्र रहे। हम भी उसका वह हाल करेंगे कि वह उम्र भर याद रखेगा।

उन्होंने आस पास के जितने भी नामी गरामी चोर डाकू थे, सबको सदेशा भिजवाया—आकर हमस मिल जाओ तो अपनी बाल्गाहत बना डालें। पुलिस हमारी तरफ है। कोई खौफ खतरा नहीं। तलवारें और बदूकें भी मौजूद है।

इस पर साधड के परिओ का बटा गुल माची भर्रो का बल गाहों मुरार

तानुके रा मिसरी, वागोरे का राणा वसार, चोटियारे के मीरखान का बटा फतलू गाहा और उसका भाई मूमार, ये छह आदमी जो रोहिडी पीर बाबा के चेले थे, बचू के दल म आ मिले।

दल के लोगो ने बचू को बनाया अपना बादशाह, क्योकि उनमे वही सबसे पहले इस लाइन म आया था और बदूक चलाने म बहुत कुशल और निशानबाज था। शारीरिक दृष्टि से वह ठिगना और कुछ दुबला था ताकत मे भी कुछ खास नही था, फिर भी इतनी शम उनमे थी कि उन्होने उसका हक नही मारा। पीरू शरीर से मजबूत लबा-चौडा, परबत सरीखा पहलवान था, उसे वजीर बनाया गया। रमीमा को बनाया गया कोतवाल। बाकी लोग इस शाही दरबार मे अमीर बने। फिर वे सज सवर कर घोडा पर चढकर मीर के इलाके म आये और उसके दरवाजे पर दम अलहक' का नारा लगा कर टूट पडे। वह साधारण डाकुओ की तरह लुक छिप कर, नकाब लगा कर अधेरी रात म नही आये थे, बल्कि दिन-दहाडे प्रतिष्ठित लोगो की तरह आये थे और मीर की सारी सपत्ति, गहने-आभूषण, तलवारें-बदूकें, साजो सामान ही उठा कर नही ले गये वरन् उसकी एक मृगनयनी, पतली कमर वाली सुन्दरी बेटी को भी उठा ले गये। बाद मे बचू और उस लडकी का परस्पर प्रेम हो गया और बचू ने बाकायदा निकाह करके उसे अपना बना लिया। बचू ने उसे अपने मित्र, पीर लगारी गाव के चौधरी खुदाबख्श के घर मे रखा। जब भी उसे मौका मिलता, वह वही आ कर अपनी स्त्री के साथ रहता और उसके सान्निध्य का आनद लेता।

मीर अपने दो पट्ठे कामदारो मदद खान और जहान खान को साथ ले कर साघड सूबेदार जुम्मे खान स उससे मदद मागी। सूबेदार ने कहा—अगर तुम आदमी को पहचाना, तो मैं पकडवा दूगा। लेकिन यही तो सबसे बडी मुश्किल थी। खूब तलाश किया गया, किंतु सब व्यर्थ, क्योकि व तो सब के-सब मखी झील मे सुरक्षित थे। पानी स होकर उन द्वीपो तक जाने का मार्ग सिर्फ उन्ह ही मालूम था। मीर के आदमी अपने भाग्य को कोसते निराश हो कर लौट आये। फिर तो डाको की धूम मच गयी। प्रात-भर मे आतक छा गया। सारे अखबार डाकुओ के कारनामो से रगे रहते। रक्तपात भी उन्होने खूब किया। पुलिस के निचले अफसर उनसे मिले हुए थे, इसलिए व जो मन मे आता, बेखटके करते। कुछ बडे अफसरो के बारे मे भी सुना जाता कि उनका भी उनसे गठबधन है और उन्ह उनसे बडी रकमें मिल रही है। सुनने मे आता, कभी घी के डिब्बो मे रुपये भर कर भेजे जाते, कभी कुछ कभी कुछ।

उन्होने दूसरा बडा डाका डाला नौशहरे फेरोज के एक बनिये के यहा, जहा से एक लाख रुपये तक की सपत्ति उनके हाथ लगी। वहा से भी पुलिस पैरो के निशान के आधार पर साघड तक गयी, वहा का इस्पेक्टर ज्वालासिंह भी तलाश

मे शामिल हुआ, लेकिन हुआ कुछ भी नही। वहा की तो पुलिस चली गयी, लेकिन ज्वालासिंह डाकुओ की खोज मे लगा रहा। वह कौए की तरह चालाक था। जल्दी ही उसे मालूम हो गया कि कौन-कौन इज्जतदार लोग डाकुओ के साथ है सो उसने पहले उन पर ही दबाव डाला—बोलो, सच उगलते हो या नही ?

लेकिन सबने एक ही स्वर मे कहा—हमे क्या मालूम !

ज्वालासिंह सब्र कर गया—कोई बात नही, देख लूगा ! उन बदमाशो का पता चल जाये, तो तुम्हे भी उनके साथ उलटा टाग दूगा !

लेकिन इसान सोचता कुछ है और होता कुछ और है। हर साल माघ मास की चतुदशी को साघड के क्षेत्र मे बहरम शेरवरी का बडा मेला लगता है, जहा लोगो की भारी भीड होती है। इस बार मेला पिछले साल से भी बाजी मार ले गया है। ज्वालासिंह पाच सात सिपाहियो को साथ लेकर डाकुओ की तलाश मे यहा आया है। सारा दिन बिलानागा टागें ठोक-ठोक कर वे खाली हाथ वापस लौट आये है। भरी हुई बदूक एक चारपाई पर रख कर दूसरी चारपाई पर ज्वालासिंह अभी पूरी तरह बैठ भी नही पाया है कि गोलियो की बौछार शुरू हो जाती है। उसने बहुत कोशिश की कि किसी तरह बदूक हाथ मे आ जाये और दुश्मन का मुकाबला करे, लेकिन इसी बीच एक गोली उसकी कनपटी पर ऐसी लगी कि शेर मद ढेर हो गया।

डाकुओ को मालूम था कि ज्वालासिंह उनके पीछे लगा है। इसके पहले कि ज्वालासिंह उन्हें पकडवाये, वे शेर को उसकी माद मे ही खत्म कर देने को पहले से ही उसके मुकाम मे छिपकर बैठ गये थे।

इसके बाद तो डाकुओ से पुलिस की ठन गयी। पुलिस कमर कसकर उनके पीछे पड गयी। लेकिन इस समय तक डाकुओ का दल भी काफी शक्तिशाली बन गया था। नौ स्थानो पर उनके अड्डे जम गय थे। उनकी शहशाही मे लोग काफी सख्या मे एकत्र हो गये थे। सिफ साघड मे ही यह सख्या डेढ हजार तक पहुच गयी थी। उन्होने खूब डाके डाले और पुलिस पर भी हमले किये। राइतियारी से नायक महरी खान रिंद उनकी तलाश मे आया। डाकुओ को इसकी भनक पड गयी। नायक महरी खान अभी घोडे की लगाम भी नही सभाल पाया था कि आसपास की झाडियो म से निकल कर डाकुओ ने गोलियो की बौछार शुरू कर दी। एक गोली घोडे की टाग मे लगी, तो वह भडक कर उछला, सवार पीठ पर से आ गिरा और डाकुओ ने उसे फिर उठने ही न दिया। वे उस पर टूट पडे। उन्होने तलवारो से उसके हाथो की अगुलिया और कान काट डाले और उसे वही फेंक दिया। गोलियो की आवाज सुन कर बारो मीर बहर जिसकी पहले छुटल मीर ने खूब पिटाई की थी, कुछ अरब और जमान शाह पजाबी बाहर निकल आये।

उन्होंने दुश्मन पर गोलिया चलायी लेकिन तब तक वे रफूचक्कर हो गये। वे कारतूस बनाने की मशीन और ढेर सारे कारतूस वहीं छोड गये। बुरी तरह घायल महरी खान का और उस सामान को उठा कर वे लोग साघड पुलिस थाने ले गये।

दूसरी बार फिर एक वरियाम सिपाही उनके हाथ आ गया। वह उमरकोट से बहुत सारी बारूद और बदूके लिये साघड जा रहा था। डाकुओ के लिए यह ईश्वरीय उपहार सा था। उनके पास बारूद और हथियारो की कमी पड गयी थी। उन्होंने उसे पकड लिया। अगूठे से गला दबा कर उसे मार डाला और लाश गायब कर दी।

इस बीच दो-तीन बडे डाके उन्होंने और डाले—तीरथ बनिये को दोदन के माग पर लूटा, वाखरे मे जबरदस्त लूटमार की और चाटियारन के मालदारा को लूटा। इस बीच हिंदू बनियो ने पुलिस का पहरा बैठा लिया था। लेकिन डाकू पुलिस से घबराने वाले नही थे। पुलिस से उनका तगडा मुकाबला हुआ। उन्होंने बहुतो के कान और होठ काट कर फेंक दिये, बनियो पर हर तरह के जुल्म किये, उनकी औरतो के साथ अत्याचार किये और उनके घर साफ करके चपत हो गये।

यहा एक बात याद रखने लायक है कि डाकू सिर्फ उन्ही को लूटते थे, जिन्होंने उन्हे सताया था, या जो गरीबो के साथ अन्याय करके, मुफ्त धन बटोर कर धनवान बन बैठे थे। गरीबो का वे कभी हाथ तक न लगाते। उलटे निधनो, अपाहिजो की अपनी गाठ से मदद करते थे।

और फिर शान भी कैसी रखते थे? एक बार किसी जगल मे अड्डा जमाये जश्न मना रहे थे। कुछ दूर एक राजमार्ग था। एक जुलाहा वहा से कपडे के थान लिये जा रहा था। आवाज दे कर उसे अपने पास बुलाया। बेचारा जुलाहा थान सहित हाथ जोड कर हाजिर हुआ। डाकुओ ने पूछा—कहा जा रहे हो?

जुलाहा बोला—मालिक, सेठ सलामत ने रकम पेशगी दी थी, तो उसका कपडे का थान पहुचाने जा रहा हू।

डाकू—तो?

जुलाहा—फिर भी चीज आपकी है। अगर आप ले लेंगे, तो सेठ का मैं दूसरा बना कर दे दूगा।

डाकू—नहीं, नहीं, हमे तुम्हारी दुआ चाहिए। फिर भी तुम थान जरा खोल के दिखाओ तो। तुरत जुलाहे ने थान खोल कर फैलाया।

डाकू—अब यह पूरा थान तुम अपने सिर पर बाधो!

जुलाहे ने इस बार भी बिना देरी के आज्ञा का पालन किया।

मर्दों की तरह लड कर जान दे दो, तो जवाब मिला—हुक्म सिर आखो पर। लड कर जान देंगे।

फिर पीरू वजीर, तगियो चाग और गुलू मोची तैयार होकर बाहर निकले और जगल के किनारे तैयार होकर खडे रह। ल्यूक्स को पगाम भिजवाया—आ जाओ, हम तयार है। इस पर ल्यूक्स साहब पलटनें लेकर आ पहुचे। डाकुओ न तगडा मुकाबला किया। लेकिन इस तरफ बेशुमार सिपाही और वहा कुल मिला कर तीन सरदार। बेचारे मारे गये। लोग कहते ह कि पीरू को पेट मे गालिया लगी थी, फिर भी वह लेटे लेटे अत तक लडता रहा। एक गोली जब मस्तिष्क के आर-पार हो गयी, तब जाकर वह जवामर्द ठडा पडा। इसके बाद फिर तीन डाकू और सामने आये—बलू गाहो, मिसरी गाहो और उस्मान हिंगारजो। मखी मे गुलाम मुहम्मद के घाट से कुछ हटकर इन्होंने कुमक सभाली। ल्यूक्स को फिर सदेशा भिजवाया—अब आ जाओ, अगर हिम्मत है। साहब बहादुर आये फिर तगडा मुकाबला हुआ और तीनो मारे गये। इस मुठभेड मे डाकुओ न ज्वालासिंह के बेटे को मार डाला।

शेप रह गये इस दल के छह सरदार—बचू बादशाह, ईसो, फतलू सूमार, खमीसो और राणो। फतलू और सूमार तो उसी समय, जब पीर साहब न डाकुओ को पुलिस के हवाले करने का वचन दिया था, यह ठान कर निकले थे कि जाकर पार के नौकरो का काम तमाम करेंगे, क्योकि उन्हें यह भरोसा हो गया था कि पार न नौकरो के भडकाने पर ही वचन दिया है, लेकिन नौकरो का काम तमाम करने की बजाय वे खुद ही मर मिटे और राणो न तो उसी समय जाकर ल्यूकस के सामने घुटने टेक दिये और उसे सात साल काले पानी की सजा हो गयी।

बाकी रहे तीन—बचू, ईसा और खमीसो। इनमे से खमीसो लापता हो गया। ईसा की हिम्मत भी टूट गयी और उसने सरकार बहादुर के सामने हाजिरी देने म गनीमत समझी। जहा स उसे ल्यूक्स साहब के पास भिजवाया गया। मगर बचू बादशाह फिर भी बेपरवाह बालम बनकर टक्कर लेता रहा। बस किसी भी तरह पुलिस उसे पा नही सकी।

आखिरकार उन्होंने अतिम हथियार चला दिया। हुआ या कि उन्होंने बचू की माशूका को ही कब्जे कर लिया और अखबारो मे झूठमूठ खबर छपवा दी कि फला जगह फला औरत का खुले आम नीलाम होगा।

बचू न या तो कभी दिल नही हारा था, लेकिन इस समाचार न उसे बुरी तरह विचलित कर दिया। वह साहस खो बैठा। वह भी बचू पर जान देती थी। और एक वफादार औरत थी।

बस, बचू बादशाह न अनुभव किया कि दिन फिर गया है, भाग्य भी उलट गया है सो दौडता हुआ सरकार मुहम्मद याकूब के सामने हाजिर हुआ। नीलाम

डाकू—अब जाओ अपने सेठ सलामत के पास और जाकर कहो कि हमने तुम्हें यह पगड़ी बांधी है, हिम्मत हो तो उतार लो! जो जवाब मिले, वह फिर हमें आकर बताना।

जुलाहा जी हुजूर' कह कर उड़ता हुआ सेठ के पास पहुंचा। सेठ संदेश सुन कर बोला—मियां, तुम्हारा बड़ा अहसान! यह थान भी तुम्हारा और पैसे भी तुम्हारे! जल्दी जाकर यह खबर उन्हें दो, देर मत करो, कहीं वे गुस्सा न हो जायें।

जुलाहा लौट कर डाकुओं के पास पहुंचा और सारा किस्सा उसने कह सुनाया। डाकुओं ने तब उसे दूसरी लुंगी भी पहनायी और कहा—अब जाकर सुख से रहो, लेकिन हमारा अहसान कभी मत भूलना।

यह जुलाहा फिर तो उनका पक्का दोस्त बन गया। वह बहुत सारे समाचार उन्हें पहुंचाता था। सेठ सलामत के साथ भी उनका परिचय हो गया था। समय पर उनकी सहायता करता और वे भी इसका अहसान न रखते।

आखिर लिखा पढ़ी शुरू हुई। सरकार ने देखा कि देशी सिपाहियों ने कोई खास जौहर नहीं दिखाया, सो गोरी पलटनें ला कर सांघड़ में जमा कीं। इन्होंने आते ही मखी के जंगल को आग लगायी। उस वक्त तो साफ-सफाई हो गयी, लेकिन फिर जो जली हुई जड़ों पर पानी बरसा, तो जंगल और भी घना उठ गया।

उसी समय मि० ल्यूक्स जिले के डिप्टी कमिश्नर नियुक्त हो कर आये और सरदार मुहम्मद याकूब नारे के डिप्टी कलेक्टर थे। फिर तो ये दोनों जवांमर्द दिन रात एक करके, सर्दी गर्मी सहन करके डाकुओं के पीछे पड़ गये। आखिर बेहद तलाश के बाद, अनेक कठिनाइयों का सामना करके मखी के बखोरे के समीप डाकुओं के आमने सामने हो गये। डाकुओं ने भी पहले तो हिम्मत नहीं छोड़ी गोलियों की बरसात बरसा दी, लेकिन फिर भाग खड़े हुए।

लेकिन ल्यूक्स साहब ने उनका पीछा न छोड़ा। दुबारा उन्हें नजदीक शाह वाले दर्रे पर आ दबोचा। बंदूकें चलनी शुरू हो गयीं। जब डाकुओं ने देखा कि अब पकड़े जायेंगे, तो फिर भाग गये।

इसी समय राहिड़ी वाला पीर बाबा हैदराबाद में था। ल्यूक्स साहब ने पत्र व्यवहार करके पीर को वहां नजरबंद रखा। उनका विश्वास था कि पीर का डाकुओं पर काफी असर था और अगर वह उन्हें मजबूर करेगा, तो वे अवश्य घुटने टेक देंगे।

पीर पर जो यह मुसीबत आ पड़ी, तो उसने वचन दिया कि वह डाकुओं को सरकार के हवाले करेगा।

पीर का हुक्म हुआ कि या तो अपने आपको सरकार के हवाले कर दो, या

एक विवेचन

लाल पुष्प

अधिकतर हर भाषा के साहित्य मे पद्य और गद्य के बीच इतना अंतर रहा है जितना मरे हुए परदादा और ताजा जवान हुए बालक मे। गद्य का इतिहास, हर साहित्य मे, और विशेषकर सिंधी मे किन्ही विशेष परिस्थितियो के कारण बेहद सक्षिप्त है और पद्य के नशे से सपूर्ण रीति-मुक्त तो और भी सक्षिप्त। यहा एक मानी हुई हकीकत का दुहराव ज्यो-ज्यो जीवन के जुदा जुदा क्षेत्र मे विकास होता रहता है और राष्ट्रीय विचार विशाल और जटिल होते जाते है, त्यो-त्यो उनका पूर्ण रूप मे व्यक्त करने के लिए गद्य की आवश्यकता पडती है।

तो क्या सिंध जसे सपन्न हिस्से मे विकास ही नही हुआ कि वहा गद्य की आवश्यकता पडे ? कारण और कही है।

सिंधी पद्य का आरभ चौदहवी सदी मे हुआ और गद्य का उन्नीसवी सदी मे। दोनो के बीच इतनी बडी खाई का कारण सिंधी भाषा को प्रचलित मुकर्रर वर्णमाला एव लिपि मिले सिर्फ एक सदी हुई है। सन 1853 के पूर्व सिंधी भाषा की कोई एक मुकर्रर वर्णमाला थी ही नही, 1853 मे वर्णमाला मिलने से गद्य का भी आरभ हुआ।

'सिंधी भाषा का इतिहास' (सन 1942) मे स्वर्गीय भेरुमल मेहरचद के मतानुसार, ग्यारहवी-बारहवी सदी मे प्रचलित सिंधी भाषा अपनी अन्य भारतीय बहनो—हिन्दी, पजाबी, बगला, मराठी, गुजराती आदि के साथ-साथ, अपभ्रंश और प्राकृत म से निकली और धीरे धीरे रूप बदल कर उसने अपना निजी और स्वधारित अस्तित्व कायम कर लिया।

सन 1853 के पूर्व सरकारी कारोबार फारसी म चलता था। मुसलमान अरबी अक्षरो म लिखते थे और हिन्दू देवनागरी, गुरुमुखी या हिन्दू सिंधी (बिना मात्राओ के 'वाणिका) अक्षरो मे। आखिर सन 1843 म अग्रेजो न सिंध

दूसरे दिन हाना था। सरदार बचू को देखते ही पहचान गया। उसे लगा, बचू यहा किसी खतरनाक इरादे से आया है, सो एकदम दूसरी कोठरी में हो लिया और उसने दूर से ही चिल्ला कर पूछा—कौन हो ? क्या चाहते हो ?

उसने जवाब दिया—मैं बचू हू, मैं अपने को पेश करता हू। मेरी माशूका को रिहा कर दीजिए।

फिर तो सारे बदन की तलाशी लेकर उसे गिरफ्तार कर लिया गया। ईसा के साथ उसे मीरपुरखास भिजवा दिया गया। वहा स्पशल जज हाटडेवीज की अदालत म मुकदमा चला और उसे फासी की सजा सुनायी गयी। लेकिन फासी देने के पहले उसे अपनी महबूबा स एक बार मिलने की इजाजत दे दी गयी।

दो अनन्य प्रेमी आपस मे प्रगाढ स्नेह से आलिगनबद्ध हो गये। कुछ घडिया तो परस्पर जुडे रहे नि शब्द, मूक, आखिर बचू बोला—दिलरुबा, बस, अब आखिरी विदा दो !

महबूबा ने भी लिबास के अदर म छिपी हुई कटार निकाल ली—ए जानेमन, तुम्हारे बिना जग मे जीना हराम ! लो यह कटार !

पहले तो यह शेर दिल काप उठा हाथ जवाब दे बठे, लेकिन फिर यह सोच कर कि मेरे मरने के बाद न जाने किसी और से घर बसा बैठे, कटार निकाल उसका सिर काट दिया।

फिर तो सरकार से स्वीकृति मिलने पर बचू और ईसा रोसाघड म ही फासी दे दी गयी और दोनो की लाशें सर बाजार चौक म दफ्तर के सामने दफना दी गयी और ऊपर सडक पर सडक बनवा दी गयी कि हर कोई गुजरने वाला उनको लताडता रहे।

लोग कहते हैं —अग्रेज यदि बचू को माफी देकर किसी नौकरी म लगाता, तो वह बहुत उपयोगी सिद्ध होता। सिंध ही नही, पूरे हिन्दुस्तान से चोरी और डाको का नामोनिशान मिट जाता। अब तो हर पेड की डाली बचू बन गयी है !

कितनी हद तक यह बात सच है और अगर सच है तो कितनी हद तक लोगो के कथनानुसार हर पेड की डाली बचू बन गयी है इसके लिए समाचारपत्रो की *कतरनें ही साक्षी देंगी मैं क्या व्यर्थ कागज काले करता फिरू !*

बस मशहूर डाकू यो इस जहान से उठ गये। उनकी सतानो पर अब सख्त निगरानी तनात है। सुबह को आठ बजे और रात को आठ बजे हर रोज उन्हे हाजिरी देनी होती है। उन्हें अपने निवास स्थानो स सिर्फ ढाई कोस की सीमा म आने-जाने की छूट है, अन्यथा खास परवानगी लेनी पडती है। उनके बच्चो के लिए सरकार ने वहा मदरसे खोले है और उनको औरतो को कसीदाकारी सिखाने की व्यवस्था की गयी है। अधिकाश लोगो पर से अब यह पाबदी उठा ली गयी है और वे किसी काम धंधे म भी जा लगे हैं। शेष लोग भी धीरे धीरे मुक्त हो रहे हैं।

एक विवेचन

लाल पुष्प

अधिकतर हर भाषा के साहित्य मे पद्य और गद्य के बीच इतना अतर रहा है जितना मरे हुए परदादा और ताजा जवान हुए बालक म। गद्य का इतिहास, हर साहित्य मे, और विशेषकर सिंधी मे किन्ही विशेष परिस्थितियो के कारण बेहद सक्षिप्त है और पद्य के नशे से सपूर्ण रीति मुक्त तो और भी सक्षिप्त। यहा एक मानी हुई हकीकत का दुहराव ज्यो-ज्यो जीवन के जुदा-जुदा क्षेत्र मे विकास होता रहता है और राष्ट्रीय विचार विशाल और जटिल होते जाते है त्यो-त्यो उनको पूण रूप म व्यक्त करने के लिए गद्य की आवश्यकता पडती है।

तो क्या सिंध जसे सपन्न हिस्से मे विकास ही नही हुआ कि वहा गद्य की आवश्यकता पडे ? कारण और कही है।

सिंधी पद्य का आरभ चौदहवी सदी मे हुआ और गद्य का उन्नीसवी सदी मे। दोनो के बीच इतनी बडी खाई का कारण सिंधी भाषा को प्रचलित मुकरर वणमाला एव लिपि मिले सिफ एक सदी हुई है। सन 1853 के पूव सिंधी भाषा की कोई एक मुकरर वणमाला थी ही नही, 1853 मे वणमाला मिलने से गद्य का भी आरभ हुआ।

'सिंधी भाषा का इतिहास' (सन 1942) मे स्वर्गीय भेरमल महरचद के मतानुसार, ग्यारहवी-बारहवी सदी मे प्रचलित सिंधी भाषा अपनी अ य भारतीय बहनो—हिन्दी, पजाबी, बगला, मराठी, गुजराती आदि के साथ मागध, अपभ्र श और प्राकृत म से निकली और धीरे धीरे रूप बदल कर उसने अपना निजी और स्वधारित अस्तित्व कायम कर लिया।

सन 1853 के पूव सरकारी कारोबार फारसी म चलता था। मुसलमान अरबी अक्षरो म लिखते थे और हिन्दू देवनागरी, गुरुमुखी या हिन्दू सिंधी (बिना मात्राओ के 'वाणिका') अक्षरो मे। आखिर सन 1843 म अग्रेजो ने सिंध

को फतह किया, तो दस साल के भीतर सिंध के प्रथम प्रधान कमिश्नर सर बॉरटल फ्रेअर की जफाकशी से अरबी और फारसी के विद्वान सर रिचड बटन की सिफारिश से और कुछ अन्य सिंधी विद्वानों की सहायता से वर्तमान 52 हरफों वाली अरबी सिंधी वर्णमाला बनी (सिंधी नसर जी तारीख मधाराम मलकाणी)।

एच० ई० बटस ने अपनी विश्व प्रसिद्ध पुस्तक 'दि मॉडन आर्ट-स्टोरी' के आरंभ में लिखा है आधुनिक कहानी का इतिहास एक सदी से बाहर नहीं जाता। नहीं, शायद एक सदी भी अधिक है, वह पचास साल के भीतर है।

ऐसी स्थिति में मैं सिंधी की पहली आधुनिक कहानी किस कहूं और किन आधारों पर जब कि इस भाषा के गद्य का आरंभ ही सन 1853 में हुआ।

सन 1849 में एक अंग्रेज विद्वान कैप्टन स्टैक ने बंबई से 'ए ग्रामर इन सिंधी लंगुवेज' निकाला। उस पुस्तक के पीछे मुंशी उधाराम थावरदास की लिखी हुई 'कहानी राय दियाज और सोरठ की' देवनागरी में प्रकाशित की। इसे सिंधी की पहली कहानी कहा गया है। परन्तु इसमें आधुनिक कहानी के तत्व नाम मात्र को है और कहानी सिंध की एक प्रसिद्ध लोककथा पर आधारित है।

उसके बाद सन 1854 में गुलाम हुसन महमद कासिम कुरेशी की 'मसे जमादार की कहानी' है, गुलाम हुसेन में कई तथाकथित आधुनिक कहानीकारों से अधिक साहस है जो उसने स्वयं ही स्वीकारा था "यह कहानी मैंने हिन्दी से पंडित बसीधर के किस्से से ली है।"

उसके बाद सन् 1855 में सद मीरा महमद शाह ने सुधातुरे ऐं कुधातर जी गाल्ह उसी हिंदी लेखक के दूसरे किस्से से ली। इन दोनों कहानियों को सिंधी ग्रामीण जीवन में ढाला गया।

इन प्रयत्नों के उपरांत सन 1905 तक एक आध मौलिक गद्य को छोड़ कर देशी और विदेशी भाषाओं की कहानियों के अनुवाद किये गये। लेकिन इस बीच एक गद्यकार हैं जिनके बारे में सोचते हुए मुझे हमेशा ऐसा लगा है कि कहीं सिंधी गद्य के साथ बुनियादी तरह की कोई पीड़ा तो नहीं है, अथवा कोई अदृश्य शक्ति शुरू से सिंधी गद्य के विरुद्ध तो नहीं रही है ? नहीं तो क्या दीवान कैवलराम व सलामतराय आडिवाणी की तीन पुस्तकें (सन 1864 70 के बीच लिखी हुई) 'सूखरी', 'गुलकंद और गुलशकर' ततीस साल तक शिक्षा विभाग के अधिकारियों की अलमारियों में लावारिस पड़ी रहती और सन 1905 में सूर्य का प्रकाश देखतीं ! क्या यह संभव नहीं हो सकता कि यदि ये पुस्तकें लिख जाने पर ही छप जातीं तो क्योंकि ये मौलिक हैं, या कम से कम किसी हद तक मौलिक हैं। तो क्या ये सन 1864 और 1905 के बीच लिखे हुए गद्य को अपनी मौलिकता से प्रोत्साहित और प्रभावित नहीं करती ? उस हालत में मौलिक सिंधी गद्य का आरंभ सन 1906 से शुरू होने की बजाय सन 1864 से शुरू नहीं हो सकता था ?

हो साथ जहन म कितनी कितनी हकीकतें, जो मेरे देखते देखते कहानी विधा के विकास से जुडती गयी ह, आ जाती है।

शुरु म ही 'हकीकता' पर लेखक की ओर से जोर देने से लगता है, यह फिर भी 1914 की आवाज है विश्वस्तर की आवाज है, जॉयस की, आयरिश कहानी के जीनियस की। नि सन्देह य शब्द, पहली बार, एक कलात्मक स्तर की, साहित्य की दूसरी तरह की आवाज की इज्जत हासिल कर रहे थे। कहानी 'हवा' से उतर कर 'जमीन' पर आयी थी।

यह कहानी केवल 'जॉयस-ढग' के नजदीक नही जाती, बल्कि आयरिश के एक दूसरे मास्टर—श्या ओ फिना के भी निकट और जायस और फिना के, अथवा दुनिया की किसी भी भाषा के 'बेहतरीन प्राज' की नाइ—जा प्राज एक पूर्ण सतह पर, अपने ही इद गिद का इस हद तक पहचाने कि खून म समाकर एक हो गये वातावरण से पैदा होता है और कविता की लय बनकर इजहार पाता है। अनुवाद होने की प्रक्रिया म, कविता की तरह ही, अपना सौंदय, अपनी कोई मख्सूस गध, गवा बैठता है, कुछ न कुछ लेकिन जा मुख्य होता है, रचना का प्राण होता है अनुवाद प्रक्रिया म मर जाता है। खास जमीन के खास अन्न की खास खुशबू, जल का मख्सूम जायका, हवाए जो एक अलहदा सगीत सिफ उन्ही वृक्षो से गुजरते हुए रचने के लिए राजी रहती है, जा वृक्ष सिफ उसी जमीन की मिटटी म ही बाय जा सकते है।

'हुर' नाम से प्रसिद्ध डाकुआ के आतक से आज भी सिंधी भयभीत हा उठते है। हुरो की हलचल सिंधी इतिहास का एक अनिवाय अग है। फिर भी इस कहानी का ऐतिहासिक कहानी कहना भ्रांति होगी। प्रो० मघाराम मलकाणी ने इसे ऐतिहासिक खाजवाली कहानी कहा है। लालचद ने यह कहानी सन् 1914 मे लिखी (सन 1895 म पूरे सिंध मे हुरो का आतक छाया हुआ था।) इससे साफ जाहिर है कि लेखक ने विषय अपने इद गिद के वातावरण से लिया है। अगर उस समय उसकी उम्र केवल दस साल थी और उस उम्र मे उसने यह कहानी नही लिखी थी, पर सन 1914 मे, यानी हुरो का आतक छा जाने के करीब नौ साल बाद लिखी थी और इसलिए यह कहानी ऐतिहासिक खोज वाली बन गयी, तो मेरे विचार मे इन दाना शब्दो इतिहास और 'खोज' के अथ की नयी खाज करनी पडेगी। इसके सिवा हुरा को खत्म करने और उनका नामोनिशान मिटा देने के बाद भी लोगो के दिला मे उनका आतक काफी वर्षों तक छाया रहा होगा।

इसलिए—कहा यह कहानी ऐतिहासिक नही है। अलबत्ता कलात्मक इतिहास और कलात्मक जीवन कथा लिखने के लिए एक उम्दा मिसाल अवश्य है। सिंधी इतिहासकारा और जीवन कथाकारो को सीखने के लिए इस कहानी मे से बहुत कुछ मिल सकता था। रिपोताज जैसे ढग मे लिखी हुई और सहसा ही,

एक जगह, अतीत से टूटकर वर्तमान से जुडी हुई और इस प्रकार अतीत और वर्तमान के बीच की कडी ताडकर अपनी शैली म एक अनाखी लय उत्पन्न करती हुई 'इस बार मेला पिछले उप से भी बाजी मार गया है और ज्वालासिह पाच मात सिपाही साथ लेकर डकैतो की तलाश म यहा आया है ।' सारा दिन बिला नागा टागें ठोक-ठोक कर खाली हाथ वापस लौट आया है।

इस कहानी का विषय, मही है, नि सदेह उपन्यास का है। एक ही साथ कहानी के सीमित दायरे के अदर इतने ढेर सारे पात्र आवश्यक विकास नही पा सके ह।

यहा भी मुझे ता कहानी के अदर ही लगा है कि लेखक इतना बाशऊर है कि इस बात मे स्वय ही सचेत है काई चतुर कथाकार या उपन्यासकार होता तो सारे तथ्य इकट्ठे करके काई बहुत ही सुदर उपन्यास लिखता शायद लेखक खद भी फसाने आर नावल के बीच लटकता रहा है, यह बात भी नामुमकिन नहीं लगती, हालांकि मैंने यह पाया है, पर हम लेखक की इस कलात्मक मजबूरी को कभी न जान सकेंगे।

'चानाव उपन्यासकार' का इशारा शायद स्वय से लगाकर, 45 साल आगे चलकर, गोविंद माली इसी विषय को लेकर यहा भारत मे उपन्याम लिखने वाले थे। मानी ता यह उपन्याम सिद्ध करता है कि एक आर्टिस्ट और प्रापगडिस्ट म क्या फक हाता है। जहा कलाकार लालचद एक स्पश म ढेर सारी किताबें कह जाते हैं, वहा एक आइडियालॉजी के आगे अपन कलाकार का महज एक कठपुतली बनाने वाले गोविंद माली उपन्यास के दा भागा मे हम कुछ भी न दे सके है।

"हर पड की डाली वधू बन गयी है। उसके लिए समाचारपत्रा की [illegible] साक्षी देंगी, मैं क्यो व्यथ कागज काले करता फिरू।"

अधिक पात्रो को घसीट लाने की अनिवाय मजबूरी चरित्र-चित्रण के लिए पर्याप्त स्थान मयस्सर नही कर सकी है। लकिन चित्रण की, [illegible] की मुराद भी न थी। पात्रा के द्वारा उपरोक्त पक्तिया म [illegible] लेखक का मकसद था। यहा भी लेखक आइडिया दता है। '[illegible]' तीसरी श्रेणी के लेखको के लिए छोड देना है।

पर एक स्पश मे लेखक का आइडिया महज [illegible] की आत्मा बन जाता है। सच तो यह है कि आत्मा एक [illegible], [illegible] जमीन की, खास हालाता मे रहे-जन्मे विद्रोहिया का [illegible], पर साथ ही यह अकम एक जमीन और एक जाति का न रहकर, [illegible] दुनिया का और मानव का बन जाता है।

□ तेलुगू

आद्य कथाकार गुरजाडा अप्पाराव

तेलुगू साहित्य में गुरजाडा अप्पाराव (1862-1915) का वही स्थान है जो बगला में रवीन्द्रनाथ टैगोर और हिंदी मे भारतेन्दु हरिश्चद्र या प्रेमचद का है। अप्पाराव का जन्म 21 नवम्बर, 1862 को यलमचिलि तालुके मे, विशाल जिले के रायवरम नामक स्थान पर हुआ। 30 नवबर, 1915 को इनका देहावसान हुआ, लेकिन इस बीच वह तेलुगू कहानी, कविता और नाटक को अद्वितीय योगदान देकर अत्यत समृद्ध बना चुके थे।

गुरजाडा अप्पाराव ने अपनी कहानी 'सवक' द्वारा तेलुगू म मौलिक कथा लेखन की नीव डाली। इसके पूर्व तेलुगू मे कहानी साहित्य का सजन नही हुआ था, ऐसी बात नही है। किंतु मौलिक कथा लेखन उस समय नही के बराबर था।

अप्पाराव के आविर्भाव के साथ तेलुगू कहानी मे चेतना और अनुभव के ऐसे स्तर दिखायी दिये, जो पहले अनुपस्थित थे। अप्पाराव ने कथा विधा म ऐसी प्राणशक्ति फूकी कि आगे चल कर वह अभिव्यक्ति के समर्थतम माध्यम के रूप मे पनप सकी।

गुरजाडा अप्पाराव ने तेलुगू कविता एव नाटक के क्षेत्र म भी अद्वितीय प्रतिभा का परिचय दिया। तेलुगू मे नयी कविता का सूत्रपात उन्होंने ही किया—अपनी कृति 'मत्यालुसरालु' के माध्यम से उनका 'कन्याशुल्कम', नाटक आज भी आध्र मच पर उतने ही चाव से खेला जाता है, जितना पचास वष पूव खेला जाता था। 'आणि मत्यालु' मे उनकी कहानिया सकलित हैं। उनके अन्य महत्वपूर्ण नाटक हैं—'कोडमट्टीयम', 'बिल्हणीयम', 'सुभद्रा' आदि।

सन् 62 मे आध्र प्रदेश म उनकी जन्मशती मनायी गयी थी। उनके नाटक 'कन्याशुल्कम' को यूनेस्को ने अग्रेजी तथा फ्रेंच भाषाओं म अनुवाद के लिए स्वीकृत किया है।

प्रथम मौलिक कहानी सन् 1911 मे प्रकाशित

□ सबक

दरवाजा खोलो ! दरवाजा खोलो !

मगर दरवाजा नही खोला गया। एक मिनट के लिए वह मौन खडा रहा। इतने मे कमरे की दीवार की घडी ने एक बजाया।

— आज मुझसे बडी देर हो गयी है। मेरी अक्ल घास चरने चली गयी। कल से मैं ठीक वक्त पर घर लौटूगा। नाच विरोधी आदोलन का हिमायती हो कर भी क्या मुझे नाचने वाली के पास जाना चाहिए था ? उसका गाना सुनते-सुनते न जाने मेरा मन कहा खो गया था ! गाना सुनने के बाद मेरा मन लौटने का नाम नही ले रहा था। उसकी सुदरता पर वह रीझ गया। कितना अनर्थ हो गया ! मुझे एक क्षुद्र व्यक्ति की तरह गाना खत्म होने तक वही क्यो बैठना था ? फिर किसी बहाने उससे बात करने की आसक्ति मेरे मन मे क्या उठनी चाहिए थी ? देखो जी ! अब कान पकडता हू। उसका गाना सुनने के लिए फिर मैं कभी उसके पास नही जाऊगा। यह मेरा अतिम निर्णय है। जोर से पुकारू तो शायद कमलिनी जाग पडे। धीरे से दरवाजा खटखटा कर रामुडू को जगा दू तो चुपचाप जाकर एक भद्र व्यक्ति का ढोग रचाऊगा और उसकी बगल मे सो जाऊगा

गोपालराव ने जैसे ही दरवाजे पर हाथ रखा कि दरवाजा खुल गया। यह क्या ? उसने सोचा और दरवाजा खोल लिया। हॉल मे गया। फिर वहा से सोने के कमरे मे गया। वहा रोशनी नही थी। उसने सोचा, पहले यह जानना जरूरी है कि कमलिनी सो रही है अथवा जाग रही है। जेब मे दियासलाई निकाल कर जलायी। खाट पर कमलिनी दिखायी नही दी। वह अवाक् हो गया। सीक नीचे गिरा दी। कमरा अधकार से भर गया। उसके मन मे भी अधकार छा गया।

उसके मन म कई तरह की शकाए और समाधान उत्पन्न होने लगे। फिर अन्यथ मन व्याकुलता से भर गया। उसे बडी खीज हुई अपनी नासमझी पर या कमलिनी की अनुपस्थिति पर! उसे बडा गुस्सा आ रहा था। वह बाहर आ गया। प्रवेश-द्वार के पास आकर आवाज दी। न नौकरानी ने जवाब दिया, और न ही रामुडू ने—इनको फासी की सजा मिलनी चाहिए! गोपालराव चिल्ला उठा।

फिर मान क कमर म गया। लालटेन जलायी। कमरे मे देखा। कमलिनी दिखायी नही दी। आगन मे जाकर बाहर का दरवाजा खोल कर देखा तो रामुडू सडक के बीच खडा होकर आसमान की तरफ मुह किये चुरुट पी रहा था, जैसे साथ ही आसमान के तारे भी गिन रहा हो। गोपालराव गुस्से मे आग-बबूला हो उठा।

—रामुडू! इधर आ! गोपालराव न उसे बुलाया।

रामुडू न भौचक्का होकर चुरुट फेंक दिया और डरते डरते कहा—आया बाबूजी!

—कहा है रे तेरी मा?

—जी! वह तो मेरे घर पर है!

—अरे! गधा कही का! तेरी मा नही, मेरी पत्नी?

—मालकिन? वह तो अपने कमर मे सो रही होगी, बाबूजी!

—वह घर म नही है।

यह सुनते ही रामुडू सन्न रह गया। जसे ही उसने अदर कदम रखा, गोपाल-राव ने कसकर दो घूसे दिये।—हाय! मैं मर गया बाबूजी! रामुडू जमीन पर लुढक गया।

गोपालराव दिल का बडा नरम था। फौरन अपने किये पर उसे बडा पश्चाताप हुआ। आवेश मे आकर उसन यह क्या किया? रामुडू को हाथ का सहारा देकर उठाया, पीठ सहलायी और उसे घर के अदर ले गया।

गोपालराव बहुत परेशान था। कुर्सी पर बैठते हुए उसने पूछा—क्यो रे रामुडू, आखिर वह गयी कहा?

—मुझे खुद बडा आश्चय हो रहा है, बाबूजी!

—कही वह अपने मायके तो नही चली गयी?

—हा बाबूजी! यह भी हो सकता है! औरत पढी लिखी होने से यही तो होता है, बाबूजी!

—अरे मूख! पढने लिखने का मूल्य तुझे क्या मालूम? गोपालराव ने कहा। फिर वह अपने दोनो हाथो से माथा थाम कर सोचने लगा कि कमलिनी कहा गयी होगी, कि अचानक उसकी नजर टेबल पर रखी कमलिनी की चिट्ठी पर पडी। उसे हाथ मे लेकर वह पढने लग गया।

'महाशय '

वाह री दुनिया! प्रियतम की जगह पर 'महाशय'!

—दुनिया को क्या हो गया, बाबूजी?

—तेरा सर! तू चुप रह!

'महाशय,' गोपालराव पढ़ने लगा! 'पिछले दस दिन से आप रात को कब घर लौटते हैं, मैं नहीं जानती! हां, आपने किसी सभा सोसाइटी में जाने की बात जरूर कही थी। आपने यह भी बताया था कि देश कल्याण के किसी आंदोलन में आप भाग ले रहे हैं। अपनी नींद हराम करके! किंतु सचाई क्या है, यह मैंने अपनी सहेलियों द्वारा जान लिया है। घर पर मेरे रहने के कारण ही आपको झूठ बोलना पड़ा। अगर मैं अपने मायके चली जाऊं तो आपकी आजादी में रुकावट नहीं पड़ेगी और न ही आपको झूठ बोलने का अवसर मिलेगा। मैंने सोचा—रोज, रोज आपसे झूठ बुलवाना और आपके रास्ते में रुकावट बन कर रहना ठीक नहीं है और क्या एक पत्नी के नाते यह मेरा कर्तव्य नहीं? आज रात को मैं अपने मायके जा रही हूं। आप प्रसन्न रहें। यदि आपके दिल में मेरे लिए कोई स्थान हो तो कृपा भाव बनाये रखें।

पत्र पढ़ना समाप्त कर गोपालराव ने एक लंबी सांस खींची। कहा—मैं कितना पशु ठहरा!

— बाबूजी! आप यह क्या फरमा रहे हैं?

—मैं निरा पशु हूं!

रामुडू बड़े प्रयत्न से अपनी हंसी को रोक पाया।

—बड़ी सुशील थी! अच्छी पढ़ी लिखी थी। बड़ी विनयसंपन्न थी। मेरे दुर्व्यवहार का मुझे अच्छा दंड मिला।

—मालकिन ने क्या किया है, बाबू जी?

—वह अपने मायके चली गयी। मुझे तो ताज्जुब हो रहा है, वह तुझसे कुछ कहे-सुने बगैर यहां से चली कैसे गयी!

रामुडू दो कदम पीछे हटा, बोला—मुझे जरा झपकी आ गयी थी, बाबूजी! शायद वह आपसे रूठ गयी होगी! बाबूजी! आप बुरा न मानें तो एक बात कहूं—औरत का इतना साहस? बगैर आपसे पूछे मायके चली जाती है? औरत की जात जो है न, उसे लातों से बढ़ाना पड़ता है, बातों से नहीं! मगर आपने तो बीबीजी को खूब पढ़ाया लिखाया और सिर चढ़ा लिया है। ऐसी हालत में वह आपकी बात क्या मानने लगी?

गोपालराव से रहा नहीं गया।

—अरे मूर्ख! भगवान की सृष्टि में अगर कोई श्रेष्ठ वस्तु है तो वह है पढ़ी लिखी स्त्री! शिवजी ने पार्वती को अपने शरीर का आधा हिस्सा बांट कर

दिया। अंग्रेज ने अपनी पत्नी को 'बैटर हाफ' की संज्ञा दी है। यानी पत्नी का स्थान पति से भी ऊंचा है, समझे ?

—मैं कुछ भी समझा नहीं, बाबूजी !

रामुड के लिए अपनी हंसी रोक पाना मुश्किल हो रहा था।

—क्यों रे ! तुम्हारी बच्ची स्कूल जा रही है न ? विद्या की क्या महत्ता है, तुझे आगे जाकर मालूम हो जायेगी। ठीक है। यह बात रहने दे। हम दोनों में से किसी को चंद्रवरम जाना होगा। हां, मुझे तो यहां काम है, चार दिन तक मैं बाहर नहीं जा सकता। तू तो हमारे घर का पुराना नौकर ठहरा। जाकर कमलिनी को ले आ। वहां जाकर तू कमलिनी से क्या कहेगा ?

—बाबूजी ! मुझे क्या मालूम बीबीजी से क्या कहना है। आपने तो मेरी देह के दो टुकड़े कर दिये !

—अरे ! तू उस झापड़ की बात भूल जा ! ले ! उसके एवज में ये दो रुपये ले-ले। फिर से यह बात जबान पर नहीं लाना। भूल से भी इसका जिक्र कमलिनी से नहीं करना ! समझे !

ठीक है, बाबूजी !

—जो बातें कमलिनी से तुझे कहनी हैं वह सुनाता हूं, सुन कान खोल कर—मालिक की बुद्धि ठिकाने पर आ गयी है ! अब आगे से कभी भी नाचने वाली का गाना सुनने नहीं जायेंगे। भूल में भी रात को बाहर कदम नहीं रखेंगे। यह सच मानिएगा। आपके पांव पर पड़कर आपसे बिनती करने के लिए मुझे भेजा है। उनके दोषों का जिक्र किसी के सामने न कीजिएगा। जल्दी से-जल्दी दो एक दिन के अंदर घर लौट आइएगा। आपके बगैर उनका जीवन दूभर हो गया है। एक एक पल एक युग के समान लग रहा है। एक एक दिन उन्हें पहाड़ समान लगने लगा है इस तरह से सारी बातें उसे समझा देना। समझे ?

—समझ गया बाबूजी !

—क्या समझा है जरा बोल तो !

रामुडू बगलें झांकने लगा।

—बाबूजी आपने जो कुछ कहा, ठीक ही कहा, मगर उसका एक शब्द भी फिर से बोलना मुझे नहीं आता ! मैं तो अपने सीधे सादे शब्दों में इतना ही कह पाऊंगा, मालकिन ! मेरी बात सुनिए। आपके यहां नौकरी करते करते मेरे बाल पक गये हैं। औरत को चाहिए कि मर्द की बात चुपचाप मान ले। मेरी सलाह आप नहीं मानेंगी तो बड़े मालिक की तरह ये छोटे मालिक भी नाचने वाली को अपने यहां रख लेंगे। एक बात और मैं आपके कान में डालूं। सोने जैसे दमकते शरीर वाली एक बहुत ही सुंदर नाचने वाली शहर में आयी हुई है। मालिक का बेलगाम मन जाने क्या कर बैठे। फिर आपकी जैसी मर्जी यह

ठीक है न बाबूजी ?

—अरे हरामजादे ! गोपालराव झल्ला उठा। कुर्सी पर से उठ गया। वह बड़े गुस्से में था।

रामुडू फौरन बाहर खिसक गया।

इतने में खाट के नीचे से मन को हरने वाली मधुर हँसी का फव्वारा फूटा और साथ ही चूड़ियों की खनखनाहट की मोहक ध्वनि सुनायी दी।

एक विवेचन

दडमूडि महीधर

गुरजाडा अप्पाराव की कहानी 'दिछु वाटु'—(मवक)—तेलुगू की प्रथम मौलिक कथा रचना है जो 1911 में लिखी गयी थी। इसके पूर्व तेलुगू में कहानी-साहित्य का सृजन नहीं हुआ था, ऐसी बात नहीं है। किंतु मौलिक कथा साहित्य नहीं के बराबर था। अप्पाराव के अविर्भाव से तेलुगू कहानी में चेतना के और अनुभव के ऐसे स्तर अभिव्यक्त हुए जो पहले नहीं हुए थे। आपने तेलुगू कहानी की ऐसी नींव डाली थी कि वह आगे जा कर एक समर्थ अभिव्यक्ति विधा के रूप में पनपी। कई दृष्टियों से 'दिछु वाटु' अप्पाराव के ही नहीं, अपितु आधुनिक तेलुगू कहानी के रचनात्मक स्तर को अभिव्यक्त करती है।

वैसे तेलगू में कहानी-साहित्य का प्रारंभिक रूप 1255 से ही उपलब्ध है—केतना कृत 'दशकुमार चरित्र', अनंतामात्य के भोजराजीयमु, कोरवि गोपराजु के 'द्वात्रिंशत्सालभंजिकल कथलु', कविरी पति के 'शुकसप्तति', दुरगा वेंकमराजु के मर्यादरामन्न कथलु' आदि की कृतियों के माध्यम से जिन्हें हम विस्मयों वाली कहानी परंपरा में रख सकते हैं। अनेक संभव असंभव घटनाओं और लौकिक-अलौकिक पात्रों के नियोजन से भरपूर इन कहानियों में कतिपय ऐसी भी हैं, जो मौखिक परंपरा के आधार पर चली आ रही थीं।

1850 के पश्चात तेलुगु कहानी-साहित्य में संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू आदि अन्य भाषाओं के अनुवादों का युग आया। किंतु ये सारी रचनाएं ग्रंथिक भाषा में होने के कारण साधारण पाठक की समझ में नहीं आती थीं।

तेलुगू कहानी यहीं से एक नया स्वरूप ले कर आगे बढ़ती है—सबकी समझ में आने वाली, व्यवहारिक भाषा के सहारे, उक्ति के नये प्रयोगों और अनुभूति की ताजगी के साथ यह उल्लेखनीय और महत्त्वपूर्ण कार्य किया था गुरजाडा अप्पाराव ने। यहीं से तेलुगू कहानी की आधुनिक यात्रा शुरू होती है।

जहा कदुकूरि वीरेशलिंगम पतुलु ने परपरागत भाषा की जटिलता व
समाप्त कर व्यवहारिक भाषा का प्रयोग अपनी रचनाओ मे करके साहित्य व
समाज सुधार का एकमात्र साधन माना था, वहा अप्पाराव ने साहित्य की सभ
विधाओ मे एक नवीन रचनाप्रणाली, एक नवीन विचार शैली का प्रश्रय देक
नयी परपरा स्थापित करने की आवश्यकता पर जोर दिया।

पहली वार गुरजाडा अप्पाराव की कहानिया 'दिछु बाटु' (सवक)और 'प
पेरेमिटि' (आपका क्या नाम है) 'आध्र भारती' मासिक पत्र मे प्रकाशित हुई
तो पडिता एव पुरानी परपरा को मानने वाले व्यक्तियो का वडा गुस्सा आ
था। क्योकि एक तरफ से ये कथाकृतिया व्यवहारिक भाषा मे लिखी ग
थी और दूसरी तरफ परपरागत पुरानी मान्यताओ के प्रति इनमे भारी विद्र
था। साथ ही इनमे विषयवस्तु यथाथ से जुडी हुई, मानवीय स्थितियो के विभि
पहलुओ को रूपायित करने वाली होती थी। इसके पूव केवल अलौकिक गु
से भरपूर नायक ही कहानियो मे आ सकते थे। अप्पाराव ने पहली वार इ
धरती के जीते जागते पात्रो को कथा का विषय वनाया।

अप्पाराव की कहानियो से प्रेरित होकर सन 1914 म वेदुरुमूडि शेषगिरि
राव ने 'मद्रास कथलु' लिख कर तेलुगू मौलिक कहानी का कुछ और आगे वढा
का प्रयत्न किया। 1915 मे प्रथम तेलुगू दैनिक पत्र 'आध्र पत्रिका' की स्थाप
की गयी थी। इससे कई रचनाकारो को कहानी लेखन म वडा प्रोत्साहन मिला
शिवशकर शास्त्री की 'मुरारि कथलु' इन्ही दिनो लिखी गयी थी। आपने बाद
'तेलुगू साहिती समिति' की स्थापना करके तेलुगू कहानी के विकास मे र
नाकारो को तैयार करने म बडा योगदान दिया था।

यही से तेलुगू कहानी म नयी कहानी के लक्षण परिलक्षित होने लग गये
'सबक' कहानी मे प्लाट, चरित्र चित्रण चरमबिंदु आदि कहानी के
सभी गुण मौजूद है जो एक लब अरसे तक कहानी की पहचान बन रहे। ना
कीयता ने कहानी को रोचक भी बना दिया है।

कहानी कुछ इस प्रकार है नायक गोपालराव को गाना सुनने का बे
शौक है और वह गाने वालियो के यहा जाता रहता है और रात का अक्सर द
से लौटता है। घर म पत्नी है। पत्नी के बार-बार समझाने पर भी गोपालर
की आदत छूटती नही। आखिर तग आकर वह पति को सबक सिखाना चाह
है। एक रात जब गोपालराव घर लौटता है तो यह देख कर दग रह जाता
कि घर म अधेरा है और पत्नी गायव है। वह नौकर से पूछता है। नौकर कह
है, शायद वह मायके चली गयी होगी। अब नायक को बहुत पछतावा हो
है। वह नौकर म कहता है कि वह जाकर पत्नी को लिवा लाय। और यह भ
जाकर कहे कि उसने अपनी आदतें सुधार ली ह और वह बहुत पछता रहा है

नौकर टालमटाल करता है। कहता है—ऐसी औरत को वापस बुलाने का क्या फायदा जो पति का छोड कर चली गयी हो। लेकिन नायक पश्चाताप करता रहता है। तभी घर म ही छिपी हुई पत्नी सामन आ जाती है।

कहानी की भाषा म प्रवाह है। बातचीत का लहजा पर्याप्त स्वाभाविकता लिये हुए है। रोचकता अत तक बनी रहती है।

'सबक' न पहली बार मौलिक कहानिया के चर्चित नायका से अलग सामान्य जन का अपना पात्र बनाया है, जो अपने आपम बहुत महत्त्वपूर्ण बात है। जहा तक फाम का सबध है, कहानी का पारपरिक रूप यहा स्पष्ट है—कहानी का सुनिश्चित प्रारभ है, बीच का हिस्सा परोक्ष बाता को पूरी तरह सामने ले आता है और चरमबिंदु पर पहुच कर कहानी एक झटके के साथ समाप्त होती है लेकिन उस समय कहानियो का अत ऐसे झटको के अलावा और कुछ हो भी नहीं सकता था।

□ कन्नड

आद्य कथाकार मास्ती वेंकटेश अय्यगार 'श्रीनिवास'

मास्तीजी का जन्म 6 जून, 1891 को मास्ती (कोलार, मैसूर) में हुआ था। शिक्षा एम० ए० तक। मास्तीजी अध्ययनशील प्रवृत्ति के छात्र थे, इसलिए हमेशा हर परीक्षा प्रथम श्रेणी में ही पास करते रहे। कार्यकारी जीवन में वह अनेक सरकारी पदों पर राज्य-अधिकारी के रूप में आसीन रहे। 1942 में मैसूर महाराज ने उन्हें 'राज सेवा प्रसक्त' उपाधि से विभूषित किया। 1956 में मैसूर विश्वविद्यालय ने 'डॉक्टर आव लेटर्स' की उपाधि प्रदान की। मास्तीजी के अब तक 13 कहानी-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। कहानियों के अलावा उन्होंने एकांकी, कविताएं, नाटक, उपन्यास तथा समालोचनाएं भी लिखी हैं। साहित्य अकादमी ने उन्हें पुरस्कृत भी किया है। इन्हें 'ज्ञानपीठ पुरस्कार' से सम्मानित किया गया है।

प्रथम मौलिक कहानी 1911 मे रचित और प्रकाशित

□ रगप्पा की शादी

आपम से कोई पूछ सकता है कि क्या यह शीर्षक 'रगप्पा की शादी' न रख कर, 'रगनाथ का विवाह' या 'रगनाथ विजय' नही रख सकता था ? ठीक है मै भी 'जगन्नाथ विजय,' 'गिरिजा कल्याण' की तरह 'श्रीरगनाथ विजय' जैसा शीर्षक दे सकता था, यह बात मुझसे छिपी नही है। लेकिन देखिए, यह न जगन्नाथ की विजय है और न गिरजा-कल्याण ही यह हमारे गाव के रगप्पा की शादी का विषय है। और इसलिए वैसा शीषक नही दिया।

हमारे गाव का नाम है होसहल्लि। नाम आपने सुना है न ? नही ! ओह ! इसमे आपकी भूल नही। भूगोल मे यह नाम ही नहा है। इगलड म बठ, अग्रेजा मे भूगोल लिखने वाले साहब होसहल्लि नही जानत हागे। हमार लोग भी ता इस गाव का उल्लेख करना भूल गय है। ठीक है भेडा के समूह की तरह ! और फिर इगलड के साहब और हमार लखक भूल गय हैं ता बेचारा मान चित्रकार उसे क्यो दिखाने लगा ? पूरे मानचित्र म हमारे गाव का नामोनिशान ही नहा है।

यही प्रारभ करके, कुछ कहता गया। क्षमा करेंगे। भारत मे मसूर बसा ही है, जैसे भोजन म परोसी जाने वाली पूरणपोली (एक मिष्ठान) और उनम होसहल्लि ऐसा है जैसे मैसूर-रूपी पूरणपोली म पूरण (मसाला) ! ये दोना बातें निस्सदेह सत्य हैं। आप सौ बातें कह सकत है—मुझे कोई एतराज नही। लेकिन मैंने सत्य कहा है। हासहल्लि की प्रशसा केवल मैं ही नही करना—गाव मे एक वैद्यजी भी हैं, जो यही कहत हैं। वह कई गावा को देख चुके हैं। लेकिन इगलड गये हुओ की तरह नही। आजकल का युवक उनसे पूछता है—आप इगलड जायेंगे ? ता वह उत्तर देते हैं—नही भया ! उस तुम्हारे लिए छाड

दिया है। जहा रहते हैं, उसे छोड कर कीचड चिपके कुत्ते की तरह भटकना तुम्हें ही मुबारक हो। मैंने तो कुछ ही बस्तिया देखी हैं। लेकिन वास्तव मे वह अनेक बस्तिया देख चुके हैं।

हमारे गाव मे वृक्षा का जो समूह है, उसमे आम के कई पड हैं। एक दिन आप हमारे गाव आइए। एक कैरी दूगा। खाइएगा? नही, खाने की जरूरत नही, उसे सिफ काटिए। खटटापन ब्रह्मारध्र पर चढ जायेगा। मैं एक बार एक कैरी ले आया। घर मे उसकी चटनी बनायी गयी। सबने खायी। सबका खासी आनी ही थी। दवा के लिए वैद्यजी के घर पर दौडा गौडा गया। तब उन्होंने यह बात बतायी।

जिस तरह यहा की करिया श्रेष्ठ है, उसी तरह हमारे गाव के आसपास की हर चीज श्रेष्ठ है। हमारे गाव के तालाब का पानी बहुत अच्छा है। उसके बीच म कमल लता है। देखने मे फूल बहुत सुदर दिखायी देते है। भाजन के लिए पत्तल न हो तो दोपहरी स्नान से लौटते वक्त दा पत्ते ला देते हैं। आप कहते हागे, मैं यह सब क्या कह जा रहा हू? लेकिन एसा नही है, हमार गाव की बात ही ऐसी है। खर, अब आप म से किसी का देखने की इच्छा जाग उठे, तो मुझे एक चिट्ठी लिख दीजिएगा। मैं होसहल्लि की पूरी जानकारी दूगा, आप अवश्य आइएगा।

मैं दस साल पहले की बात कह रहा हू। तब अग्रेजी जानन वाला की सख्या अधिक नही थी। सबसे पहले कणिकजी थे, जिन्हान साहस करके बटे को बगलूर भेजा था। अब तो अनेक है। अब ता छुट्टी के दिना म गली गली के लडके अग्रेजी म ही बोलने लगे हैं। तब हमारे यहा यह भाषा नही थी।— कन्नड के बीच अग्रेजी मिली नही थी। यह एक दिल्लगी है। चार दिन पहले की बात है। रामराव के घर न लकडी का एक गटठा लिया। उसके बट ने आगे बढ कर लकडहारिन से पूछा—तुझे कितना दू? वह बाली—चार पैसे! अभी चेंज नही है, कल आना, यह कर वह भीतर चला गया। वह बचारी कुछ न समझ पायी। कुछ देर खडी रही, फिर बडबडाती हुई चली गयी। तब मैं वही खडा था। मैं भी समझ न सका। जब रगप्पा से पूछा, तो उसन बताया कि चेंज का अथ छुट्टा है।

इस तरह अमूल्य अग्रेजी तब हमारे गाव म प्रचलित नही थी। इसलिए जब रगप्पा बगलूर से लौटा तो गाव वाले कहते सुने गये—सुना है कणिकजी का बेटा आया है! अरे! जो लडका पढने के लिए बगलूर गया था न वह लौटा है। अरे रगप्पा लौटा है, चलो देख आयें! और गाव वाल उनके घर की ओर दौड पडे। मैं भी चबूतरे मे खडा था। भीड देख कर मैंन पूछा—सब क्यो आ रहे है? क्या यहा बदरनाच रहा है? वहा खडे एक मदबुद्धि लडके ने उन लोगो

मैं सामने ही पूछा—तू क्या आया ? निरा लडका था ! मान-मर्यादा से अपरिचित छोकरा। मैं यह सोच चुप रहा कि पहले-सी शिष्टता खत्म हो गयी है।

इतने लोगों को देख कर भी रगप्पा मुसकराता हुआ बाहर आया। अगर हम सब अदर जाते तो घर कलकत्ता के गधो का तबेला बन जाता ! भगवान की दया, कि ऐसा हुआ नही। रगप्पा बाहर आया तो सबको काफी आश्चय हुआ। छह महीने पहले जसा गया था वैसा ही है। एक बुढिया उसके पास खडी थी उसने उसके सीने पर हाथ फेर कर कहा— जनऊ अब भी है। चलो जाति पर आच नही आयी ! और वह चली गयी। रगप्पा हस दिया।

रगप्पा के हाथ पैर, नाक-कान आख पूर्ववत् देखकर बच्चो के मुह म घुलना मिश्री-सी भीड छट गयी। मैं खडा रहा। सबके जाने के बाद मैंने पूछा क्यों रगप्पा, कैसे हो ? अब रगप्पा न मुझे देखा पास आकर नमस्कार कर बोला आपके आर्शीर्वाद स अब तक अच्छा हू।

यह रगप्पा का बडा गुण था। वह जानता था, किससे और कितनी बात करना लाभप्रद है। मनुष्य की कीमत वह अच्छी तरह आक लेता है। आज के लडको की तरह सूय को देखत हुए-से गरदन ऊपर उठाकर कमर टूटी सी, बेंत-से हाथ या बेंत हिलाकर नमस्कार नहा किया उसने, और न ही हाथ जोडकर किया। उसने तो झुककर, पैर छूकर नमस्कार किया। मैंने शीघ्रमेव विवाह-मस्तु' आशीर्वाद दिया और दो चार बातें कर घर लौट आया।

दोपहर भोजन के पश्चात मैं लेटा था। दो सतरे लेकर रगप्पा मेरे घर आया। बडा उपकारी उदार-हृदयी। मैंने सोचा, इसकी शादी करवा दी जाये तो योग्य गहस्थ बनेगा, चार जनों का उपकार करेगा। थोडी देर तक इधर-उधर की बातें करने के पश्चात मैंने पूछा—रगप्पा, तुम शादी कब कर रहे हो ?

रगप्पा बोला—मैं शादी नही करूगा।

क्या भई ?

मुझे योग्य लडकी मिलनी चाहिए। मेरे एक साहब हैं। छह महीने पहले उनकी शादी हुई है। वह करीब तीस साल के हैं और उनकी पत्नी पच्चीस की। वह परस्पर प्रेम की बातें करते है। समझ लीजिए मैंने एक छोटी लडकी से शादी कर ली। मेरे प्रेम की बातो को उसका गाली समझ बैठना सभव है। बगलूर की एक नाटक कपनी ने 'शाकुतल' नाटक खेला। उसकी शाकुतल छोटी होती तो दुष्यत को कैसे प्यार करती ? कालिदास के नाटक की अभिरुचि का क्या होता ? शादी करनी हो तो विवाह योग्य लडकी से ही करनी चाहिए, अन्यथा नहीं। इसलिए अभी शादी नही करूगा।

—और भी कोई कारण है ?

—स्वय की पसद की शादी हो। ऐसी लडकियो को, जो उगली काटना भी

नहीं जल्दी हमने बात कर दें तो पसन्द कैसे आये?

—एक निबोली और दूसरा करेला।

रत्ना हमेशा हुआ देगा—एक्सेलेन्ट! हां यही बात है।

मैंने तो सोचा था यह दोनों मुहब्बत करेंगे लेकिन यह तो ब्रह्मचारी रहने की सोच रहा है! मेरा चित्त कुछ विचलित हो उठा। कुछ देर बातें की फिर उसे भेज दिया। मैंने तय की कि इसकी शादी तो करा कर ही दम लूंगा।

हमारे रामराव के घर उनकी दीदी की बेटी आयी हुई थी। ग्यारह की थी। सुंदर थी। बड़े शहर में रहती थी। वीणा और हारमोनियम सीखा था। गाना बहुत ही मधुर। उनके माता-पिता चल बसे थे तो मामा अपने घर ले आये थे। रंगप्पा उसके लायक वर था और रत्ना के योग्य वह वधू।

मैं रामराव के यहां आता-जाता रहता था, इसलिए वह लड़की मुझसे खुल-कर बातें करने लगी थी। अरे लड़की का नाम बताना भूल ही गया। वह है रत्ना। दूसरे दिन सुबह रामराव के घर गया। उनकी पत्नी मिली तो कह आया —अभी देता हूं रत्ना को भेज दीजिए।

रत्ना आयी। शुक्रवार था—सुदर साड़ी पहन रखी थी। उसे अपने घर मे बिठा कर कहा—बेटी एक सुंदर-सा गीत सुनाओ। उधर रंगप्पा को बुला भेजा। 'कृष्णमूर्ति कण्णमुंदे निंतिदंतिदे' मधुर स्वरों मे रत्ना गा रही थी कि रंगप्पा आ पहुंचा। दरवाजे तक आकर देहलीज पर रुक गया। इसलिए कि आगे बढ़ने पर कहीं गीत ही बंद न हो जाये। किन्तु दूसरी ओर गाने वाली का दर्शन का कुतूहल! दरवाजे से आहिस्ता से झांका कि मेरी परछाईं देख रत्ना की दृष्टि द्वार की ओर मुड़ गयी। अपरिचित को आया देख, उसने गीत बंद कर दिया।

अच्छा तो आप आम खाते हैं न? और फिर जब आप आम खरीद कर खाते हैं तो उसका रस व्यर्थ न जाये, इस ख्याल से पहले उसका छिलका खाते हैं बाद मे आम का थोड़ा चख कर शेष खाने का प्रयास करते हैं। उस समय अगर वह हाथ से फिसलकर रेती पर गिर जाये तो आपको जो खेद होता है वैसा ही खेद रंगप्पा के चेहरे पर उभर आया।

—आपने बुलाया था? पूछते हुए वह अंदर घुस आया और कुर्सी पर बैठ गया।

रत्ना सिर झुकाये दूर खड़ी हो गयी। रंगा जब तब उसकी ओर देख लेता था। एक बार मेरी नजर उसकी नजर से मिल गयी। वह झेंप गया होगा।

काफी देर तक मौन छाया रहा। आखिर मौन तोड़ते हुए रंगप्पा बोल उठा—मेरे आने से गीत रुक गया अच्छा, मैं चलता हूं।

लेकिन वह कुर्सी से उठा नहीं! इस कलियुग मे तिल रंग ... यहां!

रत्ना शरमा कर अदर भाग गयी।

थोडी देर मूकवत बैठने के पश्चात रगप्पा ने पूछा—यह कौन है, सर ?

एक कहानी है। घर मे बधी एक बकरी से बाहर खडे एक सिंह ने प्रश्न किया—भीतर कौन है ? बकरी बोली—कोई भी हो, मैं एक जड प्राणी हू। नौ सिंहो का खा चुकी हू और एक के इतजार मे हू, तू नर है या मादा ? कहते हैं, इतना सुनते ही सिंह भाग खडा हुआ। उस बकरी की तरह मैंने भी कहा—कोई भी हो मुझे और तुम्हे क्या ? मेरी तो शादी हो चुकी है और तुझे शादी करनी है नहीं।

—क्या इसकी शादी अभी नही हुई है ? आशा भरा उसका प्रश्न था। यद्यपि उसने उस आशा को व्यक्त नही होने दिया, फिर भी तो मैं समझ ही गया।

—शादी हुए एक साल हो गया।

रगप्पा का चेहरा भुने बैंगन सा हो गया।

थोडी देर बाद मुझे काम है, चलता हू, कहकर रगप्पा चल दिया।

दूसरे दिन सुबह मैं शास्त्री के पास गया और उन्हें यह कह आया कि ज्योतिषी के लिए आवश्यक सामग्री तैयार रखना।

दोपहर को रगप्पा से मिला तो वह वैसा ही था।

पूछा—क्यो भई ! लगता है गहरे सोच मे हैं !

—कैसा सोच ? कुछ भी तो नही।

—सिरदर्द है ? आओ, वैद्यजी के पास चलें।

—सिरदर्द भी नही हैं, मैं ऐसे ही रहता हू।

शादी से पहले मैं भी लडकी के बारे मे निश्चय पर पहुचने तक ऐसे ही रहता था। तेरे साथ तो ऐसा कुछ हुआ नही होगा।

रगप्पा मुझे अपलक देखता रहा।

—चलो शास्त्री के पास चलें। पूछ कर तो देखें कि गुरु बल, शनि-बल ठीक हैं कि नहीं।

बिना कुछ सोचे ही रगप्पा उठ खडा हुआ। हम शास्त्री के पास पहुचे—क्या श्याम, तुम्हे देखे बहुत दिन हो गये ? उसने पूछा।

श्याम, कहानी सुनाने वाले इस बदे का नाम है। वक्ता है, किंतु रुक गया। फिर आज समय मिल गया—इसके पहले कार्यो मे व्यस्त रहा कह कर वाक्य पूरा किया। नही तो मैं पागल की नाइ कहता—आज सुबह आया था न ? तब सारी योजना बेकार हो जाती। अत मैं सतर्क रहा।

—यह कब आये ? इनकी क्या सेवा की जाय ? यह हमारे घर बहुत कम आते है इसी तरह आदर भाव की बातें हुईं।

—अपनी पोथी खोलो। रगप्पा आजकल गभीर रहने लगा है। उसका

कारण बता सकते हो क्या ? तुम्हारे ज्योतिषशास्त्र की परीक्षा भी लेनी है । मैंने रोप से कहा। शास्त्री ने कौडिया और ताडपत्र की एक पुस्तक निकाल कर कहा—यह अनादि कथा है इसकी एक कहानी भी है और वह एक कहानी सुनाने लगा। उस कहानी को मैं यहा नही कहूगा। कथा के बीच उपकथा सुनाने के लिए यह हरिकथा थोडे ही है ? और आप भी तो ऊब जायेंगे। हा, कभी अवसर मिला तो सुनाऊगा।

शास्त्री ने कुछ समय तक ओठ हिलाने और उगलिया गिनने के बाद पूछा —आपका नक्षत्र कौन सा है ? रगप्पा ने न जानने का सकेत किया।

—कोई बात नही, कह कर, सिर हिला कर, हिमाब लगा कर अत मे अत्यत गभीरता से शास्त्री ने कहा—कन्या से सबधित बात है। उसके हावभाव देख मुझे जोर की हसी आने ही वाली थी कि रोके रहा। लेकिन शास्त्री की बात सुनकर तो हस ही पडा। फिर वह उठा—क्यो रगप्पा, मेरा कहना ठीक निकला न ?

—लडकी कौन है ? प्रश्न मैंने, आपके इस दास ने पूछा था।

कुछ देर सोच कर बताया—लडकी का नाम समुद्र मे पाये जाने वाले पदार्थ पर है।

—कमल ?

—हो सकता है।

—पाची (काई) ?

—कमल नही तो पाची ? मोती, रत्न

—रत्ना ! जो लडकी रामराव के घर आयी थी, उसका नाम रत्ना था। खैर, कन्या-लाभ होगा।

फिर सोच कर—होगा ?

रगप्पा का चेहरा आश्चय से भर उठा। उसम थोडी खुशी भी थी। यह देख कर मैंने कहा—उस लडकी की तो शादी हो गयी है न ? बात समाप्त करने से पहले मैंने एक बार पीछे मुड कर देखा। रगप्पा के चेहरे का रग उड चुका था।

—मैं नहीं जानता और कोई होगी। शास्त्र ने जो कुछ भी कहा, वह मैंने बताया है।

वहां से हम चल दिये। लौटते समय रामराव के घर के सामने रत्ना खडी मिली। मैं अकेला भीतर जाकर बाहर आया। आते ही रगप्पा से बोला—कितना आश्चय, अरे, कहते हैं इस लडकी की शादी नहीं हुई है। उस दिन किसी ने बताया कि हो गयी है। शास्त्री की बात सच निकली रगप्पा मैं नही मानता कि तुम उस लडकी के बारे मे सोच रहे हो। क्यो, माधवाचायजी की कसम है मुझसे

ना नही ! उन्होने जो कुछ भी बताया, झूठ है कि सच ?
मैं कह नही सकता कि और कोई होता तो कहता कि नही, रगप्पा ने तो
कारते हुए बता दिया—हम जितना जानते हैं, उससे अधिक शास्त्र की बात
है। उन्होंने जो भी बताया, सच बताया।
उस दिन शाम को शास्त्री कुए के पास मिल गये। मैंने कहा—क्यो शास्त्री
जो कुछ मैंने सिखाया था, उसे तुमने ऐसे सुनाया कि उसे तिल भर भी शका
ठी। बाप रे ! तुम्हारे शास्त्र का क्या कहना। शास्त्री ने उत्तर दिया—तुमने
बताया था ? शास्त्र के आधार से जो ढूढा जा सकता था, वही तुमने बताया
। तुम न भी बताते तो मैं बताता ही। तुमने तो थोडा कहा। बताओ तो सही,
कितना बताया ? समझदारो का यही व्यवहार है न।

परसा रगप्पा मुझे भोजन के लिए बुलाने आया। मैंने पूछा—आज क्या है,
?
—श्याम की वषगाठ है, उसे तीन साल पूरे हुए हैं आज।
—श्याम ! नाम अच्छा नही है। मैं तो कोयले के टुकडे के समान हू लेकिन
सुवण पात्र का मेरा नाम रख कर तुम लोगो ने अच्छा नही किया। तुम और
, दोनो मे अभी नादानी है। खैर, गोरो की रीत ही ऐसी है (अग्रेजी म
न होने पर मित्रो को आमत्रित किया जाता है और उनम से किसी एक के
पर बच्चे का नाम रखने का रिवाज है।) तुम्हारी पत्नी को आठ महीने का
है, तो खाना पकाने मे तुम्हारी मा को सहयोग कौन देगा ?
—दीदी आयी हुई है।
भोज के दिन मैं गया था। पर जाते ही श्याम पैरो से लिपट गया। उसके
चूमे और कोमल अगुली में एक अगूठी पहना दी मैंने।
महोदय ! अब अपने इस दास को छुट्टी दीजिए। वैसे तो मैं सदा ही आपकी
मे तत्पर रहूगा ही। नाराज तो नही हैं आप ?

ा की शादी' ही वह पहली कहानी है, जो कहानी के गुणा से सपन्न होकर सामने आती है। इस कहानी की सबसे बडी विशेषता यह है कि इसमे ेजी ने अपनी ही पूवरचित रचनाओ की जमीन को छाडकर नयी जमीन ाडा है। मास्ती जी ने भी शुरू-शुरू म निवधनुमा रचनाए लिखी, लेकिन ा की शादी' के बाद उनकी लेखनी कथा-लेखन के क्षेत्र मे ही निरतर र होती चली गयी।

'रगप्पा की शादी' के पात्र आम भारतीय लोग हैं और ग्रामीण परिवेश के ाधि। हास्य और व्यग्य की मिली-जुली शैली म मास्ती जी ने उन दिना के प्रभावा को भी कहानी के ताने-बाने मे बुन दिया है। परिणामस्वरूप जो ो सामने आती है—उसम रोचकता, पठनीयता और जागरूक कथा-दृष्टि ही, भारतीयता भी अपनी समग्रता म मौजूद है।

कहानी कहने की मास्ती जी की अपनी विशिष्ट शैली है, जिसमे वह पाठक पने साथ लेकर चलते हैं। इसे किस्सागोई के अवशेष के रूप म स्वीकार जा सकता है। लेकिन यही पर ही स्पष्ट हो जाता है कि अपनी कहानी मे ो जी अपने समसामयिक परिवेश को लेकर चले ह, जिसके लिए जरूरी था ह पाठका को उस परिवेश की विश्वसनीयता का प्रमाण भी देते रहे। ो जी अद्भुत रूप से इस ध्येय मे सफल रहे हैं।

निलयम' नाम से एक प्रकाशन शुरू किया था। इस प्रकाशन संस्था द्वारा 'तिलक्कुरल' का अंग्रेजी अनुवाद करके 1916 मे प्रकाशित किया। एक कहानी संग्रह निकाला, जिसका नाम है 'मगयरक्करसियिन काडल' (मगयरक्करसि का प्रेम) इसका पहला संस्करण 1917 मे निकला। दूसरा संस्करण 1927 मे राजा जी की भूमिका के साथ प्रकाशित हुआ। 'कुलत्तंगक्र अरसमरम' (तालाब-किनारे का पीपल) जो तमिल की प्रथम मौलिक कहानी मानी जाती है।

व० वे० सु० अय्यर प्रथम महायुद्ध के बाद पुदुच्चेरी से मद्रास आये। युद्ध के उपरांत कई राजनैतिक कैदियों को मुक्ति मिली थी। वे भी मुक्त हो 'देश भक्तन' के संपादक के रूप मे काम करने लगे। उस समय 'देश भक्तन' में प्रकाशित उनके कुछ लेखो मे राजद्रोह की गंध पाकर सरकार ने उनको फिर कैद कर दिया। 'बेल्लारी' की जेल मे उन्होंने अपनी सजा के दिन बिताये। कारावास से छूटते ही उन्होने उत्तर भारत की यात्रा की। लौटकर तिरुनेलवेली जिले में ताम्रवर्णी नदी के सुंदर तट पर चेरमादेवी मे उन्होने अपने गुरुकुल की स्थापना की। यहीं पर उन्होंने 'बाल भारती' नामक साहित्य पत्रिका प्रकाशित की।

यदि इस वीर, अद्वितीय साहसी पुरुष के जीवन का ऐसा नाटकीय अंत न होता तो तमिलनाडु का भाग्य कुछ और होता। अय्यर अपने विद्यार्थियों को लेकर 1925 में पापनाशम जल प्रपात मे गये थे। एकाएक अय्यर की इकलौती बेटी झरने के बहाव में बह गयी। बेटी को बचाने हेतु अय्यर प्रवाह मे कूद पड़े, निकले नही। एक महान व्यक्ति का अंत हो गया और तमिल साहित्य की भारी क्षति हुई।

प्रथम मौलिक कहानी सन् 1917 मे रचित और प्रकाशि

□ तालाब किनारे का पीपल

कहने का मैं तो निरा वक्ष हू। जड हू। लेकिन अपने दिल की बात सु
लगू तो चौबीस घटे काफी न होंगे। अब तक मैंने अपनी आखो से कितनी घट
देखी है। कितनी बातें सुनी है। आपकी नानी की नानी का घुटनो चलते दे
है हसिए मत! एक सौ साल पहले की बात कहता हू। आप लोगो की द
परदादी इसी तालाब के पनघट पर पानी लेने घडा ले के आयेंगी। कुछ तो अ
बाल बच्चा का भी ले के आयेंगी, ओह वे बच्चे कितने सुदर, कितने
होगे! बच्चो को किनारे पर खेलते छोडकर व अपने सारे कपडे लत्ते धो ले
फिर तो हलदी उबटन लगा के स्नान करेंगी। उन दिनो मे देखा न!
कोने पर प्रवाल वल्ली का एक पौधा था। अनूठी मोतिया सी खिली
कलिया की बहार! ओह सारा तालाब उन फूलो की सुगध से महक उठेग
हू उन दिना की स्मृतिया कितनी मधुर लगती हैं।

लेकिन अब तो मैं उन दिनो की बीनी बातें सुनाना नही चाहता।
दिल जब हलका व खुश रहेगा, तब सुनाऊगा। गत चार-पाच दिनो से मुझे
रहकर रुक्मिणी की यादें आती रहती है। पद्रह साल गुजर गये मगर मुझे ल
है मानो कल की ही बात है। आप लोगो मे से किसी ने उसे न देखा होगा,
प्रतिमा-सी लगती थी वह बच्ची। उसका वह हसता हुआ मुखडा याद आ
लगता है, वह मेरे सामने आकर खडी हो गयी है। उसके शुभ्र, सुदर लला
देखते आखें न थकती। लबा कद। कमल के डठल-से कोमल हाथ-पाव।
मल्लिका-सा मदुल सुडौल शरीर। सारा सौदय मानो उन आखो म समा
था। कितनी विशाल बडी-बडी स्निग्ध, स्नेहपूर्ण, आखें थी व। उन आख
देखते ही नीलोत्पलो से सुशोभित निर्भीक सरोवर की स्मृति आयेगी। सो

की अमावस्या के दिन परमात्मा की पूजा करके, मेरी प्रदक्षिणा करती, तब वह स्नेहपूरित दृष्टि से मेरी ओर देखती रहती कि मेरी सूखी शाखाएं भी लहलहा उठती। ओह! मेरी लाडली बिटिया रुक्मिणी! तुम जैसी बेटी को न जाने कब देख पाऊंगा?

जब बच्ची थी तब से लेकर आखिरी सास लेने तक वह तालाब पर न आती, ऐसा एक दिन न रहता। नित्य ही मैं उसे देखता रहता। चार-पांच वर्ष की उम्र तक सहेलियों के साथ मेरी ही छाया में खेलती रहती। बच्चों से मुझे बड़ा प्यार है और वह तो रानी बिटिया थी। गांव भर की वह लाडली थी। उसे देखते ही मैं अपने को भूल जाता। उस पर थोड़ी सी भी धूप न लगने देता। वह जरा दूर हट के खिसकती रहती तो भी शाखा रूपी हाथ फैलाकर उसे छाया देने के लिए विह्वल हो जाता। भक्तिभाव से अपने प्रियतम सूर्य भगवान का दर्शन लेते ही मुझे रुक्मिणी की याद आ जाती। फिर क्या पत्तों का पावड़ा बिछा के उसकी राह देखता रहता।

उसके पिता कामेश्वर अय्यर उस वक्त काफी सम्पन्न दशा में थे। घरबार, धन-दौलत सब कुछ था। बेटी तो उनकी आंखों का तारा थी। फिर क्या कहना, बाजार में कोई भी नयी चीज आये, तो वे अपनी बेटी के लिए लाना न भूलते। हीरे-जवाहरात के आभूषणों से बेटी को लाद दिया था उन्होंने। जब वह दस उम्र की थी 'जोत्रा' के लिए रेशमी घाघरा और सिल्क की ओढ़नी ले आये थे। 'जोत्रा' के दिन उसके सौंदर्य का क्या कहना! पूनम की रात में, अलंकारभूषिता रुक्मिणी के सुंदर शरीर पर रेशम का घाघरा और ओढ़नी ने चार चांद लगा दिया था। सच कहता हूं मैं आत्म विस्मृत हो गया था, आह! उसके कंठ के बारे में कहना ही भूल गया। उसके मधुर कंठ ध्वनि के समक्ष कोयल आखिर क्या चीज है! मान की तार सी लचकती गमकती आवाज थी उसकी कि सुननेवाले झूम उठते। 'जोत्रा' के दिनों में मैंने उसका गाना सुना है। हां, अब भी उसकी वह मीठी, मधुर मादक आवाज मेरे कानों में गूंज उठती है।

लड़की बड़ी अच्छी थी। दया व करुणा से भरा हृदय था उसका। हर किसी से प्यार का बर्ताव करती। अमीर गरीब का भेद भाव नहीं उसके मन में। खासकर अभावग्रस्त लोगों के प्रति ही उसे अधिक ममता थी। अंधे, लूले-लंगड़े भिखारियों को देखते ही उसकी आंखों से आंसू बहने लगता। अधिक क्या कहूं उसकी याद आते ही, झुलसती घोर गरमी के उपरांत वर्षा की शीतल धारा से प्राप्त अलौकिक आनंद की सरस अनुभूति मिलती है।

आह! मेरी प्यारी बिटिया की ऐसी दुर्गति क्यों हुई? मुझ भाग्यहीन का सारा मनोरथ मिट्टी में क्यों मिल गया? ब्रह्म देव अंधा है क्या? ना-ना मानव के निर्मम अत्याचार पर भगवान को क्या दोष दूं?

रुक्मिणी बारह साल की हुई तो उसकी शादी गाव के मणियम (मुखिया) रामस्वामी अय्यर के पुत्र नागराज के साथ हुई। बडी धूमधाम से विवाह सपन्न हुआ। सहेलियो के साथ (तोपि पागल के दिन) और जुलूस म मवालवार भूषिता रुक्मिणी जब गाव की सडको पर आयी, मुझे लगा मेरी दृष्टि ही लग जायेगी, सहेलियो के बीच मे आखो को चौधिया देने वाली बिजली की लता सी वह दमक रही थी।

कामेश्वर अय्यर ने बेटी का गहने, कपडे, बरतन भाडे सब खूब दिया था। रुक्मिणी के सास-ससुर का दिल भर गया। विवाह के बाद उसकी सास अक्सर उसे अपने घर परले जाती। बडे प्यार से उसके बाल सवारती, फूलो स सजाती। नाते रिश्ते के यहा जाते वक्त रुक्मिणी को साथ ले जाना न भूलती। रुक्मिणी का पति नागराज भी सुदर, सुशील लडका था। वह मद्रास मे पढ रहा था। हर किसी के मुह म यही बात थी जोडी ठीक बैठी है। रूप, सौदय-बुद्धि व धन सब दृष्टि से एक दूसर से कम नही।

तीन साल गुजर गय। इन तीन सालो मे कितना बडा हेरफेर हो गया था। कामेश्वर अय्यर की दशा अब शाचनीय हो गयी थी। सुना है आथनाट कपनी मे उन्हाने अपनी सारी रकम जमा कर रखी थी। हमारे देश वालो के चार कराड रुपया को उस विलायती कपनी न एकाएक डकार लिया बस एक ही दिन मे लखपति कामेश्वर अय्यर राह के भिखारी बन गय। रुक्मिणी की मा मीनाक्षी के शरीर पर जो कुछ आभूषण थे, वही बचे। अपनी पैतृक सपत्ति घर और जमीन आदि बेच कर ही उनका अपना कज भरना पडा। अपना मकान बेचकर, अभी नाले के किनारे पर कुप्पुस्वामी अय्यर रहते है न, उसी मकान पर वे आ गये थ। मीनाक्षी भी देखन म महालक्ष्मी-सी लगती। बडी शात स्वभाव की स्त्री थी।

इतनी बडी विपत्ति आ गयी, हाय क्या करें, एसा वह अकुलायी नही। इतन दिन सुख से रहे। भगवान न इतना सुख वभव दिया था, अब उन्ही ने सब कुछ ले लिया। और क्या? मेरे 'व और रुक्मिणी जब तक जीत रह, मुझे कोई अभाव नही, काई दुख नही पूस महीन मे रुक्मिणी का गौना करके ससुराल भेज दें तो फिर हमे क्या चिंता? रूखा सूखा जो मिले खा के, भगवान क ध्यान म अपना दिन चन से बिता देगे एसा कहती रहती। लेकिन बेचारी भावी को क्या जानती थी?

कामेश्वर अय्यर की सारी सपत्ति लुट गयी, अब कुछ बचने की आशा नही, यह जानते ही रामस्वामी अय्यर का सारा स्नेह ठडा पड गया। पहले तो व अकसर उनसे मिलने आते, रास्ते म कही देखते तो भी दस पाच मिनट बालते रहते। लेकिन अब तो वही दूर पर उन्हे देखते ही कन्नी काटन लगते जस कोई

जरूरी काम हो, मुडकर दूसरी तरफ चले जाते। उनकी पत्नी जानकी ने भी मीनाक्षी से मिलना जुलना बद कर दिया। लेकिन मीनाक्षी और रामेश्वर अय्यर ने इसकी परवाह न की। मगर वे लोग रुक्मिणी के प्रति भी विमुखता दिखाने लगे तो वे दोना बेहद दुखी हो गये। आथनाट कपनी के डवने के पहले हर शुक्रवार जानकी, रुक्मिणी को ले आने के लिए नौकरानी को भेजना न भूलती। उस दिन बहू को अपन हाथ से साज-सवार कर सध्या को अखिलाडेश्वरी के मदिर मे ले जाती और अगले दिन ही घर भेजती। मगर आथनाट-कपनी के डूब जाने की खबर पाते ही उस शुक्रवार को नौकरानी द्वारा उसने खबर भेज दी कि आज घर मे बहुत काम है, इसलिए अगले शुक्रवार को रुक्मिणी को बुला लूगी। अगले शुक्रवार न नौकरानी आयी न कोई खबर। सास के इस व्यवहार पर रुक्मिणी भी दुखी हो गयी।

दिन बीतते रहे। गाव म तरह-तरह की बातें उठती रही। सारी गपशप और अफवाहे तालाब के तट पर जोरो से चलती। पूरी बातें मेरे कान तक कहा पहुचती? इधर-उधर से एकाध शब्द सुन लेता मेरा मन बिलकुल बेकार था। लगा—इतनी कानाफूसी और गुप्त बातें अनथकारी हैं मैं आतकित हो उठा।

आखिर काट-कूट के इधर उधर की बातें मिला कर देखा ता बात धीरे धीरे समझ मे आने लगी। रामस्वामी अय्यर और जानकी ने अपने बेटे की दूसरी शादी करने का निश्चय कर लिया है। हाय क्या करू मैं एक दिन टूट गया। रानी बिटिया रुक्मिणी के जीते जी ऐसा करने का कैसे मन आया उन नराधमो को! हाय री पापिन जानकी! वह बच्ची तुम्हारी जैसी ही एक स्त्री है न! उसने तुम्हारा क्या बिगाडा था? उसका मुखडा दखते ता पत्थर का हृदय भी पिघल जाता। तुम लोगो का दिल क्या पाषाण से कडा है? मेरी ही यह हालत रहे तो उस मासूम बच्ची व उसके मा बाप की दशा का क्या कहना?

अब तो केवल नागराज का भरोसा है। वह तो मद्रास मे पढ रहा था। मार्गशीर्ष महीना आ गया और मैं दिन गिनता रहा आखिर वह भी आ गया। जिस दिन गाव म आया, उसका चेहरा हमेशा के जैसा प्रफुल्लित था। हसी खुशी और मजाक करता रहा। मगर कुछ दिनो मे वह बहक गया। लगा मा बाप उसका मन बहकान लग गये। सुनते हैं, पानी के बहते-बहते पत्थर भी घिस जाता है। उसका कसा हुआ चेहरा देखते ही मेरा कलेजा बठ जाता। मेरी आशा जाती रही। केवल उसी का भरोसा था लेकिन अब तो वह भी

पूस का महीना आ गया। अब खुलकर बातें होने लगी। सुना, कोई पूरब की लडकी है। लडकी के पिता के नाम चार लाख की सपत्ति है। कोई लडका नही यही एकलौती लडकी नही एक और लडकी भी है। जो भी हो, रामस्वामी अय्यर के परिवार के हिस्से को दो लाख अवश्य आ जाएगा यह सब बातें मुझे कर्ण

कठोर लगती मगर क्या करता ? मेरा वश ही क्या है ? सब्र करके सुन लेता।

जब से इस तरह की चर्चाएं उठने लगी, मीनाक्षी ने दिन मे घर से निकलना बंद कर दिया। सूर्योदय के पहले मुहअंधेरे मे ही आ जाती व स्नान करके पानी ले के चली जाती। उसकी सूरत देखते ही मेरे मन मे ढेर-सी दया उमड आती। खाना पीना नीद तक हराम हो गयी। इस दुख ने उसके सौंदर्य को मलिन कर दिया। अपना घरबार, सोना चादी लुट गया, मगलसूत्र के अलावा मेरे शरीर पर अब कुछ न रहा ऐसी वह अकुलायी नही सोने की चिडिया सी बहू के रहते जानकी उस पर तिल भर भी दया न दिखा अपने बेटे की दूसरी शादी का प्रबंध कर रही है न ? बस इसी दुख की आग म वह दिन रात जलती रही बेचारी !

बेचारी रुक्मिणी पर क्या बीत रही थी, यह तो मैं नही जानता। आखिर मुहूर्त का लग्न निश्चित हो गया। लडकी वालो ने आकर लग्नपत्रिका दे दी। उस दिन उनके द्वार पर नादस्वर के मगल बाजे की ध्वनि सुनकर मेरे प्राण काप उठे। न जाने मीनाक्षी व रुक्मिणी कैसी छटपटाती रही।

नागराज की निममता पर मैं आसू न बहाऊ, ऐसा एक दिन न बीतता। हर क्षण सालता, दुख मे तडपता रहा कि सूखे पर गिरी वर्षा की बूदा-सी एक खबर आयी कि श्रीनिवास आनेवाला है। श्रीनिवास नागराज का कालेज का साथी है। बीस-तीस मील की दूरी पर उसका गाव है। किसी ने उसे पत्र लिख दिया कि नागराज की दूसरी शादी होनेवाली है। बस तुरत डाकगाडी-सा दौडता आ गया। उस दिन शाम को लोना तालाब के किनारे पर आये। गुप्त रूप म एकान्त मे दिल खोलकर बातें करना है, तो तालाब का किनारा छोड के और जगह कहा है ? छूटते ही श्रीनिवास ने पूछ लिया कि जो कुछ मैंने सुना है, वह सब सच है क्या ? नागराज बोला—मा बाप न बात पक्की कर ली है। अब मेरे कहने म थोडे ही रुकने वाली है ! सुना है, लडकी बडी रूपवती है और उसके पिता न उसके नाम पर लाख रुपय की सपत्ति लिख रखी है। उनकी मृत्यु के बाद और एक लाख मिलेगा कहो यार ! घर आयी लक्ष्मी को क्यो कर दुत्कारें ?

यह उत्तर सुनते वक्त श्रीनिवास का चेहरा कितना विवर्ण हो गया था। लगभग आधे घट तक वह अपने मित्र का धर्म और और न्याय का पक्ष लेकर ऐसी-ऐसी दलीलें पेश करता रहा कि पत्थर का हृदय भी पसीज उठे। बोला—चाहे कितन ही लाख मिलें अग्नि के समक्ष लिए मत्र प्रमाण को तिलाजलि दे दोगे ? एक मासूम, निर्दोष लडकी के जीवन की बरबादी कर दोगे—ऐसा बहुत कुछ कहा। मैं मन ही मन आशीश देता रहा। अत मे नागराज ने कहा—श्रीनिवास ! मैंने केवल तुम्हारे के लिए ऐसी बातें कहा क्या मानते हो कि केवल

पसे के लिए मैं इतना नीचतापूण काम करू गा ? मैं तो बात को गुप्त रखना चाहता था लेकिन अब चारा नहीं। बात यहा तक बढ गयी तो तुमसे छिपाने से क्या मतलब ? लेकिन एक बात है, तुम किसी से न कहना। ये लोग अपना आय सस्कार छाडकर इतनी नीचता पर उतर गये हैं तो मैं इनके मुह पर कालिख मलने का निश्चय कर चुका हू। इसलिए मैं मनारकोइल जाता हू। विवाह की वेदी पर बठूगा मगर ऐन वक्त पर मागल्य धारण करने स इनकार कर दूगा। अदरख खाये बदर-सा सब अपना-सा मुह लिये खडे रहेंगे और क्या ? मित्र तुम मानते हो कि रुक्मिणी के अलावा और किसी का हाथ पकड़ूगा। लेकिन श्रीनिवास को यह ठीक नही जचा। कहा—तुम मनारकोइल चले जाते तो रुक्मिणी और उनके मा-बाप पर क्या बीतेगी, इस पर कभी सोचा है ? इस बात पर थाडी दर चर्चा करते रहे। मुझे कुछ ठीक सुनाई नही दिया। उस दिन रात को मुझे नीद नही आयी। अपने को धिक्कारता रहा कि नागराज जैसे सत्पात्र की मैंने कितनी निंदा की। सोचा, अब रुक्मिणी को कोई चिंता, कोई अभाव नहीं।

शनिवार का दिन है। सारा गाव सो गया। साढे नौ बज गया होगा। नागराज अकेले तालाब के किनारे पर आया और नीम के वृक्ष की छाया मे बठा चितामग्न हो गया। थोडी देर पर दूर से आती हुई एक स्त्री दिखाई पडी। वह भी तालाब की ओर ही आ रही थी मगर बार-बार पीछे मुड़कर देखती आ रही थी। आखिर नागराज के पास आकर खडी हुई तो मालूम हुआ कि वह और कोई नही रुक्मिणी है। मैं चकित सा रह गया। आखें मल कर ध्यान से देखने लगा।

पाच मिनट गुजर गये। मगर नागराज का ध्यान उसकी ओर गया ही नहीं। वह तो गहरी चिंता म निमग्न हो गया था। रुक्मिणी भी अचल प्रतिमा सी खडी थी। अचानक उसने सिर उठाया कि सामने रुक्मिणी को पाकर अचकचा कर रह गया। लेकिन तुरत सभलकर पूछा—रुक्मिणी इतनी रात बीते अकेले यहा—जहा आप हैं वहा मैं, अकेली कभी ! वह दिन तो अब तक न आया है। इतना कहकर वह मौन हो गयी। दो-तीन मिनट गुजर गये। मगर दोनो न बोले। आखिर वह बोला—इस वक्त हम दोनो को यहा देखकर लोग अनाप-शनाप बकने लग जाएगे। आओ, घर चलें। रुक्मिणी बोली—समझ म नही आता कि आपसे क्या कहू ? कैसे कहू ? गत तीन महीनो म मुझ पर जो कुछ बीत रहा है वह देवी अखिलाडेश्वरी ही जानती है। सोचा था, आपके मद्रास से लौटते ही मेरी सारी चिंता दूर हो जाएगी। मामा और मामी चाहे जो कुछ भी करें, आप मेरा साथ न छाडेंगे यही भरोसा था। आप मेरा तिरस्कार कर दें तो मैं किसका सहारा ले के जीऊगी ? मेरा दिल चूर चूर हो गया है। आप उसे सभाल

कर न रखें तो बस कहे देती हूं मेरा निश्चय नहीं इनमें कोई संदेह नहीं, इतना कहते-कहते उन रोना आ गया। मगर नागराज कुछ न बोला। चुप बैठा था। थोड़ी देर के बाद रुक्मिणी ने पूछा—सुना है, कल बारात रवाना होगी। आप भी जाने वाले हैं?

थोड़ी देर सोचने के बाद नागराज बोला—हां जाने का इरादा है। उसके ये शब्द सुनते ही दुख से रुक्मिणी की छाती फटने लगी। शरीर थरथर कांप उठा। आंखों में पानी उमड आया। लेकिन बडी मुश्किल से अपने को रोकते हुए उसने कहा—तब तो आपने मेरा तिरस्कार कर दिया।

पर नागराज बोला—तुम्हारा तिरस्कार करता नहीं। कभी नहीं। मगर मां-बाप को तृप्त करना भी मेरा कर्तव्य है न? इसीलिए उनकी बात मानकर कल जाता हूं। लेकिन कहे देता हूं, तुम जरा भी चिंता न करना। मैं कभी तुम्हारा तिरस्कार न करूंगा।

रुक्मिणी की सब्र का बांध टूट गया—आप दूसरी शादी कर लें और मैं चिंता न करूं? आप मेरा तिरस्कार न करेंगे मगर मां-बाप की बात रखेंगे। ओह! आगे मेरे कहने का क्या रखा है मेरी अब आई गति नहीं वह बेचारी हताश हो कर बैठ गयी।

नागराज सोचता रह गया, शादी नहीं होगी इन शब्दों के अलावा और कौन सी बात है जो उस बेचारी को सांत्वना दे सकती है? लेकिन अभी तो उसे खुलकर कहने को वह तैयार न था। इसलिए बिना कुछ कहे, मौन भाव से अपने दिल में उसके प्रति जो प्रेम व प्यार है उसे व्यक्त किया। उसके हाथ अपने हाथों में लेकर प्रेम से सहलाता रहा जैसे किसी रोती बच्ची को आश्वासन दे रहा हो। बडे प्यार से उसने पीठ पर हाथ फेरा कि उसके हाथ उसके रूखे केशों में उलझ गये तो हडबडाकर बोला—अरी! तुमने यह क्या कर रखा है? तेरा मुलायम केश कैसे जटा सा उलझा पडा है आह तुम्हारी यह दशा मुझसे देखी नहीं जाती। रुक्मिणी! यहां देखो न? तुम्हारा मुंह देख लूं तो सही। हाय! तुम्हारी आंखें कैसी लाल हो गयी है। मुख की वह कांति कहां चली गयी। मेरी प्रिये! मुझ पर विश्वास करो। मैं तुम्हें कभी न छोडूंगा। जरा भी न घबराना। हृदय पूर्वक कहता हूं तुम्हारी यह हालत देखकर मेरी छाती फट रही है। मगर मैं भी न सोचो कि बचपन से लेकर हम दोनों का जो प्यार है, उसे भूल जाऊंगा अच्छा! उठो दर हो गयी न? घर चलें।

रुक्मिणी उठी नहीं। उन्मादिनी-सी बैठी रही। उस [illegible] नागराज की आंख भर आयी। पल भर ख्याल आया कि मन [illegible] वह दू उससे हाय! उसी वक्त वह देता तो कितना अच्छा हुआ होता! लेकिन उस वक्त उसे वह अगले दिन जो चमत्कार दिखाने जाता है, [illegible]

पूण लग रही थी। रुक्मिणी के कोमल, दुबल शरीर को जस किसी फूल का सहेज कर उठा रहा हो, धीरे से हाथो म भरकर नागराज ने अपनी छाती से लगा लिया—रुक्मिणी ! बोलती क्या नही ? कहो न ! और क्या चारा है ? मैं क्या कर ? उसकी आवाज बडी करुणापूण थी। रुक्मिणी ने आखें उठाकर एक बार उसकी ओर देखा उस दष्टि मे जो कुछ था उसे मैं आपसे कैसे कह पाऊ गा ? बात के तेज प्रवाह मे असहाय बहने वाला कही दूर पर तैरती लकडी को देखकर बडी आशा के साथ साथ हाथ-पाव मारत, डूबते उतरात उसके पास पहुचता हाय बच गया आखिर ऐसा मन म आशा बाधता हुआ जब उस पर हाथ लगाता है तो मालूम होता है कि वह लकडी नही केवल कूडा है तब उसकी मनोदशा उसके चेहरे का भाव कैसा होता ? वसी हालत थी रुक्मिणी की।

उस ममाहत दृष्टि मे असीम यातना, अपरिमित वेदना भरी थी। इस पर भी नागराज का मौन खडे देखकर वह उसके आलिंगन से अपने को छुडाती हुई बोली—अब कहने को कुछ नही है, मैं मनारकाइल न जाऊ गा ऐसा कहना आप नही चाहते। अच्छा यही मेरी नियति है, मेरा प्रारब्ध है। जब आप मुझे इस तरह असहाय छोडने को तयार हो गये, अब मैं किसके लिए किस भरोसे पर जिंदा रहू ! पर मुझे आपसे जरा भी शिकायत नही। जानती हू इस कृत्य पर आपकी सहमति नही है। आपका मन ऐसा करने पर सहमत न होगा। लेकिन मेरी विधि—मेरा भाग्य—मेरे मा बाप के दुर्दिन, आपको ऐसा करने को प्रेरित कर रहे है। बस इतना याद रखिए कि रुक्मिणी नामक कोई एक थी जो मुझसे बहुत प्यार करती रही और मरते वक्त भी मेरी ही याद करती रही। रुक्मिणी उसके चरणो मे गिरकर, उसका पाव पकड कर फफक फफक कर रोने लग गयी।

नागराज ने झट उसे उठाकर कहा—पगली कही की ! ऐसा-वैसा कुछ न कर बैठना ! देखा, बूदाबूदी होने लग गयी। कैसा घटाटोप हो गया। लगता है झडी लग गयी। आओ, घर चलें। नागराज उसका हाथ पकड कर जाने लगा। आकाश पर अब चाद नक्षत्र कुछ भी दिखाई न पडते थे। जहा देखो एकदम अधकार ही अधकार है। जैसे कोई बादल पर तलवारो का आघात कर रहा हो, रह रह कर बिजली की रेखाए पल भर लपलपाती, भभक उठती और अगले क्षण अधकार और गाढा हो जाता। धरती और आकाश को कपा देने वाले गजन होते। हवा तूफान सी चल रही थी। कही दूर पर झडी लगा कर बरसती वर्षा का शोरगुल आसुरी गति से निकल आता सा लग रहा था। प्रलय मचायी-सी इस घोर हलचल म रुक्मिणी और नागराज मे जो बातें हो रही थी, उन्हें ठीक तरह से मैं सुन न पाया। वे दोनो तेजी से कदम बढाये जाते दीख पडे।

बिजली की एक चमक मे देखा रुक्मिणी घर लौटना नही चाहती है मगर नागराज उसे मना करके बरबस लिये जा रहा है। एकाध शब्द चलती हवा मे मेरे कानो तक पहुचे मेरा प्राण न रहेगा टूट जाएगा मा का दिल तप्त होगा शुक्रवार सवेरे स्त्रियो का टूट जाएगा ना ना ऐसा मत कहना जो भाग्य मे लिखा है, नही मिलेगा न बस कम से कम उस लडकी को सुखी रखना हृदयपूवक अपना आशीर्वाद दे रही हू ना उस दिन तुमको मालूम होगा कि मेरा अतिम नमस्कार तब सब्र करना गरजते बादल और बरसती वर्षा मे इतना ही मैं सुन पाया।

अगले दिन पौ फटी। वर्षा थम गयी थी मगर आकाश धुधला ही रहा। बादलो का घटाटोप अब तक न खुला था। सात्वना देने वाला कोई न होने से लगातार बिलखती बच्ची-सी हवा सिसक रही थी। मेरा मन भी अशात था। जितना भी अपने आपको सभालने की कोशिश करता रहा, उतनी ही मन की बेकरारी बढती जाती। समझ मे न आया कि आज क्या मेरा मन इतना उदास, इतना बेचैन हो रहा है। दुख क्यो ऐसा उमड उमड कर आता है, इसका कारण टटोलता ही रहा कि मीना की चीख सुनाई पडी—हाय री! यह क्या! कोई साडी तैर रही है! झट हडबडाकर उस दिशा की ओर दृष्टि फिरा दी मैंने। अकेले मैं नही—तालाब म स्नान करती हर महिला की दष्टि उस तरफ घूम गयी और वे फुसफुमाने लग गयी। मेरा दिल धक से रह गया। मा-बाप को रुलाकर रुक्मिणी ने तालाब मे डूबकर अपना प्राण दे दिया है बस मुझे मूर्छा-सी आ गयी।

थोडी देर के बाद ही मैं होश मे आया तब तक तालाब के आसपास भारी भीड लग गयी थी। हर कोई रामस्वामी अय्यर और जानकी को गाली दे रहा था। गाव की सारी शोभा अपने मा-बाप का प्राण मेरी हसी-खुशी सब को एक साथ लुटाके मेरी सोने की बिटिया रुक्मिणी चल बसी। नीचे उसी नवमल्लिका की छाया मे उसे लिटाया था। आह! कितनी बार अपने कमल से कोमल हाथो से उसने नवमल्लिका की कलिया तोडी हैं! उसके मदु चरणा का स्पश न पडा हो, एसी जगह यहा कहा है! तालाब के आस-पास का ऐसा कौनसा वक्ष, कौन-सी लता पौधा है जिसने उसके स्पश का सुख न लिया हो? हाय! मेरा दिल दुवह दुख से कलप उठता है। वे सुदर चरण, कोमल हाथ पाव मदुल शरीर, सब कुछ मुरझा गया है। लेकिन उसके चेहरे का वह गाभीय वह अनूठा सौंदय, मात्र वैसे ही उज्ज्वल है। चेहरे पर अब दुख व व्यथा की वह मलिन छाया तक नहीं, उलटे अतिशय विलक्षण असीम शाति है।

इतने म भीड मे 'नागराज आ रहा है, आ रहा है, की हलचल मच गयी। हा वही है बेतहाशा दौडा आ रहा है लो आ गया वह, नवमल्लिका के

निकट आते ही न भीड का ख्याल किया, न अपने मा-बाप का— रुक्मिणी मेरी प्रिये ! यह क्या कर दिया तुमने ! ऐसा करुण चीत्कार करता हुआ धडाम से गिर गया। भीड में एकदम मौन छा गया। बडी देर तक वह उसी हालत में पडा रहा। रामस्वामी अय्यर ने घबडा कर उसके मुह पर पानी का छींटा मारा और पखा किया। आखिर वह होश में आया लेकिन उसने उनसे एक शब्द भी न कहा। रुक्मिणी के निर्जीव शरीर को देखकर बडबडाया—मेरी प्रिये ! मेरी सारी आशाओ को मिटटी में मिला के तुम भी जूलियट-सी उड गयी री ! ओह ! मुझ अधम के कारण ही तुमने अपना प्राण छोड दिया आह ! श्रीनिवास का कथन ही सच निकला ! मैं ही हत्यारा हू। यदि कल तुमसे सच-सच बता दिया होता तो हमारी यह दुर्गति न होती।

—हाय ! अब मेरे जीवन में क्या रखा है ! रुक्मिणी तुम तो हमेशा के लिए मुझे छोड कर चली गयी अब मुझे सासारिक जीवन क्या लो मैं सन्यास लेता हू ऐसा कहता हुआ किसी के रोकने के पहले उसने धोती और उत्तरीय फाड दिया। उसके मा-बाप भौंचक्के-से खडे थे। उनके कुछ कहने के पहले ही उनके चरणो पर साष्टाग नमस्कार करके कौपीनधारी नागराज तीर सा वहा से निकल गया।

प्यारे बच्चो यही मेरी बिटिया रुक्मिणी की करुण कथा है। नारी के हृदय को ठेस पहुचाने की सूझेगी तो इस कहानी की याद कर लीजिएगा। कहता हू सुनो, मेरे बच्चो ! खेल-तमाशे के लिए भी नारी का दिल न दुखाइए।

एक विवेचन

एस० शिवपाद सुदरम्

कहानी हमारे लिए नयी चीज नही। हजारो हजारो सालो से मौखिक रूप से कहानिया समस्त भारतीय भाषाओ मे प्रचलित रही, फिर भी पाश्चात्य देशा से छापाखान के यत्र भारत मे जब से आये, तब से ही कहानियो को साहित्यिक रूप मिला—वह भी अग्रेजी के ज्ञाता उस भाषा म प्राप्त विभिन्न साहित्यिक रचनाआ का रसास्वादन कर सके। उसी प्रणाली को अपनाकर जब से लिखना शुरू किया गया, तभी नॉवेल और 'शाट स्टोरी' का जन्म हुआ।

तमिल म प्रथम मौलिक कथा कौन-सी है, यह जरा कठिन प्रश्न है। अठारहवा सदी के मध्य काल मे 'वेस्की' नामक एक इतालवी पादरी तमिलनाडु म धम-प्रचार करने आये। उन्होंने तमिल भाषा का अध्ययन किया और इतना पाडित्य अर्जित कर लिया कि स्वय ही कई व्याकरण के ग्रथो और काव्य ग्रथा की भी रचना की। यह तो सचमुच बडे आश्चय की बात है। उनका व्याकरण ग्रथ तमिल भाषा की एक अमूल्य निधि माना जाता है। उन्होंने सरल, सुबोध शैली मे 'परमाथ गुरु की कथा' नाम की एक कहानी लिखी। इस तरह उन्होने कुल सोलह कहानिया लिखी। कुछ लोग इसी कहानी का तमिल की पहली कथा मानते है। ये कहानिया 1922 म पुडुच्चेरी के मुत्तुस्वामी पिल्लै द्वारा छपवायी गयी। यह मानन की बात है कि कथा के रूप मे पहले पहल प्रकाशित कहानिया 'वेस्की' की ही है। तमिल की गद्य शैली का प्रारभ भी यही है, ऐसा कह सकते हैं। मात्र इनको साहित्यक दृष्टि मे नावेल या शाट स्टोरी के रूप म नही ले सकते।

उन्नीसवी सदी के बीच मे अग्रेजी भाषा के शिक्षण केंद्र, स्कूल और मद्रास के विश्व विद्यालय इत्यादि का सस्थापना के उपरात जब अग्रेजी नावेल पाठय ग्रथ मे स्थान पाने लगे, तभी तमिल भाषा मे भी 1879 मे प्रथम मौलिक उपन्यास लिखा गया। इस उपन्यास का नाम था 'प्रताप मुदलियार चरित्रम्।' इसके लेखक उस

जमाने के डिस्ट्रिक्ट मुंसिफ मायूरम वेदनायकम पिल्लै थे।

छापाखाने के प्रचलन के उपरात तमिल म पत्र-पत्रिकाए निकलन लगी तो कहानी, लेख, निबध इत्यादि की माग हुई। 1855 म पेरसिवल पादरी द्वारा सपादित 'दिनवत्तमानी' नामक साप्ताहिक पत्रिका मे वीरसामी चेटियार नामक एक लेखक ने कुछ कहानिया लिखी। 1892 म विवेक चितामणी' के नाम पर प्रकाशित साहित्यिक मासिक पत्रिका मे वि० आर० राजमअय्यर ने अपन सुप्रसिद्ध उपयास 'कमलाम्वाल चरित्रम का धारावाहिक रूप से प्रकाशित किया। लेकिन जहा तक मेरा ख्याल है 1899 के पहल शाट स्टोरी अर्थात कहानी कला की दष्टि से साहित्यिक मायता प्राप्त कहानी लिखी नही गयी। 1899 में ही 'विवेक चितामणी' मे 'लक्ष्मी' शीपक से शिवसाम्बन ने एक कहानी लिखी है। कहानी का कथानक या है—अडमान की कद से भाग आया एक कदी, बीस साल से विछुडी पत्नी से मिलने आता है। वह सीधा अपना परिचय न देकर ज्योतिपी के छदमवेष मे आता है और पत्नी से कहता है कि उसका विछुडा पति बहुत शीघ्र ही उससे मिलने आ जायगा। बाद मे उस दिन के अखबार मे जेल से भाग आए उस कदी का पूरा विवरण पाकर, सब की आख बचाकर एक निजन स्थान पर आत्महत्या कर लेता है। कथानक काफी रोमाचक है। स्वरूप, शिल्प और सयोजना की दष्टि से यह कलात्मक कहानी है ऐसा कह सकते हैं। मगर लगता है कि यह 'हार्डी' का छायानुवाद है। अलावा इस कहानी के लेखक का सही विवरण भी हमे नही मिल रहा है।

इसके उपरात कई कहानिया लिखी गयी। विवेक चितामणी' तथा अय पत्र पत्रिकाओ मे प्रकाशित भी हुई हैं, फिर भी आलोचना की दष्टि से चर्चित सबसे प्रथम मौलिक कहानी 1917 मे ही प्रकाशित हुई। इस कहानी के लेखक थे—व० वे० सु० अय्यर और कहानी का नाम है 'कुलत्तगकर अरसमरम' (तालाब-किनारे का पीपल)। तमिल के प्रथम मौलिक कहानीकार होने का गौरव प्राप्त है श्री वरकनेरी वेंगट सुब्रहमणीय अय्यर—व० वे० सु० अय्यर—को।

व० व० सु० अय्यर को अग्रेजी, फ्रेंच, जमन लटिन आदि कई एक विदेशी भाषाओ पर अच्छा पाडित्य था। वे बहुभाषी थे। प्राचीन ग्रीक साहित्य का गहरा परिचय था। तमिल के महाकवि कबन के बडे रसिक थे। कबरामायण और तिरुकुरल का उहोने अग्रेजी मे अनुवाद किया है। 'मगययक्करसियिन कादल' (मगययरकसि का प्रेम) आदि छह कहानियो को अग्रेजी शाट स्टोरी की स्टाइल मे लिखा। ये कहानिया किसी पत्रिका म प्रकाशनाथ नही लिखी गयी। शाट स्टोरी अथात कहानी का सुचारु साहित्य के रूप म देने के लिए ही लिखी गयी। अग्रेजी कहानी-कथा को ध्यान मे लेकर उसके आदश पर अय्यर ने मौलिक कहानिया लिखी। इन कहानियो का सकलन 1917 मे प्रकाशित हुआ। इसी का

दूसरा सस्करण 1927 मे राजाजी की भूमिका के साथ निकला। इन कहानियो मे विशेषत 'तालाव किनारे का पीपल' अय्यर की मौलिक कहानी है। इसके अलावा कहानी कला की दृष्टि से यह उत्तम रचना है।

इस कहानी का प्रयाग नवीन है। यह एक गाव मे तालाव के किनारे पर खडा पीपल का वृक्ष अपनी भाषा मे कहानी सुनाता है। इस शिल्प मे नवीनता है। गाव म रुक्मिणी नामक एक लडकी है। बडी सुदर, सुशील लडकी है। उसकी शादी छुटपन मे ही गाव के एक युवक नागराज से हो जाती है। लडका भी बडा सुदर, नेक और पढा लिखा है। सास-ससुर भी उससे बडे प्यार का व्यवहार करते हैं। अचानक लडकी के पिता का सारा धन लुट जाता है कि वे दरिद्र हो जाते हैं। समधिन की यह हालत देखते ही नागराज के मा-बाप का दिल बदल जाता है, अपने बेटे नागराज की दूसरी शादी एक धनी के यहा पक्की कर लेते हैं। नागराज का मन दूसरी शादी करने मे नही लगता, फिर भी मा-बाप को मजा चखाने के इरादे से वह सहमत हो जाता है। विवाह के मुहूत के समय माग्लमधारण करने से इकार कर के वह मा-बाप के मुह पर कालिख मलना चाहता था। अपने इस विचार को वह गुप्त रखना चाहता था। इसलिए रात के वक्त तालाव के किनारे रुक्मिणी से भेंट होते वक्त भी इसे प्रकट नही करता। रुक्मिणी बेचारी इसे जान नही पाती। नागराज शादी करने जा रहा है, यह सोचकर वह आत्महत्या कर लेती है। नागराज अपनी मूर्खता पर पछताता है और सन्यास धारण करके गाव से चला जाता है।

इस कहानी की उन दिनो म विशेष प्रशसा हुई और आज भी मेरी राय मे करुण रस प्रधान यह कहानी उत्कृष्ट है। वरपक्ष वालो की दहेज और धन लालसा ने रुक्मिणी-नागराज जैसे सच्चे प्रेमियो के जीवन का कितना दुखद और अभिशप्त कर दिया, इसे समकालीन भावबोध के साथ चित्रित किया है। आज भी इस समस्या का हल कहा हुआ है? इस कहानी पर अय्यर ने अपनी भूमिका मे लिखा है—यह कहानी हमारे गाव के तालाव के किनारे खडे पीपल के वृक्ष ने सुनायी है। पीपल के वृक्ष न नन्तूल आदि व्याकरण ग्रथो का अध्ययन नही किया है। इसलिए उसी की कथित भाषा मे (गवारू भाषा मे) लिखा है मैंने, आशा है पाठक इसम सुसस्कृत साहित्यिक भाषा की आशा नहीं करेंगे।

व० वे० सु० अय्यर की कुछ कहानिया ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर लिखी गयी काल्पनिक कहानिया है। उन्होने स्वय लिखा है 'मगैयरक्करसियिन कादल एक हद तक तमिलनाडु की प्राचीन काल की अद्वितीय वीरता, सस्कृति और सभ्यता पर प्रकाश डालती है। 'अकेनलक्के की कहानी' 1914, 1915 म महायुद्ध के समय की एक सच्ची घटना पर आधारित है। 'कमल विजयम्' इस युद्ध काल की पृष्ठभूमि पर अकित काल्पनिक कथा है। एक जगह पर अय्यर न लिखा है—

कहानिया को कवित्व से पूण और रस भावभेदो से युक्त रहना है।

इस कहानी सकलन के दूसरे सस्करण को 1927 म उनकी भाग्यलक्ष्मी ने प्रकाशित किया है। इसमे अय्यर की दो और कहानिया 'लला मजनू' और 'अनारकली' सम्मिलित हैं। इसकी भूमिका मे राजाजी न लिखा है—आशा है व० वे० सु० अय्यर की देशभक्ति और दुदमनीय साहस, धैय और सत्य प्रेम पर विमुग्ध होकर उनकी प्रशसा करने वाला हर कोई उनके कहानी सग्रह को प्रकाशित करने वाली श्रीमती भाग्यलक्ष्मी अम्याल के प्रति कृतज्ञ होकर उनका उद्देश्य सफल होने म अपना पूरा सहयोग देगा।

व० वे० सु० अय्यर क्रातिकारी थे। भारत की आजादी के लिए लडने वालो मे से एक थे। तमिल साहित्य म नवविकास व नवीनता को लाने का श्रेय इनको है। *तमिल कहानी के ज मदाता व० वे० सु० अय्यर कवि भारती के* निकटम मित्र थे। कवि भारती तमिल कविता म विलक्षण नवीनता ले आये, तो गल्प के क्षेत्र मे व० वे० सु० अय्यर ने नये प्रयोग करके आगे की पीढी का माग-दशन किया। इसमे कोई सदेह नही कि व० वे० सु० अय्यर को तमिल साहित्य के इतिहास मे महत्त्वपूण स्थान प्राप्त है।

□ मलयालम

आद्य कथाकार वेंगयिल कुंजिरामन् नायनार्

नायनार का जन्म सन 1861 में उत्तर केरल के एक सवर्ण परिवार में हुआ था। पिता हरिदासन सोमयाजिप्पाट् और माता कुंजाक्कम अम्मा थी। सन 1892 मे पिता का स्वर्गवास हो गया। इसके एक वर्ष पहले नायनार ने मलयालम की प्रथम कहानी लिखी थी। वह अपने पिता के कनिष्ठ पुत्र थे। संस्कृत का उन्होंने थोडा-सा अध्ययन किया, पर उसमे विद्वत्ता नही हासिल कर सके। अंग्रेजी स्कूल में पढाई पूरी करके वह कालिकट के गवर्नमेंट कॉलेज मे भरती हुए पर एम० ए० पास नहीं कर पाए। फिर मद्रास जा कर उन्होंने प्रेसिडेंसी कॉलेज मे नाम लिखाया। पर बीच मे उसे छोड कृषि विज्ञान का अध्ययन किया। कृषि महाविद्यालय की पढाई उन्होंने सफलतापूर्वक पास की।

एक संस्कृत विद्वान की बेटी कल्याणि अम्मा से नायनार की शादी हो गयी। मलबार जिला परिषद और मद्रास प्रतिनिधि सभा के वह सदस्य चुन गये। 1914 में धारासभा में बोलने के बाद उनकी हृदयगति रुक गयी और वही उनका देहांत होगया। मलबार में कृषि, व्यवसाय आदि क्षेत्रों के विकास के लिए उन्होंने अपने प्रायोगिक ज्ञान का योग दिया।

पत्रकारिता के क्षेत्र में 'केसरी वेंगयिल कुंजिरामन नायनार' का योगदान महत्त्वपूर्ण है। 1892 मे वह विद्या विनोदिनी' के सह संपादक हो गये। मुख्यत उन्होंने व्यंग्य-लेख ही लिखे थे। उन्होंने अपनी रचनाओं के साथ नाम ही नही दिया था। उनके प्रथम लेख का प्रकाशन 1879 मे त्रिवेंद्रम की 'केरल चंद्रिका' में हुआ। तब उनकी उम्र केवल 18 वर्ष थी। कालिकट की 'केरलपत्रिका' के वह लेखक रहे। भ्रष्टाचार के विरुद्ध उनके एक लेख के आधार पर सरकार ने कुछ कर्मचारियों को नौकरी से निकाल दिया। यह उनकी शैली की शक्ति का दृष्टांत

है। अपने ही पूवजा की उन्होने एक निवध मे हसी उडायी। वह 'केसरी', 'वज्र बाहु', 'देशाभिमानी', 'वज्रसूचि' आदि नामा से भी लिखते थे। सन 1911 मे उनके पच्चीस लेखा का प्रथम सकलन निकला। इन्ही लेखा के आधार पर हम आज नायनार के कृतित्व का मूल्याकन करते हैं। उनके व्यक्तित्व और कृतित्व पर एक और पुस्तक भी निकली है।

नायनार मूलत व्यग्यकार थे। कुछ कहानिया भी लिखी, या एक सयोग ही कहिए कि उन्ही की एक कहानी मलयालम की प्रथम कहानी हो गयी। उनकी कुछ दूसरी कहानिया हैं—'द्वारका', 'परमार्थ', 'मद्रास की करतूत' 'फूटा भाग्य'। उनके व्यग्य-लेखो मे 'गाव के गुरुनाथ' और मर जाने का सुख प्रसिद्ध हैं। उनका परिहास पाठका के हृदय को बाध लेता है। उन्हे मलयालम का माक टवेन कहा जाता है। 'उपन्याम' शीर्षक उनका निबध अपनी कोटि की एक विलक्षण रचना है। इसम नायनार का पाडित्य और आलोचना दृष्टि देखते ही बनती है। कुछ लोगो न उन्हें मलयालम का जानोथन स्विफ्ट भी कहा है। इस बात म सदेह नही है कि वह एक उच्च कोटि की प्रतिभा थे।

प्रथम मौलिक कहानी   सन् 1891 मे प्रकाशित

□ वासना-विकृति

राजदड भोगने वाला मे मुझ जैसा बदनसीब और कोई पैदा नही हुआ है। मेरे कहने का मतलब यह नही कि मुझसे ज्यादा दुख किसी ने नही भोगा है या भोगता नही है। पर अपनी बेवकूफी के कारण दड-योग्य बने मुझ जैसे कम ही लोग होंगे। यही मेरा दुख है। भगवान के दिये कष्टो को भोगने मे कोई बेइज्जती नही। ज्यादा होशियार पुलिस-अफसरो द्वारा पकडा जाना भी सहा जा सकता है पर स्वय आपत्ति का जाल बाध कर उसमे फस जाना दुस्सह नही क्या ? तिस पर भी अगर नासमझ बच्चे तक यह जान लें कि मैं निरा गधा हू, तो बेहद दुख की बात है। यही सचमुच बेइज्जती है।

मेरा घर कोचिन राज्य मे एक जगल के पास है। बस, यही मैं कहूगा शायद आप लोगो को भी अनुभव हुआ होगा कि एक ही परिवार की किसी एक शाखा के लोग काले हो, और दूसरी शाखा वाले गोरे। हमारे परिवार मे भी यही बात रही। पर रगभेद शरीर का नही, आभिजात्य का था। हर जमाने मे एक शाखा के लोग सज्जन रहे और दूसरी शाखा के बदमाश। यह भेद कल-परसो की बात नही, बुजुर्गों के समय से चला आ रहा है। इनमे बदमाशो के कुल मे मेरा जन्म हुआ था। इक्कट कुरुप और रामन नायर — इन दो महापुरुषो के बारे मे आप मे से कुछ लोगो ने सुना होगा। इनमे पहले सज्जन मेरे चौथे पिताजी है। चार पीढी पहले के मामा जी भी हैं। उन्ही की याद मे मुझे भी वही नाम दिया गया है। इसलिए पितृवत और मातवत् दोनो ओर से मुझे चोर बनने का सुयोग और वासना मिली थी। मेरी परपरा की महत्ता सभी लोग पूरी तरह जान लें, इसके लिए यह बताना जरूरी हो गया है कि मेरे चौथे पिताजी इक्कट कुरुप के दादाजी इट्टिटनारायणन नपूतिरि थे। अगर इट्टिटनारायणन की कथा किसी मूख न न सुनी

देखते ही मुझे लगा कि मेरी अगूठी वापस मिल गयी है। पर उसे लौटाने मे सिपाही की हिचकिचाहट देख मैंने सोचा कि वह शायद कुछ पुरस्कार चाहता है। मैंने पाच रुपये का नोट हाथ मे लिया भी

क्या आप जानते है कि यह अगूठी मेरे पास कैसे आ गयी ? उसन मुझ से पूछा।

—ओ ! बात बन गयी ! मैंने अनजाने मे ही कहा और स्तभित-सा बैठ गया जब मुझे होश आया तो मेरे हाथो मे हथकडिया पडी हुई थी। मेरी जेब मे डायरी भी निकाल ली गयी थी। वह मेज पर रखी थी। इस बेवकूफी की कमाई—छह महीने के कारावास और बारह कोडे—के बाद अब मैं बाहर आ गया हू। मैं इतना नालायक हू कि आगे भी यह पेशा जारी रखू तो वह मेरे चौथे पिताजी की बेइज्जती होगी। सब लोग कहते हैं कि चोरी बुरी है। मैं अपना पेशा और विरासत बदलूगा। अब तक किये पापो से मुक्ति और आगे उन्हें न दुहराने की बुद्धि के लिए गगा स्नान और विश्वनाथ-दर्शन करूगा। वर्षों पहले दादी मा साय को भजन गाती थी

श्रुति स्मृतिभ्या विहिता व्रतादय
पुनन्ति पाप न लुनन्ति वासनाम्।
अनन्त सेवा तु निकृन्तति द्वयी
इति प्रभो ! त्वत्पुरुषा नभाषिरे।

एक विवेचन

पी० डी० कृष्णन नंपियार

मलयालम ही नही, किसी भी भाषा की प्रथम कहानी को ढूढ निकालना सचमुच कठिन है। 'हिन्दी की प्रथम कहानी' पर 'सारिका' के फरवरी, 1968 के अक मे प्रकाशित देवीप्रसाद वर्मा की टिप्पणी और उस पर पाठको की परस्पर विरुद्ध प्रतिक्रियाए इस बात को रेखाकित करती हैं कि इस विषय मे बहुत सोच-समझकर ही हमे कोई निर्णय लेना चाहिए।

जहा तक मलयालम की प्रथम मौलिक कहानी का सवाल है, इसमे तर्क की गुजाइश कम है, क्योकि हमारे यहा आलोचको का ध्यान इस विषय पर उतना नही गया है, जितना हिन्दी की प्रथम कहानी पर हिन्दी के आलोचको का गया है। फिर भी मलयालम की मासिक पत्रिकाओ के पुराने अक उलट पलट कर देखने से लगता है कि सन् 1891 'विद्या विनोदिनी' मासिक मे प्रकाशित 'वासना विकृति' ही मलयालम की प्रथम कहानी है। इसके साथ लेखक का नाम नही दिया गया है। इसके लेखक हैं वेंगयिल कुंजिरामन नायनार। वह 'केसरी' उप-नाम से लिखते थे। 'विद्या विनोदिनी' के पहले की मलयालम पत्रिकाओ मे कहानिया नही मिलती। 'वासना विकृति' भी कहानी के आधुनिक प्रतिमानो की कसौटी पर शायद ही खरी उतरती है। इस विषय पर हम बाद मे चर्चा करेंगे।

मलयालम का प्रथम उपन्यास 'कुदलता' सन् 1887 मे प्रकाशित हो गया था। इसके चार वर्ष बाद प्रथम कहानी भी निकल गयी—यह आकस्मिक नही। उस समय के अधिकाश लेखक अंग्रेजी शिक्षा से लाभान्वित हो रहे थे और पाश्चात्य लेखको की कृतियो का उन पर प्रभाव पडा है। कौतूहल, मनोरंजन और जिज्ञासा की वृद्धि करना ही तत्कालीन लेखको का आदर्श रहा होगा। उपन्यासकारो मे भले ही सामाजिक चेतना का कुछ कुछ आभास मिलता हो, पर कहानीकारो ने

मनोरंजन के प्रति ही ध्यान दिया है। मलयालम के आरंभिक कथाकारों में कुंजीरामन् नायनार के अतिरिक्त एम० आर० के० सी० (पूरा नाम सी० कुंजीराम मेनन), अपाटि नारायण पोतुवाल, सी० एस० गोपाल पणिक्कर, मुर्कोत्तु कुमारन्, के० सुकुमारन, ओटुविल कुंजिकृष्ण मेनवन, ई० वी० कृष्ण पिल्लै आदि के नाम भी उल्लेखनीय हैं। चोरी, कपट, छल, हत्या, पुलिस की पूछ-ताछ और तकादा आदि ही उनके विषय रहे। कुछ कहानीकारों ने ऐतिहासिक विषयों पर भी कहानियां लिखीं। एम० आर० के० सी० ने मलयालम में ऐतिहासिक कहानियों का सूत्रपात किया था। आरंभिक कहानियों के कुछ नाम देखिए, कथाकारों की मनोवृत्ति और दृष्टिकोण का वे परिचय देते हैं। 'यह नारी स्वभाव है', 'मेरे प्राणनाथ के लिए', "ब्राह्मण का तंत्र', 'थोड़ी-सी गलती हुई', 'द्वारका', 'मगर का शिकार', 'किसी और का बच्चा', मेरी कालीकट यात्रा', अन्यथा चिंतितम कायम दैव अन्यत्र चिंतयेत' 'कमल की शादी'। ये नाम कथानक के स्वभाव का सूचित करते हैं।

अब हम 'वासना विकृति' पर विचार करेंगे। यह आत्मकथात्मक शैली में लिखी गयी है। नायनार् की भाषा-शैली का यह अच्छा उदाहरण भी है। कहानी का सारांश यह है—एक व्यक्ति को चोरी का व्यसन था। यह एक प्रकार से उसे विरासत में मिली संपत्ति था, क्योंकि उसके परिवार की एक शाखा के लोग हर जमाने में चोर थे। जंगल के पास घर होने से उस व्यक्ति को शिकार का अभ्यास और उसके कारण धन भी मिला। उसने कुछ पढ़ा लिखा भी था। पर धीरे धीरे चोरी में ही उसका मन लग गया। एक दिन किसी ब्राह्मण के घर वह चोरी करता है। ब्राह्मण के नालायक पुत्र की सहायता उसे मिली। चोरी के बाद पुलिस से डर कर वह मद्रास चला गया। वहां एक महीने तक स्वच्छंद विचरण किया। फिर अपनी ही बेवकूफी से वह पकड़ा गया। उसे दंड भी मिला। बस, इतनी-सी कहानी है। कहानी वर्णात्मक या ऐतिहासिक ढंग की है। घटना या चरित्र को ज्यादा महत्त्व नहीं दिया गया है। कहानी-कला के तत्त्वों के आधार पर किसी कहानी का मूल्यांकन करने की पिटी पिटायी परंपरा अब मृतप्राय हो चुकी है। फिर भी बहुत पहले की कहानी होने से हम उस पद्धति पर ही इस कहानी की आलोचना कर सकते हैं। कथावस्तु, पात्र और चरित्र चित्रण, कथोपकथन, वातावरण, उद्देश्य और शैली की दृष्टि से विचार करने पर 'वासना-विकृति' को कहानी की संज्ञा दी जा सकती है। कहानी का नायक चोर है। उसका चरित्र पूरी तरह उभर आया है। अपनी मूर्खता की कहानी वह स्वयं कहता है, अतः स्वाभाविकता पर्याप्त मात्रा में मिलती है। उसकी कुशलता और बेवकूफी दोनों को दिखाया गया है। कहीं-कहीं स्केच की धुंधली छाया उस पर पड़ी है, जो कि पठनीयता की वृद्धि ही करती है। पूरी कहानी में वातावरण की

आर लेखक का ध्यान गया है। उसकी शली मे कोई खास खूबी तो नही, पर चलती मुहावरेदार वह है। कहानी का अतिम भाग प्रभावान्विति के विचार से सफल है। नायक को अपनी बेवकूफी पर दुख होता है और पेशा बदलने का वह निश्चय कर लेता है। काशी मे स्नान और विश्वनाथ जी के दशन से वह पाप-मोक्ष की कामना करता है। बचपन मे दादी मा की प्राथना का जो श्लोक उसने सुना था, उसको वह याद करता है। कहानी के आदि और अत के सबध मे एक अमरीकी आलोचक ने कहा है कि कहानी एक घोडे की भाति है जिसकी चाल का आरभ और अत विशेष महत्त्व रखता है। इस कथन के अनुसार 'वासना-विकृति' का आदि और अत प्रभावपूण है ही। इस प्रकार हम यह कह सकते है कि 'केसरी' नायनार् की 'वासना विकृति' मलयालम भाषा की प्रथम मौलिक कहानी है।

□□

मुद्रक ज्ञान प्रिन्टस, दिल्ली 32

5822